ज्ञानवार्ता

पांचवास ंस्करण अंक: 5 वर्ष: 2014

हिन्दी दिवस/सप्ताह 2014 के उपलक्ष्य की गतिविधियाँ

अध्यक्ष की कलम से .....

अध्यक्ष, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति
एवं निदेशक,
सीएसआईआर–भारतीय समवेत औषध संस्थान, जम्मू

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जम्मू की वार्षिक गृह पत्रिका ज्ञानवार्ता के पॉचवें अंक के प्रकाशन पर मुझे अपार प्रसन्नता हो रही है। मेरी ओर से आप सबको हार्दिक शुभकामनाएं!

नराकास जम्मू के सभी केन्द्रीय कार्यालयों/बैकों/उपक्रमों में राजभाषा नीति कार्यान्वयन एवं प्रयोग का कार्य प्रशंसनीय है। हिन्दी आज केवल जनसामान्य की भाषा नहीं है जिस अर्थ में भाषा का आज हम प्रयोग करते हैं उसी अर्थ में हम 'भाषा' और 'मनुष्य' दोनों में किसी एक को हम एक दूसरे से अलग करके नहीं समझ सकते और न ही परिभाषित कर सकते हैं पर सामान्य बोलचाल में भाषा का प्रयोग हम कई अन्य सन्दर्भों में करते हैं। इन सन्दर्भों में भाषा की संकल्पना का विस्तार कर उसे किसी भी सम्प्रेषण व्यवस्था का पर्याय बना देते हैं। अतः यह आवश्यक है कि भाषा को अन्य सम्प्रेषण माध्यमों से अलग करने के लिए हम मानव भाषा के अभिकल्प अभिलक्षणों (डिजाइन फीचर्स) पर विचार करें।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति को वर्ष 2012–2013 के लिए क्षेत्रीय राजभाषा पुरस्कार प्राप्त हुए हैं। समिति के सभी सदस्य कार्यालयों में राजभाषा कार्यान्वयन में निष्ठावान प्रयास के लिए हार्दिक बधाई। हिन्दी को पूर्ण रूप से सशक्त बनाने के लिए हमारे प्रयास केन्द्रित हैं और हमें आपके अपेक्षित सहयोग की अपेक्षा है। राजभाषा हिन्दी के व्यापक कार्यान्वयन तथा प्रचार–प्रसार की दिशा में ज्ञानवार्ता का प्रकाशन एक सराहनीय प्रयास है। ऐसी पत्रिकाएं सार्थक भूमिका निभाती हैं ज्ञानवार्ता निरन्तर प्रकाशन की दिशा में अग्रसर है।

हमारा प्रयास है कि हिन्दी भाषा का कार्यान्वयन, तकनीकी दृष्टिकोण से हो जिसके लिए नगर समिति की वेबसाइट www.tolicjammu.org पर समिति के कार्यान्वयन की उपलब्धियों को देखा जा सकता है और पत्राचार ई–मेल के माध्यम से किया जा रहा है।

ज्ञानवार्ता के प्रस्तुत अंक में लेखकों/रचनाकारों की लेखन कला एवं उनकी साहित्यिक अभिरूचि को उजागर करने के साथ–साथ हिन्दी को सर्वव्यापी व सर्वग्राही बनाने में हिन्दी पत्रिकाएं सशक्त माध्यम होती हैं।

ज्ञानवार्ता के प्रकाशन में डॉ. अमर सिंह, मुख्य संपादक व श्री राजेश कुमार, हिन्दी टंकक ने श्रमपूर्वक अपने दायित्वों का निर्वाहन किया है। संपादक मंडल के सभी सहयोगी बंधुओं/लेखकों/ रचनाकारों को हार्दिक बधाई।

ज्ञानवार्ता के उज्ज्वल भविष्य के लिए मेरी हार्दिक मंगलकामनाएं।

राम विश्वकर्मा

डॉ. राम विश्वकर्मा

संपादकीय....

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जम्मू की वार्षिक राजभाषा गृह पत्रिका 'ज्ञानवार्ता' का पॉचवां अंक आपको समर्पित करते हुए मुझे हार्दिक प्रसन्नता हो रही है। यह अंक एक नए दृष्टिकोण के साथ प्रस्तुत है। पत्रिका का उद्देश्य हिन्दी में लेखन शैली की प्रवृत्ति व तकनीकी शैली को प्रोत्साहन देना तथा अद्यतन उपयोगी बौद्धिक जानकारी को हिन्दी माध्यम से सामान्य जन को सुलभ कराना है। पत्रिका में महत्वपूर्ण लेखों का चयन किया गया है। लेखन कला की भाषा यथासंभव सरल, सुबोध, बोधगम्य बनाने के साथ–साथ सृजनात्मक बनाने के प्रयास किए गये हैं।

इस प्रकार भाषा, भाषा प्रयोक्ता की सोच उसके सामाजिक सम्बन्धों तथा सामाजिक परिवेश को उद्घाटित करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। भारत जैसे बहुभाषिक और बहुसांस्कृतिक राष्ट्र के सन्दर्भ में भाषा का समाज सन्दर्भित अध्ययन और भी सार्थक सिद्ध होता है। राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी भाषा, उसकी अधीनस्थ बोलियां, उसकी साहित्यिक शैलियां तथा उसके प्रयोजनमूलक विकल्पों के समूह हिन्दी भाषा को समाज सन्दर्भित अध्ययन को प्रचुर सामग्री उपलब्ध कराते हैं।

हमें नहीं भूलना चाहिए कि भाषा चुने हुए ध्वनि प्रतीकों का उपयोग करते हुए पारस्परिक संवाद शैली को संभव बनाती है। संवाद में ही भाशा का जीवन निवास करता है ध्वनियां शब्द का निर्माण करती हैं और लिपि चिन्हों की एक व्यवस्था होती है। जो ध्वनियों की जगह लेती है लिपि भाषा को एक माध्यम प्रदान करती है और वाचन व्यवहार को एक विशेष प्रकार की व्यवस्था और अनुशासन में रखने का प्रयास करती है। भाषा का लिखित स्वरूप हमें एक नयी श्रृजनात्मक क्षमता प्रदान करती है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि जिन भाषाओं की लिपि नहीं थी या नहीं है, वे समाप्त हो चुकी हैं या समाप्त होने के कगार पर पहुॅच रही हैं। लिपि के बिना भाषा के विकास का कोई आधार नहीं हैं। चूंकि भाषा में ही हमारी ज्ञान शक्ति का आधार स्थित है। इस तरह भाषा, ज्ञान और लिपि का आपस में गहरा संबंध है। छोटे बच्चों को शुरू में लिपि के माध्यम से भाषा–ज्ञान में प्रवेश कराया जाता है। आज रोमन लिपि का अनेक देशों में प्रचार दिखता है। मूलतः ग्रीक भाषा की लिपि रोमन थी जो यूरोप, अफ्रीका और एशिया के कुछ भाषाओं की लिपि बन गई। ऐसा मुख्यतः अंग्रेजी उपनिवेश वाले देशों में हुआ। हमारे संविधान ने इसे राजभाषा हिन्दी की अधिकारिक लिपि का दर्जा दिया है।

आज देवनागरी की कम्प्यूटर के लिए उपयुक्तता साबित हो रही है। इंटरनेट, लेपटॉप, टैबलेट तथा मोबाइल में इसका प्रयोग बढ़ रहा है। याहू, गुगल और एसएमएस सब हिन्दी में हैं। सूचना, व्यापार और मनोरंजन की दुनिया में इसका प्रवेश हो रहा है। भाषा का लिखित स्वरूप हमें एक नयी श्रृजनात्मक दुनिया का मार्ग खोलती है। इलैक्ट्रॉनिक संचार माध्यमों के विकास के साथ हिन्दी अनेक दृश्टियों से प्रभावी हो रही है।

इस आश्य के साथ कि समिति के कार्य–कलापों में समय–समय पर जो दिशा–निर्देश एवं मार्गदर्शन संस्थान के निदेशक एवं अध्यक्ष, नराकास, जम्मू मान्यवर डॉ. राम विश्वकर्मा जी व सभी सदस्य कार्यालयों से प्रोत्साहन एवं सहयोग प्राप्त हुआ उनके प्रति आभार व्यक्त करता हूॅ। कुल मिलाकर यह श्रम कितना सार्थक हुआ, इसका निश्चय पत्रिका की उपयोगिता करेगी। ज्ञानवार्ता की त्रुटियों के संदर्भ में पाठकों, विद्वानों की सम्मतियॉ पाकर प्रसन्नता होगी। इस रचनात्मक स्पर्धा में विद्वान तथा जागरूक लेखकों ने बड़ी संख्या में हिस्सा लिया और अपनों उत्कृष्ट लेख एवं रचनाएं भेजी। इस अंक के लिए लेखों का चयन, संशोधन व गुणवत्ता युक्त बनाने में मेरी स्वयं की व संपादक मंडल की महत्वपूर्ण भूमिका रही। टंकण कार्य के लिए श्री राजेश कुमार ने मुझे प्रत्यक्ष–परोक्ष रूप से सहयोग प्रदान किया है। मैं उनका हृदय से आभार सहित धन्यवाद करता हूॅ।

(डॉ. अमर सिंह)
वरिष्ठ हिन्दी अधिकारी एवं
सदस्य–सचिव, नराकास, जम्मू

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जम्मू की जून, 2014 छमाही बैठक की गतिविधियाँ।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जम्मू की जून, 2014 छमाही बैठक की गतिविधियाँ।

वर्ष : दिसम्बर, 2014 अंक : पांचवा वार्षिक गृह पत्रिका

संरक्षक

डॉ. राम विश्वकर्मा

निदेशक आइ.आइ.आइ.एम. व

अध्यक्ष, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जम्मू

प्रधान संपादक

डॉ. अमर सिंह

वरिष्ठ हिन्दी अधिकारी एवं सचिव,

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जम्मू

संपादक मंडल

1. श्री अब्दुल रहीम
2. श्री फूल सिंह
3. श्री जगदीश लाल
4. श्री जॉनसन गिल
5. श्री बीरेन्द्र सिंह

सहयोग

श्री राजेश कुमार (कंप्यूटर हिन्दी टंकक)

नोट:

इस पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। नराकास जम्मू व संपादक मंडल का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

संयोजक संपर्कसूत्र : नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जम्मू

सी.एस.आई.आर.-भारतीय समवेत औषध संस्थान

(वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद्)

नहर मार्ग, जम्मू तवी-180 001 (भारत)

दूरभाष : 0191-2589000-10 फैक्स : 0191-2589333

E-mail : amarsingh@iiim.ac.in; website : www.tolicjammu.org

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जम्मू

अनुक्रमणिका

क्र.	नाम	लेखक / लेखिका	पृष्ठ
1	वर्तमान परिवेश में नारी की भूमिका : विविध आयाम	प्रो. डॉ. मिथिलेश दीक्षित, लखनऊ	1
2	साहित्य में आस्थापवादी प्रवृत्ति	डॉ. मिथिलेश दीक्षित	7
3	ब्रज का लोक जीवन और साहित्य	डॉ. अमर सिंह	10
4.	डॉ. मिथिलेश दीक्षित के	डॉ. सरिता लवनियां	17
5	न देख जायेगा सपना कुंवार	रचना तिवारी	25
6.	सीख लो लाइब्रेरी के गुरु	अजीत प्रभाकर	25
7	कविता	पंकज कुमार शर्मा	25
8	ना जाने किसकी मुझे तलाश है?	श्री लाखन सिंह	26
9	कमलेश्वर कृत 'दुसरे' की विनाश नायिका	ममता कुमारी	27
10	वेश्या जीवन और समस्याएं	सोनिया गुप्ता	29
11	युद्ध के संदर्भ में वर्जीनिया वुल्फ और महादेवी....	प्रो अशोक कुमार	32
12	प्रदीपसौरभ कृत मुन्नी मोबाईल में ग्लोबल मुन्नी	सीमा चौहान	36
13	स्त्री धर्म अर्थात उसका दायित्व	पूजा शर्मा	39
14	बेटियां	सुनीता	41
15	ऐसे बन जाओं	सुनीता	41
16	बेटी	प्रिया कंवर	42
17	राम–राज्य साकार कैसे करे?	चेतन स्वरूप शर्मा	43
18	कांटे की गड़न	ममता कुमारी	45
19	'एक बार चितवन तो बदलो'	श्रीकृष्ण 'निर्मल'	45
20	गीत	डॉ. राजेन्द्र यादव	46
21	हमारे नैतिक मूल्यः कल आज और कल	श्रीकृष्ण निर्मल	47
22	मैं धन्य हो गई मित्रो	कु. ऋचा निर्मल	50
23	अकेलापन	भूमिका वाधवा	50
24	दलित विमर्श और हंस की कहानियां	मुकेश कुमारी	51
25	तुम्हारे नाम	डां. जितेन्द्र उधमपुरी	54
26	राजभाषा के रूप में हिन्दी के विकास.....	रामेश्वर दयाल	55

27	उपन्यासों के आइने में आदिवासी	कामिनी देवी	59
28	हिन्दी की अनुमत् काव्यधाराः एक सारस्वत...	डॉ. भारतेन्दु कुमार	62
29.	आज के युग में हिन्दी की महत्ता, स्थिति....	कैलाश चन्द्र	65
30	जम्मू कश्मीर में जल प्रलय के समय.....	अशोक दीक्षित	67
31	सम्राट अकबर शासन काल....	डॉ. सुनीता सक्सेना	69
32	न फेर निगाहें मुझ से तू	तारो देवी	72
33	मेरा गांव	राजकुमार उत्तम	72
34	बीज की व्यथा	राजकुमार उत्तम	73
35	डालर के मुकाबले रूपया कितना गिर गया	दर्शना देवी	73
36	सहमे–सहमे से आज कल रहने लगे है.....	दर्शना देवी	74
37	अरमाँ	मीना धर	74
38	एक संयुक्तिका	बहादुर सिहं निर्दोशी	74
39	स्वतंत्रता के बाद हिन्दी की दशा एवं दिशा	महेन्द्र प्रताप सिंह	75
40	अस्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा (केदारनाथ)	पी.सी. खुल्वे	78
41	पत्रकरिता का भविष्य	रचना तिवारी	81
42	हिन्दी में समानार्थ शब्दों का अर्थगत विश्लेषण	माधवी	82
43	गीतांजलि संस्था, शिकोहाबाद (उ.प्र.).....	ओमप्रकाश 'बेवरिया'	86
44	गीत 'आदमी के लिये	ओमप्रकाश 'बेवरिया'	89
45	फिर एक दिन	विकास शुक्ला	89
46	भोजपुरी क्रिया रूपः एक तुलना	नेहा मौर्या	90
47	खाने की भूख	विकास शुक्ला	94
48	ब्रज लोक कला–सांझी	डॉ. तारा चन्द्र	95
49	विश्व हिन्दी सम्मेलन और उनमें पारित प्रस्ताव	डॉ. राकेश शर्मा	99
50	ब्रज लोक जीवन और साहित्य.....		105
51	नराकास, जम्मू की राजभाषा पत्रिका 'ज्ञानवार्ता'.....		106

वर्तमान परिवेश में नारी की भूमिका : विविध आयाम

आज भारत, पूरे विश्व में ज्ञान, विज्ञान एवं विकास के विविध क्षेत्रों में एक प्रमुख शक्ति के रूप में उभरकर आ रहा है। अनेक क्षेत्रों में महिलाओं की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण मानी जा रही है, भले ही सदियों से भारतीय नारी की संघर्षों में पिसने की मज़बूरी रही हो, घर की चारदीवारी में कैद रहने की मज़बूरी रही हो या सदियों से, रूढ़ियों और कुप्रथाओं के दायरों में बँधे रहने की मज़बूरी रही हो, परन्तु अब उसे सम्मान प्राप्त करने का अधिकार प्राप्त है। अपनी घर–बाहर की भूमिका के प्रति भी वह सचेष्ट होने लगी है। साथ ही, यह भी सच्चाई है कि इन सभी मज़बूरियों की जिम्मेदार भी महिला ही अधिक रही है। नारी–अधिकार, नारी–उत्थान, नारी–उद्धार, नारी–जागृति की बात पुरूषों ने ही अधिक की है। अनेक महापुरूषों के सद्प्रयासों से देश की महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन और सुधार हुआ। उनसे प्रेरणा प्राप्त कर अनेक परिवारों में जागृति आयी और महिलाएँ भी अपने अधिकारों के प्रति सजग होने लगीं। जब से अब तक उन्हें अनेक सुअवसर मिलते गये कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उनकी सहभागिता होने लगी है।

हमारी संस्कृति के समक्ष भी अनेक चुनौतियॉ हैं। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में मूल्यों का ह्रांस हो रहा है। वस्तुवादी सोच और भौतिकवादी प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। घर–परिवार–समाज के अन्तर्सूत्र और संवेदनात्मक रिश्ते टूटते जा रहे हैं। परिवार विखण्डित हो रहे हैं। अभद्र बातचीत, भड़कीले लिबास, भद्दे विज्ञापन, सस्ती लोकप्रियता, मूल्यहीन उथली मानसिकता और उच्छंखलता को बढ़ावा मिल रहा है। मॉडलिंग, सिनेजगत्, टी.वी., फैशन वर्ल्ड आदि में, दौलत और शोहरत के पीछे कतिपय महिलाओं में भागदौड़ मची हुई है। आज का 'लिव इन रिलेशनशिप' कांसेप्ट भारतीय संस्कृति और पारिवारिक मर्यादा पर करारी चोट कर रहा है। ऐसी स्थिति में, साहित्य से, समाज–सुधार से, शिक्षा से और राजनीति से जुड़ी महिलाओं के दायित्व और अधिक बढ़ जाते हैं। उन्हें स्वयं पर और घर पर और घर से लेकर समाज तथा संसद तक पर अपनी दृष्टि रखनी होगी प्रसिद्ध रचनाकार कृष्णा सोबती आशान्वित होकर कहती हैं, '' भारतीय समाज में स्त्री–पुरूष–सम्बन्धों और पारिवारिक चौखटों को लेकर एक गहरी नैतिक हलचल और दूरगामी परिवर्तन और प्रभाव लक्षित हैं। एक तरफ स्त्री–आरक्षण की राजनीतिक चेतना और दूसरी ओर राष्ट्रीय स्तर पर नयी स्त्री की उपस्थिति अपनी ऊर्जा से नये उत्साह का संचार कर रही है।– (हिन्दुस्तानी ज़बान, अक्टूबर–दिस., 2010)

सामाजिक बुराईयों को दूर करने के लिए आज भी महिलाओं को अनेक क्षेत्रों में जागरूक होने की आवश्यकता है। अन्धविश्वास, मिथ्या कर्मकाण्ड, साम्प्रदायिकता आदि को दूर करने के लिए महिलाओं को पहल करनी होगी। स्वस्थ मानसिकता से कोई भी विकास शीघ्रता से होता है। मैंने एक स्थान पर लिखा था, ''जागृति का अर्थ उन्मत्तता और स्वच्छन्दता नही और न पुरूषों के बराबर, उनके जैसा होना

या उनसे आगे जाना है। स्त्री का अपना स्वतन्त्र अस्तित्व भी है और उसमें प्रकृति प्रदत्त अपने विशिष्ट सहजगुण भी हैं। साथ ही, स्त्री और पुरूष दोनों जीवन के दो महत्वपूर्ण पक्ष हैं, जो एक–दूसरे के पूरक हैं, विरोधी नहीं। जीवन के कुछ क्षेत्रों में तो स्त्री के दायित्व पुरूष से भी बढ़कर हैं। पूरे परिवार की व्यवस्था की वह स्वामिनी होती है। राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में भी यह बात समझनी चाहिए कि सामाजिक बुराइयों को अब स्त्रीशक्ति द्वारा पहल करने पर ही आसानी से दूर किया जा सकता है। सही रूप में आधुनिक बनने के लिए फैशन व शारीरिक सज्जा आवश्यक नहीं, विचारों में परिवर्तन आवश्यक है। जहॉ तक स्त्री–पुरूष के समानाधिकार की बात है, उसके लिए कोरे उपदेश नहीं, क्रियान्वयन की आवश्यकता है'' (साहित्य और संस्कृति, पृ. 128–ख)

देश के लिए भारतीय नारी ने बड़े से बड़े बलिदान किये हैं। नारियों के त्याग और बलिदान की एक गौरवशाली परम्परा भी रही है। भारत के स्वाधीनता–आन्दोलन में भारतीय युवतियों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है, परन्तु प्रायः देखा गया है कि नारी–विषयक सामाजिक समस्याओं के प्रति नारी जगत् में अपेक्षाकृत अधिक उदासीनता रही है। नारी–शोषण के विरोध में भी उनका स्वर दबा हुआ रहा है। इसके लिए न केवल पुरूष दोषी है और न केवल स्त्री। अनेक परम्परागत और मनोवैज्ञानिक कारण रहे हैं। शिक्षा का अभाव भी एक प्रमुख कारण रहा है। हमारे देश के महान् चिन्तक स्वामी दयानन्द सरस्वती तथा अन्य महापुरूषों के प्रयासों से स्त्री की समुचित शिक्षा का व्यापक रूप से प्रखर–प्रसार हुआ था। अब तो विभिन्न शैक्षणिक क्षेत्रों में अपने देश की युवतियॉ भारत में ही नहीं, विश्व में अपना स्थान बना रही हैं। राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के साथ–साथ अनेक स्वयंसेवी संस्थाऍ भी नारी–कल्याण, महिला–उत्थान, नारी–शिक्षा और जागृति के लिए कार्य करती रही हैं। महिला–साक्षरता के देशव्यापी विभिन्न कार्यक्रमों को चलाया जा रहा है, परन्तु और अधिक जागृति की आज भी आवश्यता है। एक सच्चाई यह भी है कि नगरीय क्षेत्रों की महिलाऍ ही प्रायः विविध परिदृश्यों में अपनी भूमिका प्रत्यक्षः निभाती आयी हैं। ग्राम्य–क्षेत्रों की महिलाओं में आज भी प्रर्याप्त जागृति नहीं आयी है। उनका पूरा जीवन घर–परिवार के लिए समर्पित हो जाता है, परन्तु उन्हें उनके पूरे अधिकार नहीं मिल पाते हैं। उनकी क्षमताओं का भी सही मूल्यांकन नहीं हो पाता है। उनमें जो सहज प्रतिभा होती है, वह बिखरकर नष्ट हो जाती है। अपने देश में कृषि–व्यवस्था और खाद्य–सुरक्षा में ग्रामीण महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। यह एक बड़ा कार्य है, जिसका भारत की ग्राम्य–महिलाऍ पूरी निष्ठा से निर्वहन कर रही हैं। इसीलिए अपने देश की सरकार द्वारा भी ग्रामीण महिलाओं के सशक्तीकरण हेतु अनेक कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं। स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना, राष्ट्रीय रोज़गार मिशन, जननी सुरक्षा योजना, राजीव गॉधी किशोरी सशक्तीकरण योजना, महात्मा गॉधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी योजना आदि योजनाऍ महत्वपूर्ण हैं। ग्रामीण महिलाओं की भूमिका को देखते हुये संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा 2008 में 'अन्तराष्ट्रीय ग्रामीण महिला दिवस' (15 अक्टूबर) घोषित किया गया था। 1975 में अन्तराष्ट्रीय महिला वर्ष पूरे पूरे विश्व में मनाया गया था। उसके बाद महिलाओं से सम्बन्धित अनेक

संगठन बने, अनेक समितियॉ, अनेक पत्रिकाऍं प्रकाश में आयीं। स्थान–स्थान पर स्त्रीमुक्ति को लेकर समितियॉ–सम्मेलन भी होने लगे। मार्च, 1982 में प्रथम उत्तर प्रदेश महिला सम्मेलन, आगरा में हुआ था, उससे बहुत प्रचार–प्रसार हुआ। नारी की भूमिका और अधिकार के लिए महिलाओं से सम्बन्धित अनेक साहित्यिक संस्थाऍं भी स्थापित होकर सक्रिय होने लगीं। उनमें से एक अ.भा. कवयित्री सम्मेलन संस्था भी है, जिससे देश के सभी प्रान्तों की भारी संख्या में महिला सर्जक जुड़ी हुई हैं। महिला–सुरक्षा की समस्या आज भी एक बड़ी समस्या है, जबकि भारत सरकार की ओर से 'राष्ट्रीय महिला आयोग' की स्थापना की गयी है और राज्य स्तर पर भी उसका क्रियान्वयन हो रहा है। इस आयोग के अतिरिक्त महिला अधिकारों की सुरक्षा हेतु तथा उनकी भूमिका के प्रति जागरूकता हेतु विगत कुछ वर्षों से गैर सरकारी संगठन भी कार्यरत हैं।

नारी के व्यक्तित्व के विकास, उन्नयन, उसकी शिक्षा और जागृति आदि की नींव, वस्तुतः घर से ही प्रारम्भ होती है। पुत्री के रूप में उसका पोषण मुख्य रूप से माता के द्वारा ही होता है। घर में माता की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण होती है। मैं अपना ही कथन उद्‌घृत कर रही हूँ, ''घर एक आदर्शस्थल होता है, जहॉ बच्चों को सीखने के विविध अवसर मिलते हैं। माता पूरे घर की स्वामिनी होती है और बालक के वर्तमान तथा भविष्य की निर्मात्री भी। मनुष्य के चरित्र–निर्माण और व्यक्तित्व–विकास की प्रक्रिया बाल्यावस्था से ही प्रारम्भ हो जाती है। संसार में, महापुरूषों से सम्बन्धित अनेक ऐसे उदाहरण हैं, जिनमें माता की भूमिका सर्वोपरि रही है। अपनी माताओं के द्वारा दी गयी उचित शिक्षा–दीक्षा और संस्कारों के कारण अनेक व्यक्ति संसार के इतिहास में महापुरूष कहलाये और प्रसिद्धि को प्राप्त हुए। माता का जागरूक और शिक्षित होना इसलिए भी आवश्यक है, ताकि वह बच्चों में समुचित नैतिक संस्कार डाल सके। स्वस्थ विकास न होने के कारण बालक का पूरा जीवन प्रभावित होता है और जिस समाज में वह रहता है, उसमें सहयोग करना तो दूर, उसे भी दुर्बल बनाने का वह कारण बन जाता है। ..... उसके सम्पूर्ण विकास की नींव माता के द्वारा ही पड़ती है और घर के वातावरण का बालक के विकास पर प्रभाव पड़ता है। सन्तुलित प्रेम और सन्तुलित अनुशासन से बालक पर बहुत प्रभाव पड़ता है। प्रेमपूर्ण अनुशासित स्वस्थ वातावरण में पलकर बालक बाद में स्वस्थ व्यक्तित्व का स्वामी बनता है।'' (आस्थावाद एवं अन्य निबन्ध, पृ. 132–33)। इस प्रकार शिक्षा एवं व्यक्तित्व विकास की प्रक्रिया घर से विद्यालय तक और विद्यालय से समाज तक होती है। इसमें घर सर्वाधिक महत्वपूर्ण कड़ी है, जिसका दायित्व गृहस्वामिनी या माता का होता है। आज के मशीनी माहौल में ममता का भी मशीनीकरण होने लगा है। इस ओर भी महिलाओं को अपनी भूमिका के प्रति सचेट होना है।

भूमण्डलीकरण के बोध ने महिलाओं की शक्ति को उभारा है, उर्मिला शिरीश का कथन बहुत सटीक है कि 'इधर भूमण्डलीकरण ने सारे परिदृश्य को ही बदल दिया है। भूमण्डलीकरण बाज़ार ने कई चीजों में समानता ला दी है। पूरा विश्व एकीकृत हो गया है। जंक फूड से लेकर डिज़ाइनी कपड़ों, फैशन,

सुई–धागा से लेकर एयर लाइन्स तक में स्त्री दिखाई दे रही है (जनसंचार के माध्यमों में आयी क्रान्ति ने इस बदलाव को दुनिया के कोनों–कोनों में पहुँचा दिया है)। नये वैश्वीकरण ने स्त्री को अलग ढंग से स्वावलम्बी बना दिया है। आत्मविश्वास से भर दिया है। अपनी क्षमताओं, अपने अधिकारों, अपने सौन्दर्य और अपनी बुद्धि से परिचित करवा दिया है।''रचनात्मक दिशा में भूमण्डलीकरण के बोध ने महिलाओं की शक्ति को उभारा है। हिंसा, अन्याय, शोषण, असमानता के खिलाफ महिला रचनाकारों ने अपनी आवाज़ उठायी हैं। महिलाओं की सशक्त भूमिका के लिए और उनको केन्द्रीय धारा में लाने के लिए महिला रचनाकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से महत्वपूर्ण पृष्ठभूमि तैयार कर दी है। मृदुलागर्ग, उषाप्रियंवदा, चित्र मुद्गल, सुधा अरोरा, ममता कालिया, कमल कपूर, मन्नू भण्डारी, मृणाल पाण्डेय आदि–आदि महिला रचनाकारों ने अपनी कहानियों और समीक्षा के माध्यम से नारी–अस्मिता एवं नारी–विमर्श पर प्रकाश डाला है। उपभोक्तावादी अपसंस्कृति में महिलाओं की उच्छृंखलता को बढ़ावा मिला है, तो उनकी असुरक्षा का ख़तरा भी बढ़ा है। वर्तमान भौतिकतावादी परिवेश में सम्बन्धों में टूटन, बिखराव, नैतिक मूल्यों में गिरावट, वृद्धावस्था का एकाकीपन आदि अनेक पक्षों पर महिला रचनाकारों ने अपनी लेखनी चलायी है। उर्मिला शिरीश ने स्पष्ट रूप से सचेश्ट किया है कि स्त्री कथाकारों को जेण्डर से बाहर निकलकर, धर्म, वर्ग, भाषा, प्रांतीयता; जाति तथा नस्ल से बाहर निकलकर आत्ममुग्धता, आत्मप्रशंसा, आत्मानुभवों और पुरूषों की नकल या पुरूषों के समान बनकर आगे बढ़ने की मानसिकता का परित्याग कर प्रकृति–प्रदत्त गुणों, क्षमताओं और अपनी जिम्मेदारियों का पालन करते हुए मानवी रूप में आगे बढ़ना होगा।

साहित्य में नारी–लेखन नारी की अस्मिता और संघर्षों से जुड़ा है, नारी लेखिकाओं के लेखन में व्यक्त संघर्ष केवल पुरूषों के विरूद्ध ही नहीं है, नारी–चेतना को जागृत करने के लिए भी है। महादेवी वर्मा ने नारी–जागृति की बात करते हुए स्पष्ट किया कि विकास–पथ पर अग्रसर होकर नारी पुरूष का साथ देकर उसकी यात्रा को सुगम बनाती रही है। कविता के क्षेत्र में सरोजनी नायडू, महादेवी वर्मा, सुभद्रा कुमारी चौहान, सुमित्रा कुमारी सिन्हा से लेकर अब तक हज़ारों कवयित्रियों ने काव्य की विविध विधाओं में अपनी पहचान बनायी है। 'साहित्य और संस्कृति' के एक आलेख में मैंने संक्षिप्त विवरण दिया था कि पत्रकारिता के क्षेत्र में भी देश की महिलाओं ने अनेक नवीन क्षितिज खोले हैं। अनेक बड़े परस्कारों को प्राप्त करने वाली प्रसिद्ध रचनाकर्त्री महाश्वेता देवी ने पत्रकारिता के क्षेत्र में आदिवासियों की समस्याओं के चित्रण से तहलका मचा दिया था। नलिनी सिंह ने टी.वी. पत्रकारिता में तथा 'साप्ताहिक हिंदुस्तान' की संपादक मृणाल पांडे ने प्रिन्ट मीडिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। अरुंधती राय, जिन्हें 'गॉड ऑफ स्मॉल थिंग्स' पर बुकर पुरस्कार मिला था, ने भी पत्रकारिता को महत्व दिया। उपर्युक्त तीनों महिलाएँ खोजी पत्रकारिता की सशक्त हस्ताक्षर हैं। 'ऋता' त्रैमासिक की महिला संपादक ने पत्रकारिता के क्षेत्र में आस्थावादिता और मानवीय मूल्यों का समावेश किया तथा उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान से दो बार पुरस्कार प्राप्त किया। 'नवभारत टाइम्स' की संवाददाता के रूप में

मणिमाला ने प्रसिद्धि प्राप्त की। साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त तेलुगु पत्रकार मालती चंदर का नाम भी बड़े सम्मान से लिया जाता है।

लोकतान्त्रिक दृष्टि से, हमारे देश में महिलाओं को पुरूषों के समान ही अधिकार मिले हैं, परन्तु राजनीतिक क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी अपेक्षाकृत बहुत कम है। इसमें भी सन्देह नहीं कि राजनीति में बढ़ती हुई अभिरूचि और उनका पदार्पण देश के सामाजिक उत्थान का एक बड़ा और सकारात्मक संकेत है। प्रायः महिलाओं का परिवेश ऐसा नहीं होता है, जिसमें देश की राजनीति पर विशेष चर्चा होती हो, राजनीति के सैद्धान्तिक पक्षों पर चिन्तन होता हो या देश की समस्याओं के लिए राजनीति द्वारा निराकरण के विषय में निर्धारित होते हो। अपने देश में, राजनीतिक क्षेत्र में उभरकर आने वाली कतिपय महिलाएँ अपने बलबूते पर विकास के पथ पर अग्रसर होकर सक्रिय रही हैं। अधिकांश ने किसी न किसी पुरूष का मार्ग–दर्शन भी प्राप्त किया है। भारत की राजनीति में प्रथम महिला प्रधानमन्त्री रहीं श्रीमती इन्दिरा गांधी ने भारतीय राजनीति को एक नयी दिशा दी थी। यह श्रृंखला आगे ही बढ़ती रही है देश के राजनीतिक क्षितिज पर अनेक नाम उभरते गये।

राजनीति में जुड़ने पर महिलाओं को घर की चौखट के बाहर, जनता से जुड़ने के लिए, इस संकल्प के साथ जाना होता है, ताकि वे देश, समाज और अपने क्षेत्र के जन–जन के जीवन और उनकी समस्याओं को समझ सकें और उनके निराकरण के प्रयास कर सकें। किसी समस्या या संघर्ष के लिए अब हुंकार, ललकार, आक्रोश की अपेक्षा सहयोगी भावना से, सूझबूझ के साथ सही निर्णय लेने की आवश्यकता है। संघर्ष किसी भी प्रकार का हो, नुकसान सबसे अधिक नारी का ही होता है, क्योंकि वह माता, बहन, पत्नी और मित्र के रूप में पुरूष से, पूरे समाज से, अनेक प्रकार से जुड़ी होती है। यदि कोई क्षति होती है, तो पूरा परिवार और समाज प्रभावित होता ही है, आगे आने वाली पीढी का भविष्य भी प्रभावित हो जाता है।

इसीलिए महिलाओं का, उदार मानसिकता और विवेकशीलता के साथ राजनीति में आना आवश्यक है, परन्तु राजनीति की जानकारी, पूरे परिवेश की जानकारी प्राप्त करना उससे भी अधिक आवश्यक है। यह उनका कर्तव्य है। साथ ही निर्णय लेने की क्षमता प्राप्त करना उनका अधिकार भी है और कर्तव्य भी। पुरूषों का सहयोग, बाहरी क्षेत्रों से सम्पर्क और उनकी कार्यक्षमता को मज़बूत बनाता है, परन्तु यदि उनमें निर्णय लेने की समझ और क्षमता है, उनकी खुली और विस्तृत सोच है, तो पुरूष उनके लिए बैसाखी न बनकर, सच्चे सहयोगी बन सकते हैं। किसी राजनीतिक महिला का समाज से सीधा और बहुत समीप का नाता होता है। वह जनता की प्रतिनिधि बनकर समाज के पटल पर आती है, अतः जनता की विभिन्न समस्याओं का निराकरण करना–कराना उसका दायित्व बन जाता है। यह भी दायित्व बन जाता है कि वह जनता के दुःख–कष्टों की तटस्थ दर्शक न होकर सच्ची साथी और सहयोगी बने। राजनीति मनुष्य के लिए, मनुष्यता के लिए, मनुष्य के नैतिक आचरण के संवर्धन के लिए

है, अतः एक राजनीतिक महिला को सर्वप्रथम अपने व्यक्तित्व को प्रभावी बनाना होगा और अपनी छवि को जनता के बीच इस प्रकार प्रस्तुत करना होगा कि जनता उसे अपना हितैशी और सहयोगी समझे। साथ ही, ऐसे अनेक निर्णयात्मक पहलू हैं, जिन्हें वह धर्म–निरपेक्ष, जाति–निरपेक्ष होकर, मानवीय मूल्यों की पक्षधर होकर, लोकतान्त्रिक दृष्टि से सुलझाने में समर्थ हो सकती है। उसे अपनी दृष्टि विस्तृत कर, दिशा सुनिश्चित कर लेनी चाहिए। तभी वह राजनीतिक के साथ–साथ राजनीतिज्ञ भी बन सकती है। अभी भले ही आरक्षण उसका कवच हो, एक दिन आवश्य आयेगा, जब पंचायत स्तर पर या अन्य क्षेत्रों में उसे किसी आरक्षण की दरकार नहीं होगी और वह अपने कर्त्तव्यों तथा अधिकारों के प्रति और अधिक जागरूक बन जायेगी।

इसके अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों, जैसे क्रीड़ा और कार्पोरेट के क्षेत्र में महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। क्रीड़ा–जगत् में कीर्तिमान स्थापित करने वाली भारत की प्रमुख महिलओं में अनेक नाम उल्लेखनीय हैं। बैडमिंटन खिलाड़ी सायना नेहवाल सुपरसीरीज़ का खिताब जीतने वाली देश की प्रथम महिला हैं। कामनवैल्थ चैम्पियन में स्वर्णपदक जीतने वाली प्रथम वेट लिफ्टर कुंजारानी तथा ओलम्पिक में प्रथम सुपरधाविका पी.टी. उषा का नाम उल्लेखनीय है। टेनिस में सानिया मिर्ज़ा को प्रसिद्धि मिली। झूलन गोस्वामी महत्वपूर्ण क्रिकेट खिलाड़ी हैं। तैराकी में बुला चौधरी ने नाम कमाया, तीरंदाजी में डोला बनर्जी ने, पर्वतारोहण में बछेन्द्रीपाल और सन्तोष यादव ने प्रसिद्धि पायी।

कॉर्पोरेट की दुनिया में भी भारत की महिलाएँ अग्रणी भूमिका निभा रही हैं। एचएसबीसी इंडिया की कण्ट्रीहैड नैना लाल किदवई तथा ब्रिटानिया इंडस्ट्रीज़ की एम.डी. विनिता बाली ने प्रसिद्धि प्राप्त की है। चन्दा कोचर ने आईसीआईसीआई बैंक की मुख्य कार्यक्रम अधिकारी और प्रबन्ध–निदेशक के रूप में अपनी भूमिका का सफलतापूर्वक निर्वहन किया है और वे इस बैंक की प्रथम महिला हैड हैं। प्रशासनिक सेवाओं में सुषमानाथ आई.ए.एस. (फाइनेंस सेक्रेटरी), सुधा पिल्लई आई.ए.एस. (सदस्य–सेक्रेटरी–योजना आयोग) आदि महत्वपूर्ण महिलाओं ने देश का मस्तक ऊँचा किया है।

अन्त में, अपनी बात मैं अपने ही लेख की पंक्तियों से कर रही हूँ–स्त्री–स्वातंत्र्य या स्त्री–जागरण का यह अर्थ भी है कि उसे अन्याय, अत्याचार, अनैतिकता और शोषण का विरोध करना है। उचित, नैतिक, न्यायोचित विषय के लिए और श्रेयस्कर बातों के प्रति सहयोग और इनके विपरीत बातों के प्रति असहयोग भी करना है। इस प्रकार अपने देश में महिलाओं की स्थिति, भूमिका और अधिकारों के लिए हम सबको मिला–जुला और सार्थक प्रयास करना होगा, जिससे देश में एक वैचारिक क्रांति आये और महिलाओं की सर्वांगीण उन्नति हो।

(डॉ. मिथिलेश दीक्षित)
जी–91सी, संजय गॉधी पुरम्, लखनऊ

साहित्य में आस्थावादी प्रवृत्ति

'आस्था' एक ऐसा आध्यात्मिक भाव है, जो मनुष्य के लिए प्रत्येक स्थिति में अत्यन्तावश्यक और मननीय है। यह पूर्णरूप से 'स्थिति' का द्योतक है और सत्य का पर्याय है। यह ऐसा नैतिक प्रत्यय है, जो सृष्टि के साथ एकत्व और समन्वय की प्रेरणा देता है, सृष्टि की अखण्डता का बोध कराता है और मानव के पूर्णत्व का प्रतिपादन करता है। भारतीय संस्कृति पूर्णत्व का बोध कराने वाली संस्कृति है, जो स्थूल से सूक्ष्म तक पहुँचने का मार्ग प्रशस्त करती है। आस्था इस संस्कृति का मूल तत्व है।

आस्था मानव की सहज प्रवृत्ति है। इसका सम्बन्ध नैतिकता से है। परिवर्तन अन्दर से होता है। यह आस्थापरक भावबोध से ही सम्भव है। भाव या विचार से ही कर्म की प्रेरणा मिलती है। कर्म का सम्बन्ध धर्म से है और धर्म का सम्बन्ध सृष्टि से, केवल एक जाति, क्षेत्र, प्रान्त या देश से ही केवल नहीं। आस्था मानव की मूल प्रकृति है और अनास्था निषेधात्मक प्रतिक्रिया। यह प्रतिक्रिया भावनात्मक और क्रियात्मक, आन्तरिक और बाह्य–सभी प्रकार के प्रदूषण का कारण है। मानवता का पोषण आस्था के बल पर सम्भव है, अनास्था के द्वारा नहीं। आस्थाबोध से मानव की अन्तश्चेतना में गुणात्मक परिवर्तन होता है, जिससे हृदय में उदारता, श्रद्धा, करूणा, प्रेम आदि भाव उत्पन्न होते हैं तथा मन, मस्तिष्क, बुद्धि में एकाग्रता, शक्ति और प्रफुल्लता आती है।

आस्था के कारण ही मानव, मानव है, अन्यथा अन्य प्राणियों और उसमें अधिक अन्तर नहीं है। आस्था का सम्बन्ध केवल चरित्र से नहीं, आचरण और व्यवहार से भी है। आस्था ही समग्र प्रगति का कारण है। यह प्रगति चाहे भौतिक क्षेत्र में विज्ञान आदि के द्वारा हो, अथवा आध्यात्मिक क्षेत्र में ज्ञान और अनुभूति के द्वारा अथवा कला, धर्म, दर्शन आदि के द्वारा हो। आस्था से ही सब कुछ सम्भव है, स्वयं की स्थिति भी, अन्य का अस्तित्व भी, यहां तक कि उस महाशक्ति का अस्तित्व भी, जिससे इस सम्पूर्ण सृष्टि की स्थिति है। इस प्रकार आस्था कोई नया भाव नहीं है, परन्तु 'आस्थावाद' शब्द अवश्य नवीन है, जो केवल मनोरंजन के लिए या चौंकाने के लिए प्रयुक्त नहीं हो रहा है, अपितु चिरन्तन सत्य का उद्‌बोधन करने वाला और अपने राष्ट्र के साथ–साथ पूरे विश्व को नयी दिशा, नयी सोच, नया मार्ग, नया प्रकाश प्रदान करने वाला एक उपयोगी माध्यम है। 'आस्थावाद' एक सर्वतोमुखी सकारात्मक आन्दोलन है, जो सत्याग्रह की ही भाँति राष्ट्र के लिए नैतिक उपलब्धियों का वरदान प्राप्त कराने के लिए है।

आस्थामूलक प्रवृत्तियों के उन्नयन हेतु आस्थावादी आन्दोलन का सूत्रपात् हुआ, जिसका घोषणापत्र 'ऋता' (1996) में प्रकाशित हुआ था, जिसका विवरण 'आस्थावाद एवं अन्य निबन्ध' में विस्तार से दिया गया है।1 कतिपय बिन्दु इस प्रकार है, ''..... किसी भी वाद या आन्दोलन की सार्थकता उसी स्थिति में होती है, जबकि वह अपनी भूमि और अपने वातावरण की पृष्ठभूमि पर आधारित हो। विदेशों से आयातित वे वाद या आन्दोलन जो कि हमारी मूल प्रकृति, परम्परा एवं अपेक्षाओं के प्रतिकूल होते हैं, अपने लक्ष्य की पूर्ति में सफल सिद्ध नहीं होते।..... आस्थावाद जीवन के प्रति आशावाद के पोषक मूल्यों की स्थापना पर बल देता है। ..... पतनोन्मुखी प्रवृत्तियों के प्रभाव से ही आज साहित्य में लघुता, लघुमानवता और आत्मलघुता का प्रतिपादन चेष्टा–पूर्वक किया जा रहा है, जोकि मानवता की प्रगति में बाधक सिद्ध हो रहा है। आस्थावाद इसे जीवन और समाज एवं साहित्य के लिए अवांछनीय मानता है। ..... आस्थावाद सशक्त एवं प्राणवान् साहित्य के पोषण का समर्थक है। ..... जब कोई रचना वैचारिक औदात्य, संवेदनात्मक गहराई एवं कल्पना की सजीवता से

समन्वित होती है, तो उसमें सहज ही ऐसी शक्ति का संचार हो जाता है, जो कि सामाजिक के मन पर स्थायी एवं गम्भीर प्रभाव छोड़ने में समर्थ होती है। ..... साहित्य की शक्ति का अनुमापन उसकी प्रक्रियाओं के आधार पर किया जा सकता है। सशक्त साहित्य के आस्वादन से क्रमशः संवेदन, सम्प्रेषण, द्रवण एवं अभिव्यक्ति की प्रक्रियाएँ सम्पन्न होती हैं, जबकि अशक्त साहित्य का प्रभाव क्षणिक होता है। जिसकी उपर्युक्त प्रक्रियाओं में से कुछ ही सम्पन्न हो पाती हैं। ..... आस्थावाद साहित्य को किसी एक विषय, एक वर्ग, एक स्थिति या किसी एक प्रवृत्ति तक की सीमित कर देना अनुचित मानता है। साहित्यकार अपनी रूचि, अनुभूति एवं प्रकृति के अनुसार सृष्टि का कोई भी विषय चयन करने के लिए स्वतन्त्र है।''

इस प्रकार आस्थावाद के अनुसार शक्तिशाली साहित्य का बोध सार्वजनिक होता है, किसी एक व्यक्ति, वर्ग, समाज, समुदाय, प्रवृत्ति में सीमित नहीं। आस्थावाद साहित्य में श्रेष्ठ, मूल्यपरक, उदार, उदात्त और व्यापक आयामों का पक्षधर है।

जब किसी सद्भाव, सद्विचार की पूरे परिवेश के लिए अत्यन्त आवश्यकता होती है, तो उसकी व्यापक व्यवस्था के लिए, दृढ़ता के साथ, ठोस कदम उठाते हुए, प्रचार–प्रसार की भी आवश्यकता होती है। अनास्था का दानव आज सर्वत्र मुँह फैलाये हुए है। इसके विरोध में भी समग्र शक्तियों के साथ हमारा सकारात्मक प्रयास होना चाहिए। यह इस जागृति से सम्भव है। 'आस्था' शब्द के आगे 'वाद' लगाना कुछ लोगों को भले ही अटपटा लगे, परन्तु यह शुभ संकेत है आज की अपसंस्कृति के परिवेश में कुछ अच्छा और भला होने और कर दिखाने के लिए। आस्थावादी वैचारिक उन्मेश ही वर्तमान परिवेश में सबसे सशक्त हथियार हो सकता है और आस्थापरक लेख नही भावात्मक और अहिंसक क्रान्ति का शंखनाद बन सकता है।

वर्तमान समय में, अतिभौतिकवादी सोच, यान्त्रिकता का बढ़ता प्रभाव, पाश्चात्य सभ्यता का अन्धानुकरण, सभी प्रकार के मानवीय मूल्यों का विघटन, साहित्य, शिक्षा आदि का व्यावसायीकरण आदि तथ्य आस्थावान् रचनाकार को व्यथित कर रहे हैं। मनुष्य अनास्थापरक मानसिकता से ग्रस्त हो रहा है। आस्थावाद जैसे शान्तिप्रद आन्दोलन की अब अधिक आवश्यकता है। भोगवादी, अवसरवादी वर्तमान व्यवस्था के प्रति यह एक चुनौती भी होगी। आस्थावादी विचारधारा वर्तमान समय के विभिन्न राष्ट्रीय और अन्तराष्ट्रीय संकटों को देखते हुए भी महत्त्वपूर्ण विचारधारा मानी जा सकती है।

आस्था के बिना अस्तित्व नहीं। अनास्था के कारण अस्तित्व खण्डित हो रहे हैं, व्यक्तित्व खण्डित हो रहे हैं, स्वस्थ मान्यताएँ खण्डित हो रही हैं। सम्पूर्ण राष्ट्र में ऐसा बवण्डर उठ रहा है कि समाज, साहित्य और राजनीति के बड़े–बड़े कर्णधार भी डगमगा रहे हैं। क्षणिक प्राप्ति के लिए समय और शक्ति लगा देते हैं दाँव पर लोग। जिधर बहुमत, उधर विश्वास। उचित–अनुचित के बोध का सर्वथा अभाव। जिसकी लाठी, उसकी भैंस, वाली कहावत चरितार्थ हो रही है। सरलता और सुगमता का मार्ग तलाशते हैं लोग। आस्था का मार्ग निर्भयता, साहस, दृंढ़ता और निष्ठा का है, अतः संघर्ष और कठिनाइयों का भी है। सामान्य जन में धैर्य की कमी होती जा रही है। राजनीति में भ्रष्टाचार, अनास्था के कारण ही पनप रहा है। धर्म के क्षेत्र में कुरीतियाँ और ढोंग फैले हुए हैं। समाज से क्षेत्रीयता और जातीयता का ज़हर उतर नहीं रहा। शिक्षा के क्षेत्र में टयूशनखोरी, ठगी, दायित्वहीनता, रिश्वतखोरी जैसे अभिशाप बढ़ते जा रहे हैं। गरीब उपेक्षा का शिकार है, अमीर अहंकार का। हानि दोनों की है। एक संत्रस्त होकर कुण्ठाग्रस्त होता है, तो दूसरा दर्प के कारण दयनीय और आसामान्य। फलतः समाज में असमानता, उच्छृंखलता तथा अन्याय की जड़े पनपने और मज़बूत होने लगती हैं।

आस्थावाद में गुटबाजी और खेमेबाजी की गुंजाइश नहीं। जितने भी मानवीय मूल्य हैं, सभी का समावेश साहित्य में होना चाहिए। सच्चा साहित्यकार समाज का मार्गदर्शन भी होता है कि साहित्य समाज का प्रतिबिम्ब, प्रतिरूप या दर्पण ही नहीं, उसके निर्माण की निरन्तर कोशिश भी है। समाज के मानवीय मूल्य साहित्य के मूल विषय होते हैं। साहित्य वह कसौटी है, जिसके द्वारा समाज के परिवर्तन के यथार्थ को आँका जा सकता है। बँधी–बँधाई शास्त्रीय परम्परा की प्रासंगिकता वहीं तक माननी चाहिए, जहाँ तक मानवीय मूल्यों में किसी प्रकार का व्याघात न आये और समाज की बदलती धारा में विच्छिन्नता न आये। आस्थावाद साहित्य की किसी बँधी–बँधाई परिपाटी का नाम नहीं है। तुलसी, कबीर से लेकर प्रसाद, दिनकर, भवानी प्रसाद मिश्र, हजारी प्रसाद द्विवेदी आदि के द्वारा विभिन्न स्रोतों से प्रवाहित होती आ रही भावधारा की ही आगे की सुखद यात्रा है, यह जिसमें सत्साहित्य के लिए प्रेरणा, सन्देश और सम्भावनाएँ हैं।

आज के अधिकांश युवा साहित्यकार, अपूर्ण जानकारी के साथ न भाषा–अभिव्यक्ति में सफलता प्राप्त कर रहे हैं और न सुलझे हुए विचारों की सटीक प्रस्तुति में ही। अनास्था भी इसका कारण है। कभी कहा जाता था कि 'बिन गुरू होय न ज्ञान'। आज 'गुरू' शब्द निरर्थक और अप्रासंगिक हो गया है। सस्ते प्रचार–प्रसार के लिए कलाधर्मी या तो राजनीति के मुखापेक्षी होते हैं अथवा इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की ओर लालायित रहते हैं। साहित्यकार पर समाज का बहुत बड़ा दायित्व होता है। वह भविश्य के समाज की संघटना का भी ज़िम्मेदार सर्जक होता है। एक आस्थावान् रचनाकार ही सजग होकर अपने दायित्वों की पूर्ति सहजता से कर सकता है। लेखन कोई व्यापार नहीं होता। यह चमत्कार का और अपने मनोरंजन का साधन भी नहीं होता। वस्तुतः लेखन एक दिव्य कर्म है।

हिन्दी साहित्य भारतीय संस्कृति का श्रेष्ठ और सफल संवाहक बने और विश्व को मानवीय नैतिक मूल्यों के लिए प्रेरित कर सके, उसके लिए आवश्यक है कि इस आस्थावादी अभियान की सफलता के लिए गम्भीरता और निष्ठा के साथ प्रयास हो। सत्साहित्य के इस अभियान में अनेक आस्थावान् रचनाकार प्रकाश में आयेंगे। स्वार्थ और अवसरवादिता की दौड़ में ऐसे रचनाकार पीछे रह जाते हैं। प्रचार–प्रसार के दाँवपेच नहीं जानने वाले ईमानदार रचनाकार उपेक्षित हो रहे हैं। उनके सृजन का समाज और वर्ततमान युवापीढ़ी को लाभ हो सके, आस्थावादी विचारधारा का यह एक महत्वपूर्ण प्रयास होगा। 'आस्थावाद' में सर्जक से अधिक सृजन के सकारात्मक स्वरूप और स्तर पर ध्यान दिया जायेगा। आज अनेक प्रकाशक और सम्पादक अपने गुट के लोगों को छापते हैं अथवा साहित्य–जगत् में प्रतिष्ठित रचनाकारों की कृतियों को प्रकाशित करते हैं। रचनाकार का मूल्यांकन रचना से होना चाहिए। यदि ऐसा होने लगे तो अनेक श्रेष्ठ आस्थावान् नये रचनाकर भी प्रकाश में आयेंगे और उनकी उपलब्धियों से समाज भी लाभान्वित होगा। 'आस्थावाद' का यह भी एक प्रयोजन है। यह किसी प्रवृत्ति–विशेष के रूप में, किसी को संकुचित दायरे में बाँधने के लिए नहीं, वरन् संकुचित मानसिकता और नज़रिए को खोलने के लिए एक माध्यम मात्र है।

डॉ. मिथिलेश दीक्षित
संजय गॉधी पुरम्, लखनऊ

ब्रज का लोक जीवन और साहित्य

लोक सर्वत्र व्याप्त है साहित्य – जिसमें सभी का हित हो सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् । आलोक का अर्थ प्रकाश, लोक टूटा सब मानस टूटा, मैथिलीशरण गुप्त ने कहा है –

''अन्धकार है, वहां जहां आदित्य नहीं है
मूर्दा वह देश जहॉ साहित्य नहीं है'' ।

किसी भी राष्ट्र की संस्कृति वहां के लोक–जीवन या जन–जीवन की अभिव्यक्ति होती है। किसी देश की संस्कृति महज उसकी राजधानी में होने वाले आचारों–विचारों या क्रियाकलापों तक ही सीमित नहीं होती है, अपितु उस राष्ट्र की राजधानी से सुदूर बसे प्रदेशों या अंचलों में भी क्रियान्वित होती है, जिसे लोक–संस्कृति कहते हैं। ''प्रत्येक समाज की उत्कृष्ट संस्कृति की आधारशिला वहॉ का लोक–समाज ही होता है। इसी लोक–समाज की संस्कृति लोक–संस्कृति कही जाती है।''

लोक–संस्कृति, लोक–जीवन, जन–जीवन प्रायः पर्यायवाची शब्द हैं। कॉम्पेक्ट हिन्दी शब्दकोश में 'जन' शब्द के अर्थ इस प्रकार हैं–''लोक, लोग, समुदाय, प्रजा, अनुयायी, गॅवार, दास, अनुचर, ऊपर के सात लोकों में से पॉचवॉ।''

'लोक' शब्द को लेकर विद्वानों में मतैक्य नहीं हैं। भारतीय और पाश्चात्य विद्वानों द्वारा दिए गए लोक' शब्द के अर्थ में भिन्नताऍ हैं। 'लोक' शब्द की चर्चा मुख्यतः लोक–साहित्य के संबंध में आती है। भारतीय 'लोक' शब्द के लिए एंग्लो सेक्शन भाषाओं में 'फॉक' शब्द प्रचलित है, जिसक अर्थ है 'असंस्कृत लोक'। भारतीय मतानुसार ''लोक हमारे जीवन का महासमुद्र है, उसमें भूत, वर्तमान सभी कुछ संचित रहता है।'' यदि सरल शब्दों में कहें तो अभिजात्य प्रभावों से रहित आदिम अवस्था और परंपरा के प्रवाह में रहने वाला जनसमूह लोक है, जिसमें अपना विश्वास, पृथक परंपराऍ, निजी वेश–भूषा, संस्कृति तथा जीवन–पद्धति है। जहां हम रहते हैं वहां के पर्यावरण में वहां की सदियों पूर्व परम्पराएं, भाषा, बोली, क्षेत्रीय बोली (Regional Dialect & Induvidual Dialect), दोनों वहां के क्षेत्रीय भाषाओं में मुखर होती हैं। इसी में गीत–संगीत, शादी–विवाह, जैसे ब्रज में ब्रज की लोक कलाएं, पहाड़ी भाषाएं, डोगरी, हिमाचल, जम्मू व कश्मीर, राजस्थान, बुन्देल खंड, भोजपुरी, दक्षिण भारत में अपनी–अपनी मात्र भाषाओं में गाने–बजाने, अभिनय देखे जा सकते हैं। चूंकि कृष्ण और राधा को आलम्बन के रूप में विभिन्न प्रकार के कलाएं, स्वाभावित रूप से मुखर होते हैं। इसी को ब्रज का लोक जीवन कहा जा सकता है। जैसे ब्रज के गीत उदाहरण है :

सावन गीत : हरि रामा रे हॉ, हॉ, रे सावलियॉ ।

फाग : नवल नार मतवारी, मोहन बनाये मनिहारी ।

गारी : ब्रंदावन की सुगर ग्वालिन, सिर मटकी मुख पान मोरे लाला ।

लोक–संस्कृति शब्द 'लोक' तथा 'संस्कृति' दो शब्दों के मेल से बना है। यह अंग्रेजी के 'फॉकलोर' का पर्यायवाची है। फॉकलोर का अर्थ है–'सीखा गया ज्ञान'। इसी आधार पर लोक–संकृति को लोगों का परंपरा से सीखा गया ज्ञान कहा जा सकता है। डॉ.सत्येन्द्र के अनुसार ''लोक–संस्कृति जन साधारण की वह संस्कृति है जो अपनी प्रेरणा लोक से प्राप्त करती थी, जिसकी उत्स–भूमि जनता थी और जो बौद्धिक विकास के निम्न धरातल पर अवस्थित थी।'' मुख्यतः लोक–संस्कृति में भी प्रायः वही उपादान निहित रहते हैं, जो संस्कृति में होते हैं। लेकिन लोक–संस्कृति के उपादान मूल संस्कृति से अपनी जातिगत, वर्गगत, स्थानीय या ऑचलिक विशिष्टताओं के कारण भिन्न होते हैं। लोक–संस्कृति के अंतर्गत लोक–विश्वास, आचरण, संस्कार–धर्म रीति–रिवाज,

शकुन–अपशकुन, जादू–टोने, रोग, भविष्यवाणियॉ, व्यक्ति व्यवसाय, उद्योगधंधे, तिथियॉ, व्रत–त्योहार, खेल–कूद, मनोरंजन, कहानियॉ, कहावतें, गीत आदि आते हैं। लोक–जीवन की विभन्न प्रक्रियाएँ चाहे वह धार्मिक, सांस्कृतिक, नैतिक या लोक–विश्वास संबंधी हों, लोक–संस्कृति के अंतर्गत आती हैं।

निष्कर्षतः यह कह सकते हैं कि संस्कृति लोक–जीवन के आंतरिक और बाह्य जीवन की अभिव्यक्ति हैं लोक के मूल में कुछ धार्मिक, नैतिक व आध्यात्मिक स्तर, धार्मिक व सामाजिक नियम तथा कार्यकलाप होते है, जिन्हें सामाजिक मान्यता प्राप्त होती है। यह पीढ़ी दर पीढ़ी विरासत के रूप में सार्वभौमिक होते रहते हैं। लोक–जीवन के यही क्रियाकलाप लोक–संस्कृति कहलाते हैं।

डॉ. कविता त्यागी के अनुसार ''लोक का एक विशाल जीवन–दर्शन होता है, जो उसके आचार–विचार और दैनिक क्रियाकलाप में मुखरित रहता है। लोक का आचरण सीधा–सच्चा व धर्मोन्मुख होता है। वह पाप–पुण्य के प्रति जागरूक रहता है। यही धारणा उसे सत्यपथ पर चलने में सहायक सिद्ध होती है। लोक–संस्कृति, लोक–जीवन का एक सच्चा अध्याय है।'' इस कथन के आधार पर कहा जा सकता है कि मान्यता व विश्वास के आधार पर ही संस्कृति में लोक–संस्कार, लोक–धर्म, लोक–विश्वास, प्रथाओं व परंपराओं, मेलों–त्योहारों, खानपान तथा वेशभूषा का समावेश होता है। लोक–संस्कृति का एक आवश्यक अंग लोक–बोली भी है, जिसके द्वारा लोक अपनी कहानियों, कहावतों, उक्तियों और विचारों को अभिव्यक्ति देता है। अतः लोक–बोली या लोक–भाषा को लोक–संस्कृति से कतई अलग नहीं किया जा सकता है।

समग्रतः लोक–संस्कृति को विस्तार से समझने के लिए लोक में प्रचलित संस्कार, धर्म, विश्वास, प्रथाएँ, परंपराएँ, मेले, पर्व–त्योहार, वेशभूषा, खानपान, लोक–बोली आदि का अध्ययन नितांत आवश्यक है। लेकिन लोक–संस्कृति के इन उत्पादों के अध्ययन से पूर्व जिस प्रदेश की लोक–संस्कृति का हम अध्ययन करने जा रहे हैं, उस प्रदेश की लोक–संस्कृति के आवश्यक पहलुओं को समझना अत्यधिक आवश्यक है।

खड़ी बोली कौरवी : 'खड़ी बोली' नाम के पीछे दो धाराएँ क्रियाशील हैं। एक तो परिनिष्ठित मानक हिन्दी और दूसरे उप जन बोली के लिए जो दिल्ली, मेरठ के आस–पास बोली जाती है। उस आधार पर राहुल जी ने इस बोली को कौरवी संज्ञा से अभिहित किया। वस्तुतः कौरवी के साहित्यिक भाषा बनने के पश्चात इस बोली को खड़ी बोली की संज्ञा प्राप्त हुई। इस बोली को हिन्दुस्तानी, सरहिन्दी वर्नाक्युलर आदि नाम से भी संबोधित किया जाता है।

ब्रजभाषा के साहित्यिक प्रयोग से अलग हो जाने के कारण वे खड़ी कहलाई अर्थात् अकेली पड़ गयी और जो साहित्यिक प्रयोग में खड़ी हुई अर्थात कौरवी खड़ी बोली कहलाई।

कामता प्रसाद गुरू के अनुसार खड़ी का अर्थ– 'कर्कश' है। लेकिन ब्रजभाषा की अपेक्षा इसमें माधुर्य का अभाव है। किशोरीदास वाजपेयी ने खड़ी बोली में अकारांतता की खड़ी पाई ने इसे यह नाम दिया। गिलक्राइस्ट–खड़ी का अर्थ मानक (Standard) परिनिष्ठित स्वीकार करते हैं। फिलहाल इस बोली नामकरण के पीछे – इसका खरापन, कर्कशता और साहित्यिक प्रयोग के लिए तैयार (खड़ा) होने की प्रवृत्ति एक साथ क्रियाशील है।

देहरादून के मैदानी भाग सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, मेरठ, दिल्ली नगर, गाजियाबाद, बिजनौर, रामपुर और मुरादाबाद में खड़ी बोली का स्वरूप दिखाई देता है और बोली जाती है, इसमें लोक साहित्य की मात्रा प्रचुर है। शुद्ध कौरवी का क्षेत्र गंगा–यमुना के उत्तरी दोआब इसके प्रयोक्ता (एक करोड़) से अधिक है।

ब्रजभाषाः– शौरसेनी प्राकृत से विकसित लगभग 27 हजार वर्गमील में विस्तृत, पश्चिमी हिन्दी की ओकार बहुला उपवर्ग की प्रतिनिधि बोली ब्रज, मथुरा, आगरा, भरतपुर, दौलपुर, करौली, ग्वालियर, मैनपुरी, एंटा, इटावा, फिरोजाबाद, अलीगढ़, फरूखाबाद, गंगानगर, बदायूँ, बरेली, नैनीताल की तराई में फैली, अपने वर्ग की प्रतिनिधि बोली तथा एक लम्बे काल से साहित्य में प्रयुक्त ब्रज आज बुँदेली कन्नौजी, राजस्थानी, कुमायूँनी गढवाली को

समझने का माध्यम है। नैनीताल की मुक्सा, एटा, बटायूँ, मैनपुरी तथा बरेली की अंतर्वेदी धौलपुर एवं पूर्वी जयपुर की डॉगी, करौली की जादोवारी इसकी उपलब्धियां हैं। मथुरा, अलीगढ़ और आगरा के पूर्वी हिस्से की बोली आदर्श भाषा के रूप में मान्य है।

बंगला के कृत्रिम रूप 'ब्रंजबुलि' में भी ब्रजभाषा का प्रभाव लक्षित होता है। पिंगल ब्रजभाषा का एक अन्य नाम है।

ब्रजभाषा में प्रचुर साहित्य उपलब्ध है। आदिकाल से यह जहॉ अपभ्रंश और अवहट्ठ को प्रवाहित करती है। वहीं मध्यकालीन हिन्दी साहित्य में यह साहित्य की भाषा बन बैठी।

परिनिष्ठित हिन्दी के गौरव पूर्ण स्थान पर परिनिष्ठित होने के कारण यह बोली के बदले भाषा की संज्ञाा से विभूषित साहित्य इसी भाषा में लिखा गया। आधुनिक काल के प्रणेताओं में भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र ने भी प्रारम्भ में इसी भाषा का प्रयोग किया।

विशेषताएं – ब्रजभाषा में प्राप्त स्वर ध्वनियों के तीन वर्ग हो सकते हैं।

अति हृस्व – अॅ, इॅं, ऊॅ

हृस्व – अ, इ,उ, ऍ, ऑ

दीर्घ – आ, ई, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ

इ, उ के जंसित या फुसफुसाहट वाले रूप के अतिरिक्त सभी स्वर अनुनासिक रूप में भी आते हैं।

ब्रजभाषा में प्राप्त व्यंजन है :– क्, ख्, ग्, घ्, च्, छ्, ज्, झ्

ट्, ठ्, ड्, ढ्, त्,थ, द्, थ्, प्, फ्, ब्, व्यंजन स्वर रहित है।

भ्, ड़्, अ्, ण्, म्, ढ़्, म्ह्, न्ह, ड्, ढ़्,

र, रह, ल्ह्, व्, य, स्, ह् ।

उपरोक्त में से अ् एवं ण् के शुद्ध उच्चारण के लिए विवाद है। क्येंकि ज् का उच्चारण यॅू तथा ण् का उच्चारण डॅू की तरह होता है।

ब्रज में प्राप्त ध्वनियों के विशिष्ट परिवर्तन उल्लेखनीय है–

हिन्दी के ऐं, ओ स्वर ब्रज में ऐ, औ में परिवर्तित हो जाते हैं करेझकरै, नेझनै, उधोंझउधौ।

हिन्दी के आकारान्त शब्द औकारान्त हो जाते हैं – बसेरा–बसेरो, झंगड़ा–झगड़ो।

क – च । क्यों – च्यौं, चौं

ड़ – र् : घोड़ा–घोरा, थोड़ा–थोरा, साड़ीझसारी, कीड़झकीट ।

न् – ल् : नम्बरदार – लम्बरदार ।

र् – ल : रज्जुझलेजु, जरूरतझजरूरतें ।

ल् – द् : बादल–बादर, तालाझतारा, भोलीझभोरी ।

ह का लोप–वहुझबऊ, बारहझवाटा ।

समीकरण : बादशाहझबास्सा, मरताझमत्ता ।

महाप्राणीकरण : गाड़ीझगाढ़ी ।

अल्प प्राणीकरण : भाभीझभॉवी, ब्राह्मणझबावन ।

संज्ञा : ब्रजभाषा में प्राप्त संज्ञा शब्द के विविध रूप निम्नांकित है।

एकवचन बहुवचन

अधिकारी : घरु, लड़िकाझडाण्डो घर, लड़िकाझडाण्डे

विकारी : घर, लड़िका, डॉड़ौ, डांड़न, डॉड़नि, घरौ, घरन् घीन्न

एकवचन : उत्तमपुरुष, हौ, हो, ही, ओ, औ, द्तो

मध्यमपुरुष, हुतौ, हतौ, हतो

ब्रज में कालवाचक : आज , आजु, काल, कल, कल्लि, परौं, परसौं, तरौ, तुरसो कबैं,

स्थानवाचक व छुआ/, छुअन उतै, बितै, हुआन, हियन, हियो बितै

परिणायवाचक : उतनौ, जितनौ, तितनौ, उनतो

स्वीकारात्मक : हॉ, हौं, हैहीं

निषेत्मक : नाथॅ, नाहि, नाही, ना, न

रीति वाचक : तैसा, कैसा, जैसो, वैसो, ऐसो

कन्नौजी – प्राचीनकाल के स्वतंत्र राज्य और आधुनिक काल के फरुखाबाद जिले में स्थित कन्नौज के नाम पर इस बोली का नाम कन्नौजी पड़ा। इटावा, फरुखाबाद, शाहजहॉपुर, कानपुर, हरदोई और पीलीभीत जिलों में इस बोली का फैलाव है। यह शौरसेनी, अपभ्रंश से विकसित बोली है। ब्रजभाषा से इसकी निकटता इसे ब्रजभाषा की उप बोली मानने को विवश करती है। इसका लोक साहित्य सम्पन्न है। कुछ लोकसाहित्य भी है।

उकारांतता (खात, घर, सबु) हमारो, हमाओ, छोकरियॉ (वेटावा, बचवा) अवधी से भी इस बोली का साम्य दिखाई देता है। बेटावा बचवा आदि का महाप्रमाणीकरण – न, ल, इस बात के प्रमाण है ।

क–ख ऑछरू, ऑचल, हनुमान, हलुमान ।

मानव को वाणी पहले मिली, लेखनी बाद में आदि मानव का अधिकांश समय जंगल में बीतता था, इस प्रकार गॉवों, चौपालों, गलियों, खेत–खलियानों, चूल्हा–चौकों और झोपड़ियों में कही जाने वाली गावों लोक साहित्य हो गयी जिसमें पहेलियों, कहवतों, गीतों वीर गाथाओं, आख्यानों और लोक कथाओं का विपुल भण्डार बन गया।

लोक साहित्य गांवों तक सीमित न रहकर हर स्थान, हर अंचल में फैलकर हर स्तर, हर वर्ग, हर जाति की मौखिक परम्पराओं में परिख्यात हो गया है। इसकी पैठ हिन्दू, जैन, बौद्ध, इस्लाम, यहॉ तक कि ईसाई वाड़मय के सभी दर्शनों और वादों में हो गयी। प्राकृतिक भाषाओं का उद्गम आचंलिक माना जाता है। शास्त्रीय साहित्य ने दार्शनिक और धार्मिक परम्पराओं के प्रचार के लिए प्रचलित लौकिक आख्यानों का प्रश्रय ठीक समझा ब्रज लोक साहित्य में सबसे रोचक और सशक्त कृष्ण कथा मानी जाती है। संस्कृत भाषा में लोक कथा का शब्दिक अर्थ सर्वप्रिय कहानी है।

ब्रजवासी जनता –

राजनैतिक परिवर्तन :– ब्रज क्षेत्र प्राकृतिक रूप में जिस प्रकार शेष मध्य देश से अलग नहीं है, इसी प्रकार इस क्षेत्र की जनता की भी कोई प्रथम सांस्कृतिक इकाई नहीं है। उसे समझने के लिए मध्यदेश की सांस्कृतिक इतिहास की संक्षिप्त रूपरेखा समझी जाए मदेशिया नाम आज भी नेपाल में सुनाई देता है।

बहुत प्राचीन समय से अनेक जनपदों में विभक्त थी। जनपद कदाचित आर्यों के जन अथवा टोलियों के उपनिवेश थे जो मुख्यतया गंगा यमुना और सरयू के किनारे सुविधानुसार कुछ–कुछ दूरी पर बसे थे। गौतम बुद्ध के समय तक इनका पृथक अस्तित्व था। मध्य देश में गंगा के किनारे तीन प्रमुख जनपद थे, जो कुरू, पंच्चाल और काशी नाम से प्रसिद्ध थे, सूरसेन और वत्स यमुना के किनारे तथा कोशल सरयू के किनारे था। चार पश्चिमी जनपद कुरू, पांचाल, सूरसेन और मत्स्य सामूहिक रूप स बहुमर्षिदेश थे।

ब्रज का साहित्य :– ब्रज शब्द का संस्कृत तत्सम रूप ब्रज है जो संस्कृत धातु ब्रज ''जाना से बना है। ब्रज शब्द का

प्रथम प्रयोग ऋग्वेद संहिता से मिलता है किन्तु ढ़ेरों के चरागाह या बार्ड अथवा पशु समूह के अर्थों में प्रयुक्त हुआ है। वैदिक साहित्य तथा रामायण महाभारत तक में यह शब्द देश वाचक नहीं हो पाया था। हरिवंश तथा भागवत आदि पौराणिक में भी कृष्ण के पिता नन्द के मथुरा के निकटस्थ अर्थात गोष्ठ विशेष के अर्थ में ही हुआ है।

मध्यकालीन हिन्दी साहित्य में तद्भव रूप ब्रज अथवा ब्रज निश्चय ही मथुरा के चारों ओर के प्रदेश के अर्थ में मिलता है। इस प्रदेश की भाषा के लिए मध्यकालीन हिन्दी लेखकों के द्वारा केवल भाषा अथवा भाखा शब्द का ही प्रयोग होता था। यह प्रयोग ब्रज प्रदेश की भाषा के लिए ही सीमित नहीं था बल्कि हिन्दी की अन्य साहित्यिक बोलियों के लिए भी प्रयोग होता था।

निश्चय रूप से ब्रजभाषा का उल्लेख 18वीं शताब्दी से पूर्व नहीं मिलता। राजपूताने में काव्य की भाषा होने के कारण ब्रज भाषा पिंगल कहलाई है।

जबकि उर्दू लेखक ब्रजभाषा को भाषा कहकर पुकारते थे। यहॉ यह बता देना आवश्यक है कि बंगाली लेखकों की ब्रज–बुलि ब्रज भाषा नहीं थी, बल्कि मैथिली बोली से मिली हुई हिन्दी शब्दों व हिन्दी व्याकरण के ढ़ाचे में ढली हुई बंगाली ही थी। पूर्व चब्द 'ब्रजभाषा' अथवा भाखा के स्थान पर सरल तथा स्पष्ट होने के कारण उपलेख में ब्रज का प्रयोग किया गया है। अन्तर्वेदी, कन्नौजी, जादोबाठी, सिकरकारी, कैथेदिया, डॉगी, डांगभॉग, कालीमल, डुँगबारा आदि बोलियां ब्रज के ही स्थानीय रूपान्तर है तथा वह अपने क्षेत्र विशेष तक सीमित है।

'बृजि' पाली भाषा में प्राचीन बौद्ध साहित्य में कुछ देशवासियों नाम के अर्थ में मिलता है। विवरण के लिए देखिए मोनियर विलियम का संस्कृत अंग्रेजी शब्द कोश ।

प्राचीन काल (1400ई. के पूर्व) 19वीं शताब्दी से पहले हिन्दी साहित्य का इतिहास प्रधानतया ब्रज साहित्य का इतिहास है। परम्परानुसार हिन्दी साहित्य का सबसे प्राचीन रूप हमें 12वीं शताब्दी में मिलता है जबकि मध्य देश के प्रायः सभी हिन्दू दरबारों में स्थानीय बोलियों की संक्षिप्तता के प्रमाण मिलते हैं।

मध्यप्रदेश की एक आधुनिक बोली में लिखी गयी सबसे प्राचीन प्राप्त पुस्तक 1155 में अजमेर के राजा बीसलदेव के दरबार में नरपति नाल्ह द्वारा बरसलदेव रासो के स्थान में है। लेकिन हस्तलिप पोथी ही मिलती है जो राजस्थानी भाषा में है, ब्रज नहीं।

दूसरी महत्वपूर्ण रचना पृथ्वीराज रासो है जो दिल्ली के अन्तिम हिन्दू शासक महाराजा पृथ्वीराज चौहान के राजकवि चन्द्रबरदाई द्वारा मानी जाती है। भाषा की दृष्टि से पृथ्वीराज रासो की भाषा प्रधानतया ब्रज है। जिसमें उसकी ओजपूर्ण शैली को सुसज्जित करने के लिए प्राकृत अथवा प्राकृत मात्र रूप स्वतंत्र के साथ नियमित कर दिए गये हैं। अतः पृथ्वीराज रासो मध्यकालीन ब्रजभाषा में ही लिखा गया है। यह पुस्तक ब्रजभाषा के वर्तमान अध्ययन में सामिल नहीं की गयी है। इसका कारण सम्पूर्ण रचना का संदेहात्मक तथा विवादग्रस्त होना ही है। लेकिन ऐसा भी प्रतीत होत है कि कन्नौल के समकालीन हिन्दू दरबारों में स्थानीय बोलियों की अपेक्षा कदाचित संस्कृत भाषा को उच्च स्थान मिला हुआ था। संस्कृत का अन्तिम महाकाव्य नैषध चरित कन्नौज के अन्तिम हिन्दू शासक जयचन्द ने 12वीं शती में दरबार के दो भाषा कवियों क्रमशः भट्टकेदार तथा मधुकर ने जयचन्द प्रकाश तथा जयमयंकजंस चन्द्रका रचनाएं है किन्तु अभी तक अप्राप्य है।

मध्यदेश के चौथे समकालीन हिन्दू दरवार बुन्देल खण्ड में महोबा के साथ लोकप्रिय वीर काव्य आल्ह खण्ड के रचयिता जगनिक अथवा जगनायक का नाम लिया जाता है। अभाग्यवश यह मूल ग्रंथ अभी तक अनुपलब्ध है। इस रचना का वर्तमान प्राप्तम संस्करण 19वीं शताब्दी में चरणों में प्रचलित मौखिक जनश्रति के आधार पर संकलित किया गया था। इसकी भाषा बुन्देली के साथ मिली हुई पूर्वी ब्रज है किन्तु प्राचीन ब्रज के इतिहास के लिए इसका कोई मूल नहीं है। यह सच है कि लोकप्रियता की दृष्टि से आदि काल से संबंधित समस्त हिन्दी रचनाओं में आल्ह खण्ड ही हिन्दी भाषियों में सम्पूर्ण हिन्दी ब्रज प्रदेश में प्रथम स्थान रखता है।

ब्रज के लोक गीतों में विविध रूप और कृष्ण – कथाः–

ब्रज के लोक साहित्य के अन्तर्गत लोक गीतों का प्रमुख स्थान है। क्योंकि इसके माध्यम से लोक जीवन अपनी अनेक भावात्मक स्थितियों को विभिन्न संस्कारों, ऋतुओं, मासों, क्रियाओं और व्रतों के अनुसार व्यक्ति करता है। ये लोक गीत, लोक–भावना के स्वछंद प्रवाह के साथ प्रस्तुत हुए हैं। कृष्ण कथा के अनेकानेक संदर्भ इसी भावना स्तर पर ग्रहण कर लिए गए हैं इन लोक गीतों में प्रमुख भावना सहज, सरल जीवन की अभिव्यक्ति की है और इसी आधार पर कृष्ण कथा को स्वीकार किया गया है। अपने जीवन की विविध परिस्थितियों में लोक जिस प्रकार सुख–दुख, हर्ष–विषाद, मिलन विच्छोह हर्ष, उल्लाह–आवेग से उद्वेलित हुआ है।

लोक गीतों में कृष्ण कथा का स्वरूप किस प्रकार किस दृष्टि से आई सरलता से प्रस्तुत हुआ है।

1. संस्कारों के गीत :– शास्त्रविहित 16 संस्कारों में जन्म, विवाह, मृत्य संस्कार जब किसी के घर पुत्र पैदा होत है। तो स्त्रियॉ गीत गाती है–

जैसे : आली–ब्रज में महाराज भये,
सुखि ब्रज में गोपाल भए । – बुन्देली

2. माता यसोदा के मनोभावों की व्यक्त करने वाले इस जन्म गीत में व्यंजित हुई –

यसोदा ने कारी अंधेरी में ज्यायो,
अरी वो तो कारोई कृस्न कहायो ।
दाई आवें नार छिवायें,
जसोदा ने बाबू भी न गहायो ।

इधर बालक के जन्म की सूचना नाई द्वारा नाना, नानी, मामा अन्य संबंधित को रोचक भिजवाते समय –
हृदयगत भावनाओं का सामरू – उस कथागीत से स्थापित कर लेता है।

लाऔ रे हरद देउ बहुत चहचही, बेगि कुन्दन पुर जाव।
रूक्मिनी के बाप के।
बेठे बाके पॉचों भइया नाऊ नै करौ दे जुहार,
रूचक कहॉ पाइए। (ब्रज रस)

3. सतिया गीत मूल भावना के आधार पर ब्रज का यह गीत –

जैसे : धरहूं सुभद्रा सातिए अपने बिस दरबार,
बधाई बाजी नन्द के । (ब्रजः 223)

ब्रज के मिलन लिखित जगमोहन लुगरा गीत –

राजे ननद भवज दोनों बैठिए,
राजे रूकिमिन नौ–रस मॉस गरभ ते,
राजे ननदुलि बात चलाइए,
राजे जौ तिहारे होंइ नन्दलल,
जगमोहन लुगरा दीजिए । (ब्रज : 224)

बधाई गीतों में पाई जाने वाली मूल भावना ब्रज के,
इस साहित्य गीत में भी लोक गायक द्वारा व्यंजित किया गया है–

जैसे : भये जसोदा घर लाल बधाई लाई मालिनियॉ (ब्रज : 7)

रानी देवकी के सास–ससुर अपने पौत्र नाती के सोना चॉदी लुटा रहे हैं –

जैसे : रानी देवकी के भए नन्दलाल,

बधवा लाई ग्वालिनियॉ ।

लोक कथाओं में चौक पूजन आदि की तैयारियॉ होती हैं। बुन्देली का यह गीत –

आज दिन सोने के महाराज,

सुरहन गऊ के गोबर मंगाओं, ढ़िग घर आंगन लिपाओं महाजन । (ब्रज : 9)

नामकरण संस्कार :–

किसी बालक का नामकाल संस्कार,

पौराहित्य नियमों के अनुसार ग्रामीण नारियों गा रही है –

मथुरा नगर से पंडित बुलायों,

धरा रही लला कौ नाम ।

मंगल गीत या विवाह गीत :–

सब गामैं सहेलियॉ कै रूकमनि हो हो कै,

रूकमिन लाडलड़ी । (ब्रज : 218)

विवाह लगुन टीका के समय जब लड़की वाले लगुन लेकर आते हैं।

उदाहरणः–

लगुन आई हरे–हरे मेरे अंगना,

रघुनंदन तो ऐसे सजगए जैसी श्री भगवान्।

लोक–नायक के रूप में :–

वर कृष्ण के रूप–श्रृंगार की कल्पना –

नन्द को दुलारो मेरो बन्ना।

सिर साहै जाली को चीरा,

कलगीं लहरिया लहरियादार मेरो बन्ना । (ब्रज : 229)

उपसंहारः–

जहॉ तक ब्रज का लोकजीवन और लोकसाहित्य में कृष्ण भारतीय वाड्.मय के ऐसे अभिप्राय हैं, जो अनेक नामों और रूपों में ब्रज साहित्य में व्याप्त हैं और यह लोक मानस का ही प्रदान किया हुआ कई व्यक्तियों का सम्मिलित रूप है। अतः कृष्ण की कथा का लोकवार्ता से घनिष्ट संबंध है। महाभारत से कृष्ण के जिस ऐतिहासिक व्यक्तित्व की सूचना मिलती है। उससे विदित होता है कि आरम्भ से अन्त तक मूलतः शूरसेन प्रदेशी, वृष्णि वंशी सात्वत जाति, पशु पालक अभीरों के कुल देव थे। ब्रज की लोक कथाओं में अनेक देवी देवताओं का उल्लेख हुआ है, लेकिन एक बात अत्यन्त उभर कर आती है कि किसी भी कहानी में कृष्ण या कृष्ण कथा, लोक गीतों की कृष्ण कथा का संबंध है। जो लीलाओं से बंधी नहीं है। उसको अपनी भावनाओं की पोषक, सामग्री स्वयं लोक से ही समय–समय पर उद्भूत की गयी है। जो कल्पनाओं और प्रसंगों से मिलती रही है। जिसे आगे चलकर कृष्ण भक्त साहित्य को प्रेरणा और स्वरूप देने में लोक जीवन और ब्रज का लोक साहित्य परिपुष्ट हुआ है। प्रस्तुत लेख का सारांश ब्रज और बुन्देली लोक गीतों में कृष्ण–कथा के सहयोग (डॉ. शालिकग्राम गुप्त के स्वीकृत शोधप्रबंध से है)।

डॉ. अमर सिंह,

वरिष्ठ हिन्दी अधिकारी एवं सदस्य–सचिव, नराकास,

सी.एस.आई.आर.–भारतीय समवेत औषध संस्थान, जम्मू

डॉ. मिथिलेश दीक्षित के हाइकु काव्य में सौन्दर्यबोध

डॉ. मिथिलेश दीक्षित के हाइकु काव्य में सर्वत्र सात्विक सौन्दर्य के दर्शन होते हैं। उनकी सम्पूर्ण रचनाधर्मिता मानवीय मूल्यों से समन्वित है, परन्तु उनका हाइकु–काव्य, विशेष रूप से उनकी सौन्दर्य–दृष्टि का प्रतिफल है। जितना सौन्दर्य उनकी भाषा और उनकी शैल्पिक प्रस्तुति में है, उससे भी अधिक सौशठव उनकी गहन अनुभूति में, उनके उदार एवं विस्तृत चिन्तन में और उनके महनीय प्रयोजन में है। उनके हाइकु काव्य में आस्था, प्रेम एवं आनन्द की अभिव्यक्ति हुई है। उसमें ऐसा सहज संवेदनात्मक सौन्दर्य है कि वह केवल उनकी अनुभूति का विषय न रहकर, सम्प्रेषणीयता के कारण, सहृदयों/पाठकों की भी अनुभूति का विषय बन जाता है। उनकी सौन्दर्य–चेतना उनके द्वारा सर्वाधिक रूप में रचित उनकी प्रकृतिविषयक हाइकु–कविताओं में अधिक परिलक्षित होती है। वे मानवतावादी रचनाकार हैं। उन्होंने प्रकृति का मानवीकरण करते हुए अनेक हाइकु–कविताओं में प्रेम और आनन्द के भावों को साकार किया है।

प्रकृति के माहात्म्य के प्रति सम्पृक्तता, चेतना की एकाकारिता के कारण डॉ. दीक्षित के हाइकु में सुन्दर–सुन्दर शब्द, स्वर, ध्वनि, संकेत, सन्देश, प्रयोजन स्पष्ट हुए हैं और उनमें सहज सम्प्रेषणीयता उत्पन्न हुई है। यह एकाकारिता या समरसता उनकी रचनाओं की विशेषता है। उनकी सौन्दर्यपारखी दृष्टि ने प्रकृति के प्रत्येक पदार्थ में खोज–खोजकर सुन्दरता के दर्शन किये हैं। उनकी जितनी गहन अनुभूति है, उतनी ही सशक्त अभिव्यक्ति है और उतनी ही सशक्त सम्प्रेषणीयता है। ''प्रकृति के क्षण–क्षण परिवर्तित रूप एवं सौन्दर्य के विविध आयामों का कवयित्री ने सूक्ष्म अवलोकन किया है और अरूप सौन्दर्य के इन स्पन्दनों को अपने बहुत से हाइकुओं में अनुभूतिगम्य बना दिया है। प्रकृतिपरक ये हाइकु प्रकारान्तर से मानव–जीवन के निर्माण का दिव्य सन्देश भी देते हैं''–(परिसंवाद, पुस्तक का बैकपृष्ठ)।

सहज सम्प्रेषणीयता का वैशिष्ट्य और सौन्दर्य उनके अनेक हाइकुओं में दृष्टिगत होता है, जैसे कि –

ठहर गयी
बरगद की छाँव
मन के गाँव !

यादों के दिये
आँधियों में भी नहीं
बुझने दिये!

काँटों को भूल
शाखा–शाख फूलते
फूल ही फूल!

डॉ. दीक्षित के हाइकु काव्य में कथ्य एवं शिल्प–दोनों का सौन्दर्य प्रतिष्ठापित है। उनके कथ्य में भावों, चिन्तन और प्रयोजन की सुन्दरता परिलक्षित होती है तथा शिल्प में चित्रात्मक के साथ बिम्बात्मक सौन्दर्य, आलंकारिक सौन्दर्य, शब्द–शक्तियों का सौन्दर्य, ध्वनि और नाद का सौन्दर्य, लाक्षणिक और

व्यंजनात्मक प्रस्तुति में सूक्तियों, वक्रोक्तियों का सौन्दर्य दृष्टिगत होता है। उनकी हाइकु कविता के कथ्य में प्रांजलता, पावनता, सूक्ष्मता, समरसता, समत्व, सकारात्मकता, आस्थापरकता, मूल्यपरकता, उदात्तता, विशालता आदि–आदि गुणों का समावेश हुआ है। कतिपय हाइकु प्रस्तुत हैं–

प्रभु ने छुए	नियति बोली	रस झरता
बहुमूल्य तभी ये	बीतने दो रात को	जीवन में जब हो
सुमन हुए!	होगा सबेरा!	समरसता !
कोशिश होगी	प्रतिदिन ही	सन्देश देता
अमरबेल यह	अनुभव ही	सुबह का सूरज
सूख न पाये!	नवस्पन्दन !	नवीनता का !

वे आधुनिकता की पक्षधर हैं, परन्तु अपनी श्रेष्ठ सांस्कृतिक विरासत के प्रति उनमें अपार श्रद्धा का भाव है। उनके अनेक हाइकु इस बात का सन्देश देते हैं। समाज की, मानवता की सुन्दर व्यवस्थता हेतु विसंगतियों के निवारण के प्रयास भी आवश्यक हैं और कहीं–कहीं विरोध या निषोध भी आवश्यक हो जाते हैं। मानवतावादी रचनाकार होने के कारण डॉ. दीक्षित सही मार्ग के कंटकों पर भी दृष्टिपत करती हैं और समाज की सुखद व्यवस्था को सुनिश्चित करने के लिए इन व्यवधानों को दूर करने के लिए भी अपनी हाइकु–कविताओं के माध्यम से बात करती हैं। सामयिक व्यवस्था को उन्होंने हाइकु के द्वारा आड़े हाथों भी लिया है। उनकी दृष्टि में मानवता और समाज–निर्माण की प्रक्रिया में यह बहुत आवश्यक है कि हम वास्तविकता को जाने–समझें और कुछ कहने–करने–लिखने को विवश हो जायें। उनके सौन्दर्यबोध का ही यह सकारत्मक पक्ष है। चिन्तन के ऐसे क्षणों में उनके हाइकु–काव्य में व्यंग्य भी मुखर हो जाता है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत है–

उलूक तुम	चल कोयल	शोर है जागा	अश्रु नहीं ये
पक्षियों के रूप में	ऋतु के नयनों में उड़े	कभी के हंस	बूढ़े नयनों की हैं
हो गये कम!	बदलाव है!	बचे हैं कागा !	धुँधली यादें !

अपनी शैल्पिक अभिव्यक्ति में वे अद्वितीय रचनाकार हैं। संस्कृत भाषा पर अधिकार होने और भाषा की विदुशी होने के कारण उनके शब्दों की सटीक प्रस्तुति रचना–सौन्दर्य में और अधिक वृद्धि करती है। सटीक और सार्थक शब्द–रचना, उचित पदान्वय, सुन्दर लयात्मकता, प्रभावपूर्ण शब्द–संयोजन ने उनके हाइकुओं में अनुपम चारूता उत्पन्न कर दी है। उनमें पाठक और श्रोता को प्रभावित करने तथा रससिक्त करने की विशिष्ट क्षमता है। कविता के शिल्प में लयात्मक सौन्दर्य का अत्यधिक महत्व होता है। डॉ. दीक्षित हाइकु में लय को आवश्यक मानती हैं, परन्तु तुकान्तता को वे आवश्यक नहीं मानती हैं। उनका ही कथन यहाँ उद्घृत है–''लय तो हाइकु कविता में सौन्दर्य के रंग भर देती है, तुकान्तता हो या न हो। तुकबन्दी के प्रयास में, कभी–कभी कविता में सम्प्रेषणीयता बाधित हो जाती है, सटीकशब्दावली का अभाव हो जाता है, प्रासंगिकता और प्रयोजन में व्यवधान आ जाता है, क्योंकि कविता में शिल्प से पहले कथ्य महत्वपूर्ण होता है। भावों के सहज प्रवाह में

तुकान्तता आल्पायास ही आ जाये, तो बहुत ठीक है, अन्यथा बनावट से आकृति बनी रहती है, आत्मा विलुप्त हो जाती है'' (परिसंवाद, फ्लैप–2)। कभी–कभी तुकान्तता भी कविता (हाइकु) को चमत्कार एवं सौन्दर्य से मण्डित कर देती है। उनके हाइकुओं में अद्‌भुत लयात्मकता है, परन्तु उन्होंने तुकान्त हाइकु भी बहुत लिखे हैं। कुछ उदाहरण लें –

ठहर गयी
बरगद की छाँव
मन की गाँव !

बसन्त आया
वसुधा का हृदय
खिलखिलाया !

पृथ्वी की शान
किरणें करा रहीं
धूप से स्नान !

माँ के सपने
रंग भरे जिनमें
अब हमने !

गर्मी का दौर
धूप में झुलसता
पाखी का ठौर !

कोहरा छाया
हवाओं को देख लो
पसीना आया !

तीव्र आतप
फिर भी हरे–भरे
स्मृति–पादप !

होना है धूल
फूल गये फिर भी
फूल ही फूल !

रोशनी लायी
चाँदनी में नहायी
शाम यूँ आयी !

डॉ. दीक्षित के अनेक हाइकुओं में गेयता का गुण विद्यमान हैं। श्रुतिमधुरता एवं ध्वनि–लालित्य इनकी प्रमुख विशेषताएँ हैं। यथा–

है सृष्टि वही
कण–कण बदला
है दृष्टि नयी !

रस झरता
जीवन में जब हो
समरसता !

0 0

छोड़ किनारा
आगे बढ़ती जाती
जल की धारा !

रोली रचाये
लहरों पर धूप
झिलमिलाये !

0 0

उदात्त सौन्दर्य तो स्थान–स्थान पर जगमगा उठता है। जैसे –

खिल उठे हैं
चेतना–आलोक में
श्रद्धा–सुमन !

कण–कण में
परिव्याप्त शक्ति है
विशालरूपा !

माधवी सन्ध्या
समीरता नाचता
संग सौरभा !

डॉ. दीक्षित की हाइकु–कविताओं में मानवीय गुणों का सौन्दर्य तथा सामाजिक यथार्थ और आदर्शों का सौन्दर्य तो प्रभावित करता ही है, परन्तु उनका प्राकृतिक सौष्ठव और सौन्दर्य अद्‌भुत, अनुपम और अद्वितीय है। प्रकृति का ऐसा मधुर, सुश्ठु, रमणीय, मोहक, सुन्दर चित्रण अन्यत्र दुर्लभ है। उनके प्रकृतिपरक हाइकु पढ़कर, सहृदय उनके चिन्तन की विशाल परिसीमा में पहुँच कर एक झलक का भी अवलोकन कर लेता है, तो वह मुग्ध हो जाता है। यदि उनके सम्पूर्ण भावबोधक तक पहुँचकर इन कविताओं का मूल्यांकन किया जाये, तो न जाने कितने–कितने भावों के अमूल्य मोती प्राप्त किये जा सकते हैं।

हाइकु एक छन्द भी है और एक पूर्ण कविता भी है। कविता में कवित्व आवश्यक होता है और कवित्व में लय आवश्यक होती है। लय या रिद्‌म कविता की अन्तर्धारा को सौष्ठव से परिपूर्ण कर देती है। इतनी लधु रचना हाइकु में भी रिद्‌म का ऐसा सौष्ठव डॉ. दीक्षित के सौन्दर्यबोध की अभिव्यक्ति और प्रस्तुति पर भी प्रकाश डालता है। वैसे तो अक्षरों, मात्राओं की गणना आदि से छन्द निर्मित होता है, परन्तु छन्द केवल मीटर ही नहीं होता, उसमें प्रवाहशीलता आवश्यक है। छन्द का प्राण तत्व लय है। लयात्मकता से संगीतात्मकता और नाद–सौन्दर्य बढ़ता है। ध्वनि की लयात्मक गति में अद्‌भुत आकर्षण होता है। डॉ. दीक्षित के हाइकु में यह आकर्षण दृष्टिगोचर होता है। यह लयात्मक प्रवाह भी सहज और स्वाभाविक है। अतः उनके हाइकु की सबसे बड़ी विशेषता है–उनका लयात्मक सौन्दर्य। इस छोटे से छन्द को उन्होंने इस सौन्दर्य से मण्डित कर दिया है।

प्रकृति के मधुर और भयंकर–दोनों रूपों का डॉ. दीक्षित ने अपने हाइकुओं में चित्रण किया है, परन्तु उसके मधुर स्वरूप पर वे अधिक मुग्ध होकर लिखती हैं। गत्यात्मक सौन्दर्य प्रभावित कर देता है–

क्षण–भंगुर　　नियति बोली　　फूल खिलता
जीवन में पलता　　बीतने दो रात को　　चटक जाती शिला
हर अंकुर !　　होगा सबेरा !　　है सिलसिला !

प्रकृति के भयंकर रूप का कहीं–कहीं चित्रण है, तो वह प्रायः मनुष्य को चेतावनी देने के लिए या पर्यावरण की शुद्धता का सन्देश देने के लिए है, जैसे–

सूखे हैं वृक्ष　　फैली निर्द्वन्द्व　　जिसके पेड़
सूख रही चेतना　　फूलों की बगिया में　　सहम गये खेत
जीवन बिना !　　बारूदी गन्ध !　　यन्त्रों को देख !

डॉ. दीक्षित के प्रकृतिपरक हाइकु पढ़कर प्रसिद्ध हाइकुकार श्री राधेश्याम का कथन याद आ जाता है कि ''हाइकु कविता शुद्ध अनुभूति के सूक्ष्म आवेगों की सरलता एवं स्वाभाविक अभिव्यक्ति है। लय, ध्वनि, शब्दार्थ ही हाइकु का सौन्दर्य हैं।''

डॉ. दीक्षित के हाइकु की भी यह विशेशता है कि वे ध्वन्यात्मक, लयात्मक और चित्रात्मक है। उनके अधिकांश प्रकृतिबिम्ब भी मानव–सापेक्ष हैं या मानवीय सन्दर्भों को चित्रित करते हैं। उनके लिए प्रकृति एक चेतन तत्व है और विराट् सत्ता का प्रतिरूप है। वे लिखती हैं–

प्रकृति कहो
अथवा परमात्मा
बात एक है।
वह विराट् शक्ति के रूप में कण–कण में विद्यमान है–
कण–कण में
परिव्याप्त शक्ति है
विशालरूपा !
जिसने जीवन को समझ लिया, जीवन की धारा को पकड़ लिया, वह अमर हो गया–
अमर हुआ
जिसने समझा है
जीवन क्या है।
इसके लिए आवश्यक है कि–
अपनी ओर
दृष्टि को ही मोड़ लें
नाता जोड़ लें।

आत्मसाक्षात्कार से ही ब्रह्म का साक्षात्कार सम्भव है। जो स्वयं में शुद्ध और सही है, वहीं ईश्वर की अनुभूति कर सकता है और ईश्वर की महिमा को समझ सकता है। डॉ. दीक्षित के हाइकुओं में अध्यात्म का वैभव और आत्मदर्शी की एकनिष्ठता परिलक्षित होती है–

केवल तुम
खुशबू के रूप
में मेरे संग।

खुशबू को देखा नहीं जा सकता, मगर महसूस किया जा सकता है। उसी प्रकार ईश्वर की अनुभूति एक आस्थावान ही कर सकता है। इन स्थलों पर कहीं–कहीं संगीतात्मकता का जीवन्त प्रवाह भी दर्शनीय हो जाता है–

चल दें वहाँ
संगीत जीवन का
बसता जहाँ ।

प्रकृति–परिवेश के विविध रूपों–प्रातः, सन्ध्या, सूर्योदय, सूर्यास्त, चन्द्र, चन्द्रिका, सूर्य, तारक, रात्रि, नदी, पर्वत, वृक्ष, लताएँ पुष्प, कलिकाएँ, वर्षा, ग्रीष्म, वसन्त आदि ऋतुएँ–आदि का बिम्बात्मक वर्णन उनके हाइकुओं का वैशिष्ट्य है। नैसर्गिक शोभा और सौन्दर्य के कारण वसन्त ऋतु उन्हें अत्यन्त प्रिय है। फूलों से उनका इतना लगाव है कि उन्होंने कई सौ हाइकु फूलों पर केन्द्रित ही लिखे हैं। उनके लिए फूल 'ड्राइंगरूम' की शोभा या सजावट का उपादान नहीं हैं। फूल तोड़ना, कली को तोड़ना वे भयंकर पाप मानती हैं, क्योंकि

''नन्हीं–सी कली / प्रकृति की गोद में / लगती भली।'' सबको अपनी मिली हुई अवस्था तक जीने का अधिकार है। वह अधिकार किसी को छीनना नहीं चाहिए। स्वयं में भी यह जीवन्तता होनी चाहिए। फूलों से सीख लेनी चाहिए, यह बात अपनी एक क्षणिका के माध्यम से भी वे कहती हैं–

फूल न जाने / भावी कल को / फिर भी खिल जाता / कुछ पल को।

कवि केदारनाथ ने यहाँ तक कहा था कि ''एक आधुनिक कवि की श्रेष्ठता की परीक्षा उसके द्वारा आविष्कृत बिम्बों के आधार पर ही की जा सकती है। उसकी विशिष्टता और उसकी आधुनिकता सबसे अधिक उसके बिम्बों में ही व्यक्त होती है:–'' (तीसरा सप्तक–सं. अज्ञेय, प्र.सं. 1956, पृ. 115)। बिम्बात्मक सौन्दर्य की दृष्टि से डॉ. दीक्षित की प्रकृति विषयक हाइकु–कविताएँ अत्यन्त परिपष्ट, सहजग्राह्य और सम्प्रेषणीय हैं। वे बिम्ब सर्वथा नवीन, मौलिक और जीवन्त हैं, भिन्न–भिन्न रूपों के सौन्दर्य का वैशिष्ट्य लिये हुए हैं। कुछ हाइकु दिये जा रहे हैं–

माँ का आँचल / शीतल–सुरभित / मलयानिल–(माधुर्य बोध)।
रोली रचाये / लहरों पर धूप / झिलमिलाये–(सात्विक सौन्दर्य)।
सदाचार के / शतदल खिलते / मेरे आँगन–(सात्विक सौन्दर्य)।
रोशनी लायी / चाँदनी में नहायी / शाम यूँ आयी–(सात्विक सौन्दर्य)।
प्रातसमय / नवनव स्पन्दन / फूल फूल में – (नूतनता)।
प्रतिदिन ही / अनुभव करती / नवस्पन्दन – (नूतनता)।
धूप बीनती / मृदुल दूब पर / बिखरे मोती–(मानवीकरण)।
ओर न छोर / चपल लालसाएँ / करतीं शोर –(मानवीकरण)।
पूरी ऊर्जा लें / फूल खिल कहता / जीवन जी लो–(जीवन्तता)।
दलदलों में / उगायी है फसल / फूलों–फलों की–(जीवन्तता)।
आशा का नभ / भीगे पंख मगर / उड़ता खग–(जीवन्तता)।
चुरा ले गया / पतझर पाहुन / कपड़े–लत्ते–(नूतन प्रयोग)।
सन्देश देता / सुबह का सूरज / नवीनता का–(नैरन्तर्य)।
मूल्यों के मोती / बदलती धारा में / लहर धोती–(नैरन्तर्य)।
छोड़ किनारा / आगे बढ़ती जाती / जल की धारा–(नैरन्तर्य)।

पल–पल परिवर्तित प्रकृति के अद्‌भुत सौन्दर्य पर उनकी दृष्टि ठहर जाया करती है। परिवर्तन की वे इतनी पक्षधर हैं कि कहती हैं–''बड़ा ज़रूरी / वक़्त पकड़कर / बढ़ते जाना।''

नयी पौध का लाक्षणिक सौन्दर्य अनेक अर्थ प्रकट कर देता है। जीवन के बिना, जल के बिना, आत्मबोध के बिना, आत्मसम्मान के बिना, जीवन्तता के बिना फसल की फसल, भीड़ की भीड़ और आज की नयी पीढी शुष्क होती जा रही है–''नयी पौध की / सूखती पल–पल / यह फसल।''

यह जीवन स्वयं के लिए भी होता है और अन्य के लिए भी। अन्य के लिए जब यह उपयोगी हो जाता है, जो

स्वयं को भी सार्थक कर देता है और उच्चता के सोपान पर स्थित हो जाता है। पेड़ के माध्यम से वे कहती हैं–

छाया देकर
हमसे ऊँचा हुआ
हमारा पेड़!

कविता का बिम्ब सृजन–चेतना अथवा सर्जनात्मक कल्पना का व्यापार है। डॉ. दीक्षित का बिम्ब–विधान उनकी सुन्दर कल्पना की प्रस्तुति है। उन्होंने अनेक स्थलों पर सफलतापूर्वक काव्य बिम्ब प्रस्तुत किये हैं। उनके हाइकु काव्य–शिल्प के सम्बन्ध में आचार्य शुक्ल का कथन–युक्तियुक्त लगता है, ''शुद्ध काव्य की उक्ति सामान्य तथ्य कथन या सिद्धान्त के रूप में नहीं होती। कविता वस्तुओं और व्यापारों का बिम्ब ग्रहण कराने का प्रयत्न करती है, अर्थ–ग्रहण मात्र से उसका कार्य नहीं चलता''–(रसमीमांसा–सं0 2006, पृ. 358)। बिम्बों की योजना से डॉ. दीक्षित के हाइकु का सौन्दर्य बढ़ जाता है। डॉ. विमल ने बिम्ब के स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए कहा है, ''कलाकार या कवि के भावों को बिम्ब ही प्रेषणीय और ग्राह्य बनाते हैं। यहाँ यह ध्यातव्य है कि वे ही बिम्ब इस सामर्थ्य से युक्त हो सकते हैं, जिनमें ये तीन गुण विद्यमान हों–प्रत्यग्रता, तीव्रघनता और उद्‌बोधनशीलता। प्रत्यग्रता वह गुण है, जो प्रयोग–बंकिमा, रंग–न्यास, स्वरारोह–अवरोह, या पद–लालित्य के सहारे बिम्बों में जीवन–सत्य भरती है। तीव्रघनता वह गुण है, जिससे बिम्ब छोटे फलक पर ही अधिकतम अर्थवत्ता के केन्द्रीकरण की शक्ति अर्जित करते हैं और उद्‌बोधन शीलता वह शक्ति है, जिसके द्वारा बिम्ब कृतिगत भावावेग के प्रति सहृदय चित्त की प्रत्यर्थता को उद्‌बुद्ध करते हैं''–(सौन्दर्य शास्त्र के तत्व, प्र.सं. 1967, प्र. 227–28)।

डॉ. दीक्षित के हाइकु में प्रत्यग्रता, तीव्रसघनता और उद्‌बोधनशीलता–तीनों गुण विद्यमान हैं। प्रातः काल के कलरव का, प्रफुल्लता का, सन्ध्या समय की नीरवता का, रात्रि की निस्तब्धता का उन्होंने अत्यन्त सूक्ष्म और प्रभावकारी चित्रण किया है। ऑधी–पानी, तूफान, लहरें, पुरवाई, पछुआ हवा, मेघगर्जन से लेकर तितलियों की चंचलता–सुन्दरता, झींगुरों के सुरों तक का उन्होंने चित्रण किया हैं। मानवीकरण शैली उन्हें प्रिय है और लक्षणाशक्ति तथा सार्थक बिम्बों के माध्यम से वे प्रकृति और मानव से सम्बन्धित सभी स्थूल और सूक्ष्म तत्वों का चित्रांकन करती हैं। कतिपय बिम्ब दर्शनीय हैं–

खिला गुलाब	ठण्डे पर्वत	बालक तरू	पत्तों के जोड़े
सुनहरी धूप में	रूई पहनकर	शीशे की झील झुक	शाखों पर बैठ के
सफेद–लाल!	ठिठुर रहे!	झाँकने लगे!	झूलते झूले!
सेने के पंख	खोल के पाँखें	कोहराछाया	धूप बीनती
सरेआम उड़ते	तालाब के जल में	हवाओं को देख लो	मृदुल दूब पर
पक्षी निश्शंक!	तैरतीं शाखें !	पसीना आया!	बिखरे मोती!

प्रकृति के सभी तत्वों के समन्वय–सामंजस्य पर उन्होंने दार्शनिक–आध्यात्मिक दृष्टि से चिन्तन किया है। इसीलिए उनके हाइकु में श्रेष्ठ–सात्विक भावों का सुन्दर बिम्बों के माध्यम से चित्रण हुआ है। डॉ. दीक्षित के प्राकृतिक प्रतीक भी उनके हाइकु के शैल्पिक सौन्दर्य के साधन बनकर प्रस्तुत हुए हैं। जयशंकर प्रसाद के अनुसार कलाजगत् में सौन्दर्यबोध को मूर्त बनाने तथा संवेदना को आकार देने के लिए प्रतीकों की सृष्टि होती हैं। उनका कथन हैं, ''सौन्दर्यबोध बिना रूप के हो ही नहीं सकता है। सौन्दर्य की अनुभूति के साथ ही साथ हम अपने संवेदन को आकार देने के लिए उनको प्रतीक बनाने के लिए बाध्य है''–(काव्य और कला तथा अन्य निबन्ध, पृ. 35)।

सौन्दर्यबोध को मूर्तित करने तथा विशेष भाव–व्यंजन के लिए डॉ. दीक्षित ने प्रतीकों का आश्रय लिया है, इसीलिए उनके हाइकुओं में नवीनता, विलक्षणता और सौष्ठव समाविष्ट हैं। प्रतीकों के माध्यम से उनके हाइकु का आन्तरिक संवेदन प्रकाशित हुआ है। पशु–पक्षी, पहाड़ तथा अनेक जीव–जन्तुओं के माध्यम से उन्होंने मानवोचित क्रियाकलापों पर विविध रूपों में प्रकाश डाला है। उन्होंने सर्प, सिद्ध, तितली, हंस, काक, कोयल, उल्लू, मुर्गा आदि के द्वारा विभिन्न मानवीय प्रवृत्तियों तक का सामाजिक–राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में प्रतीकात्मक चित्रण किया है। इस सन्दर्भ में कतिपय हाइकु प्रस्तुत हैं–

शोर है जागा	चल कोयल	उलूक तुम
उड़े कभी के हंस	ऋतु के नयनों में	पक्षियों के रूप में
बचे हैं कागा!	बदलाव है!	हो गये कम!

इस प्रकार उन्होंने अपने विराट् भावबोध और उदार चिन्तन को अत्यन्त सुन्दर शिल्प में हाइकु जैसी लघु कविता में समायोजित किया है। उनकी रचनाओं में आलंकारिक सौन्दर्य भी है, परन्तु अलंकारों की नियोजना स्वाभाविक रूप से हुई है, कहीं भी कृत्रिम रूप से उन्हें समाविष्ट नहीं किया गया है। लक्षणाशक्ति से सम्पन्न, ओज–प्रसाद और माधुर्य गुणों से समन्वित उनके हाइकु को सर्वाधिक रूप से उपमा, श्लेश, अनुप्रास और मानवीकरण अलंकारों ने सौश्ठव प्रदान किया है। उनका शिल्प भाषिक सौन्दर्य से भी निखर उठा है। भाषा की प्रकृति का ज्ञान होने के कारण सारगर्भित और सटीक शब्द–संयोजन ने हाइकुओं को सार्थक और सोद्देश्य रचना के रूप में प्रस्तुत किया है। इन हाइकुओं का शास्त्रीय दृष्टि से भी कम महत्व नहीं है। अतः कहा जा सकता है कि हिन्दी काव्य–जगत् में उनके हाइकु–काव्य का युगीन भावबोध के साथ ही शास्त्रीय दृष्टि से भी अत्यन्त महत्व है।

डॉ. सरिता लवनियॉ
रीडर–हिन्दी,
राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय,

न देखा जायेगा सपना कुंवारा

रास्ता कोई नहीं तकता हमारा,
मिल गया शायद उसे कोई सहारा।
नीम की छैयां में बीते उन दिनों की,
आज भी यादों में सांकल बज रही है।
मन की चंचलता उफनकर इक नदी सी,
प्रीत की धारा समेटे बह रही है।

संधि का प्रस्ताव भेजो धड़कनो को,
अब न देखा जायेगा सपना कुंवारा।

बात संकेतों की भाषा से संवरती,
और हमारी आँख के दर्पण लजाते।
जब कभी सावन छलकता पुतलियों से,
पोंछकर काजल मेरा हंसकर मनाते।

तेरे आने का शगुन मन गुनगुनाए,
अनछुआ आँचल अभी तक है तुम्हारा।

लाल आँखों को छुपा, आँचल से मलता,
और हर आहट पे देहरी तक निकलता।
दूर से दिखते हुये, एक–एक पथिक की,
हर सुबह से, शाम तक पहचान करना।

इक सदी के बाद भी, आभास तेरा,
दे रहा संदेश आने का दोबारा ।

रचना तिवारी
(राष्ट्रीय कवयित्री)

सीख लो लाइब्रेरी के गुर

सीख सको तो सीख लो लाइब्रेरी के गुर
वरना हाथ नहीं आएगा उड़ जायेंगे फुर ।
ज्ञान का भण्डार है लूट सको तो लूट,
ओपन एक्सीज ट्रेंड है यूजर को है छूट।
यूजर को है छूट मिले मन चाही पुस्तक,
हर पुस्तक भी खुश है पाकर अपनी दस्तक।
पुस्तकालय स्टॉफ को है ये मेरी राय,
समय बड़ा अनमोल है इसको ले बचाय।
इसको ले बचाय समझ लो इसका मान,
पाठक हो संतुष्ट बढ़ाये अपना ज्ञान।
वर्द्धनशील संस्था है बस इतना रखना ध्यान,
प्री प्लानिंग कर लेना जब हो भवन निर्माण।
ज्ञान का विस्फोट है नित नई है शाख,
बुक सलेक्शन ऐसा हो बचे ना कोई खाक।
बचे ना कोई खाक है सिमित बजट हमारा,
हर यूजर को मिले ज्ञान है यही हमारा नारा।

अजीत प्रभाकर
तकनीकी अधिकारी
आई.आई.आई.एम.,जम्मू

कविता

आहट होती है कहीं दिल ठहर जाता है,
भई ये कैसा सन्नाटा है।

चुटकियों में जाता बदल,
मंजिलों का रास्ता है।
ये चमकती रोशनी को देखो,
जलाकर बची राख है ।
ज़िदगी से लड़ती,
साँसों की आवाज़ है।
मत रोको पंख इनके भी है,
जरा उड़ान दो विश्वास की,
यह सारा आकाश इनका भी है।
माँगों न कुछ ये खुद ही सौगात है,
इनकी उम्मीदों का दामन कुछ खास है।

पंकज कुमार शर्मा
ज्योतिपुरम् सलाल परियोजना, रियासी

ना जाने किसकी मुझे तलाश है ?

सोच रहा था एक दिन,
कि मैं कौन हूँ ?और मेरा कौन है इस जहॉ में ?
और ना जाने किसकी मुझे तलाश है ?
इस घने जंगल में,
उड़ते हुए पंछी की तरह,
विचर रहा हूँ चारों तरफ,
एक डाल से दूसरी डाल,
दूसरी डाल से तीसरी डाल,
बैठ रहा हूँ डाल–डाल पर,
पर ना जाने किसकी मुझे तलाश है ?
उसके प्यार के सरोवर में,
पल–पल मन डूब रहा है,
उसने तो कमी ना की पर,
कुछ कम होने का एहसास है,
ना जाने किसकी मुझे तलाश है ?
दूर जब वो चली जाती,
और बात भी ना हो पाती,
वो नहीं तो क्या हुआ ?
पर दिल तो उसी के पास है,
फिर भी ना जाने किसकी मुझे तलाश है ?
आँगन की फुलवारी की तरह,
खुशियों से भरा रहे उसका जीवन,
इस जन्म में ना हो पाई मेरी,
वो तो क्या हुआ ?
अगले जन्म में तो मिलने की आस है,
ना जाने किसकी मुझे तलाश है ?
उस चाँदनी रात में,
जब हाथों में उसका हाथ था,
महकते हुए बीगचे में,
मेरी बाँहों में उसका साथ था,
वो खुश तो थी, पर न जाने क्यूँ ?
उसके चेहरे पर किसी अनकहे दर्द का वास था,
याद कर उसके दर्द को,
दिल मेरा उदास है,
ना जाने किसकी मुझे तलाश है ?
अन्धकारमय इस जीवन में,
दिल ज्योति लाना चाहता है,
पर अन्जाम भय से कदम तो क्या,
मेरा रोम–रोम भी थम जाता है,
थमे हुए इस रोम–रोम से,
विफल हो जाते सभी प्रयास है,
ना जाने किसकी मुझे तलाश है ?

शिकवा नहीं है उस खुदा से,
जिसने कभी ना बुझाई,
मेरे सच्चे शीतल मन की प्यास है,
कौन सा गुनाह किया था मैंने ?
जो नहीं आई उसको मेरी,
जीवन की छण भर खुशियाँ रास है,
ना जाने किसकी मुझे तलाश है ?
मेरे कोमल हृदय को देखो,
खिलते थे जिसमें रंग–बिरंगे गुलाब हैं,
पर आज अंधूरे प्रेम के कारण,
मुर्झाये बेरंग से सारे गुलाब है,
गुलाबों की इस हालत पर,
हृदय हो रहा मेरा हताश है,
ना जाने किसकी मुझे तलाश है ?
तड़पते दिल को उसकी याद में,
समझाया मैंने रोज बहुत,
उसे भूलने की खातिर अब,
लिया मन का भी सहारा,
पर मय के नशे में होकर चूर भी,
हो जाता दिल के अरमानों का पर्दाफाश है,
ना जाने किसकी मुझे तलाश है ?
इस कठोर जीवन पथ पर,
साथी तो क्या ?
परछाई भी ना मेरे साथ है,
मांगी है सिर्फ रब से यह दुआ,
जीता हूँ उसी के लिए,
जब तक साँस में साँस है,
ना जाने किसकी मुझे तलाश है ?
गमों के सायों में भी खुश होने को मचल जाता हूँ ,
हवा के झोंके की तरह,
पाकर उसके प्रेम को,
मन के जज़्बात महकाना चाहता हूँ ,
पर प्यार बिना ये मन तो क्या ?
मेरा शरीर भी एक जिन्दा लाश है,
मैं कौन हूँ, और मेरा कौन है इस जहाँ में,
और ना जाने किसकी मुझे तलाश है ?
ना जाने किसकी मुझे तलाश है ?.....

श्री लाखन सिंह,
सलाल पावर स्टेशन

कमलेश्वर कृत 'दूसरे' की विनाश नायिका

आर्थिक अभाव एक ऐसा दीपक है जो गरीब इंसान की अन्तिम व एकमात्र सम्पत्ति 'स्वाभिमान' को भी गिराने से बाज नहीं आता। अभाव भरे जीवन में महत्वांकांक्षा का बीज डालकर परमसत्ता शायद परीक्षा लेती है इंसान की। इंसान हालात से लड़ता है, गिरता है फिर उठता है और फिर लड़ता है, पर अभावमयी जिन्दगी जीने वाला इंसान एक कठपुतली की तरह होता है जिसका नियंत्रण उन लोगों के हाथों में होता है जो उन पर चन्द एहसान करके अपने बड़प्पन का दिखावा करते हैं। उन अभावमयी जिन्दगी जीने वालों पर दया कर के मानों उन्हें खुद पर गर्व होता हो, वे खुद को इतना श्रेष्ठ मानने लगते है कि वे दूसरों की जिन्दगी के फैसले सुनाने लगते हैं। मानो उन लोगों का अपनी ही जिन्दगी पर कोई हक न हो। न चाहते हुए भी उन्हें (अभावमयी जिन्दगी जीने वाले) ये फैसले मानने पड़ते हैं। अपनी इच्छाओं का, चाहतों का गला घोटना पड़ता है।

कमलेश्वर द्वारा लिखी कहानी ''दूसरे' में एहसान करने वाले लोगों को दूसरे नाम दिया गया है। कहानी की नायिका सुनीता उनकी अप्रत्यक्ष मौजूदगी को अपने घर में महसूस करती है। इन लोगों की अप्रत्यक्ष मौजूदगी ज्यादा प्रबल होती है जबकि सुनीता और उसका परिवार प्रत्यक्ष रह कर भी अस्तित्व हीन–सा और लाचार लगता है।

सुनीता अपने भाई–बहनों में से सबसे बड़ी है। अपने परिवार के प्रति जिम्मेदारी को खूब समझती है साथ ही साथ वह महत्वाकांक्षी भी है। मन में बहुत से सपने संजोए हुए है। उसमें अपने परिवार का सहारा बनने की चाह है, बड़े से परिवार का बोझ ढ़ोते–ढ़ोते थक चुके अपने बाप के कन्धों को आराम देना चाहती है, पर परिस्थितियां उसके विपरीत है। आर्थिक अभाव के चलते उसके परिवार को दूसरों के अहसान तले दबना पड़ता है, तुच्छ कार्य करने पड़ते हैं जो कि उसे उसकी मंजिल तक पहुँचाने में असमर्थ है। कहानीकार के शब्दों में –

'छोटी–छोटी नौकरियां करते उसका मन ऊब गया था। उन्हें नौकरियां भी नहीं कहा जा सकता था। दो बच्चों को पढ़ा देना, दूध डिपो पर सुबह या शाम दूध बाँटना, किसी दफ्तर में किसी की एवजी पर 15 दिनों के लिए काम कर देना''।

सुनीता को आस पड़ोस के लोगों के छोटे कार्य करना बिलकुल भी अच्छा न लगता था, पर मजबूरी में इंसान को चाहे अच्छा लगे या बुरा इसका कोई महत्व नहीं होता । उसे यह सब सहना है। दूध डिपो के एरिया मैनेजर ने बड़े उपकार भाव से कहा था। ''हरवंशलाल जी, जब तक आपकी लड़की को कहीं और सर्विस नहीं मिलती, दूध डिपो पर भेज दिया करो ..... चालीस पैंतालिस रूपये क्या बुरे हैं।''

''एक अजीब सी चोट लगी थी जब उसे बगल से ओवरसियर ने कहा था – दोनों बच्चों को पढ़ा

दिया करो, बीस रूपये मैं दे दिया करूंगा।''

सुनीता और उसके परिवार की जिन्दगी मानों हर तरफ से जकड़ी हुई है। कहीं से कोई ढील नहीं, कोई सहारा नही। भाई अगर बड़ा होता तो फिक्र का बोझ शायद कम होता। क्योंकि उनकी जिन्दगी दूसरों के रहम पर निर्भर है इसीलिए उन्हें उनके अधीन ही रहना पड़ता है। वे अपनी पसन्द अपनी मर्जी के खिलाफ कुछ नहीं कर सकते क्योंकि अगर ऐसा किया तो उन पर रहम करने वाले बदल जाएंगे। सौ–सौ बाते बनायेंगे, अपनी मर्जी तो वही चला सकते हैं, जो आर्थिक रूप से मजबूत हों, अभावग्रस्त आदमी नहीं ।

सुनीता के मन में बहुत सी इच्छाएँ हैं पर वह हर रोज इन इच्छाओं का गला घोंटती है। ये मुश्किल जिन्दगी कहाँ इजाजत देती है उसे कि इच्छाओं को पूरा कर सके।

''रेश्मी साड़ी पहन कर अपने में संतुष्ट सी घर से निकले। भाई–बहन पूरी फीस लेकर स्कूल जा सकें। माँ मुहल्ले की औरतों से दिल खोल कर बातें कर सके'' पर ऐसा हो नहीं पाता, उसके अरमान सिर्फ विचारों तक ही सीमित रहते है सच नहीं हो पाते।

सुनीता की उम्र शादी करने लायक है पर वह इन परिस्थितियों में शादी नहीं करना चाहती । जब वह शादी से इंकार करती है तो उसे अपने अस्तित्व के होने का अहसास होता है। वह फिर जुट जाती है नौकरी की तलाश में। कई बार सुनीता के मन में शादी का नया ही रूप उभरता है। शायद ऐसा होगा, जो उसे कहीं मिल जाएगा और धीरे–धीरे उसके चारों ओर समा जाएगा और तब वह माँ को बताएगी और उस पुरूष के आगमन से यह असुरक्षा का दौर समाप्त हो जाएगा।

सुनीता के मन में आई सकारात्मकता उसमें बहुत सी उम्मीद भी जगाती है कि कभी न कभी उसका घर अनिर्णय की स्थिति से जरूर बाहर निकलेगा। उनके भी दिन बदलेंगे। उसके घर में अदृश्य रूप से घुसे हुए लोगों को वह बाहर निकालने में कामयाब हो जाएगी जिनकी मौजूदगी भले ही अदृश्य है पर है प्रबल और सम्पूर्ण।

सनीता की उम्मीदें उस दिन धरी की धरी रह जाती है जब सुनीता के माँ–बाप उसकी शादी का फैसला ले लेते हैं और उसकी अनुमति चाहते हैं। उस दिन सुनीता कितनी स्पष्टता से देख रही थी कि वह निर्णय जिसे माँ और बाप अपना निर्णय कह रहे थे उनका नहीं था बल्कि दूसरों द्वारा निर्धारित फैसला था जिसे वे दोनों अपना फैसला कह कर बता रहे थे। उन्हें वही उचित लगता है तो दूसरो को लगता है कितनी सहजता से वे उस निर्णय को अपना कह कर बता रहे थे।

''तू तो जानती ही है बेटा कि तेरे मामा ने हम लोगों का हमेशा भला ही सोचा है..... हर परेशानी में साथ दिया है ..... ''

तब सुनीता भीतर ही भीतर बेबस होकर रह गई थी क्योंकि वह दूसरों द्वारा दिये गये फैसले खुद

पर, परिवार पर आरोपित होते हुए देख रही थी लेकिन चाह कर भी कुछ भी नहीं कर पा रही थी।

''सुनीता को लगा कि यह कैसी स्थिति है टेढ़ी और दुःखद। दूसरों के लिए हुए निर्णयों को हम अपना कह कर स्वीकारने को मजबूर हैं''

लाचार सुनीता दूसरों की उपस्थिति को हटाने के लिए बहुत सूझती है, पर विजयी दूसरे होते हैं। उसकी जिन्दगी का बेहद महत्वपूर्ण फैसला 'दूसरो' ने ही लिया और उसे स्वीकारना भी पड़ा न चाहते हुए भी।

''उसकी आँखे डबडबा आयी थी और आँसुओं को रोकते हुए उसने जैसे किसी दूसरे की आवाज में कहा था–जैसा आप लोग ठीक समझें।''

ममता कुमारी,
जम्मू

वेश्या जीवन और समस्याएं

वेश्यावृत्ति हमारी संस्कृति के प्रत्येक कालखंड में किसी न किसी रूप में जीवित रही चाहे वह महाभारत काल रहा हो, मौर्यकाल या वैदिक काल! समाज की विलासवृति का सीधा सम्बन्ध वेश्यावृत्ति से जुड़ा हुआ है। प्रत्येक युग में वैश्याएं रही सिर्फ उनके नाम बदलते रहे। कभी उन्हें देवदासी, सर्वभोग्या, रूपजीवना, तो कहीं उन्हें नृत्यांगना, वेश्या, कालगर्ल, कसबिन एवं पुतिश्या कहा जाता रहा। प्राचीन समय में वेश्याओं का प्रयोग काम–वासना की तृप्ति के साथ–साथ मनोरंजन के लिए भी किया जाता था। लेकिन वर्तमान समय में इनके माध्यम से सिर्फ काम (Sex) की ही पूर्ति की जाती है।

वेश्या एक ऐसा शब्द है जिससे स्त्री के कलंकित जीवन की ध्वनि निकलती है। वास्तव में यह ऐसा कलंक है जिसे स्त्री को ही ढोना पड़ता है। अनैतिक यौन संबंध वेश्यावृत्ति कहलाते हैं। पुरूष–स्त्री का अवैध माना जाने वाला यह संबंध वास्तव में पुरूष की अपनी लपलपाती अदम्भ इच्छाओं का नैतिक मुद्दा है जिनका आधार वेश्याएँ हैं। एक से अधिक पुरूष से यौन संबंध रखना वेश्यावृत्ति नहीं है। कोई भी स्त्री चाहे विधवा हो, सधवा हो या कुमारी किसी पुरूष से कथित रूप में असामाजिक सम्बन्ध रखती है तो वह वेश्या नहीं कहला सकती। वेश्या कहलाने के लिए यह आवश्यक है कि इस प्रकार का सम्बन्ध हो और यह सम्बन्ध पैसों के लिए हो। इसके विपरीत यदि कोई स्त्री कुछ वर्षों तक अथवा जन्म भर के लिए एक ही पुरूष के साथ सम्बन्ध रखती है, और यह सम्बन्ध पैसे से जुड़ा हो तो वह एकवृत्तिवाली होते हुए भी वेश्या कहलाएगी। हिन्दी –महिला लेखिकाओं में मधु कांकरिया का महत्वपूर्ण स्थान है।

मधु कांकरिया कृत 'सलाम आखिरी' उपन्यास वेश्या जीवन पर आधारित उपन्यास है। विभिन्न उपशीर्शकों में विभाजित यह उपन्यास हमारे सामने वेश्या जीवन से सम्बन्धित अनेक समस्याओं को खोल कर रख देता है। 'सलाम आखिरी' उपन्यास के फ्लैप पर व्यक्त विचारों के अनुसार : ''समाज में वेश्याओं की मौजूदगी एक ऐसा चिरन्तन सवाल है जिससे हर समाज, हर युग अपने–अपने ढंग से जूझता रहा है। वेश्याओं को कभी लोगों ने सभ्यता की जरूरत बताया, कभी कलंक बताया, कभी परिवार की किलेबंदी का बाई–प्रोडक्ट कहा और कभी सभ्य सफेदपोश दुनिया का गटर जो उनकी काम कल्पनाओं और कुंठाओं के कीचड़ को दूर अँधेरे में ले जाकर डंप कर देता है।''

वेश्याएँ नारी शोषण का एक रूप है वेश्याओं की कहानी समाज के अनुसार उनके वेश्या बनने पर खत्म हो जाती है जबकि स्वयं उनकी कहानी उनके वेश्या बनने पर शुरू होती है। इन वेश्याओं की पहचान देह के कारण है। आज लालबत्ती इलाकों को (Red light areas) देह बाजार के नाम से जाना जाता है। यहाँ पर दिन–रात सिर्फ देह का ही व्यापार चलता है। ग्राहक का जब मन किया पैसों के बल पर अपनी प्यास को बुझा लेता है। आज से ये वेश्याएँ पांच–दस रूपये के लिए अपनी देह को बेच रही हैं। ये वेश्याएँ अपनी देह को इस तरह से सजाती संवारती हैं ताकि ज्यादा से ज्यादा ग्राहक आकर्षित होकर इनके पास जाये। जैसी इनकी देह होगी वैसे ही इनको ग्राहक मिलेंगे। ग्राहकों को लाने में दलाल की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। वेश्याओं का चुनाव भी कई तरह से किया जाता है –

उम्र, रंग, धर्म और दाम देखकर तय किया जाता है। वेश्याएँ भी कई तरह की होती हैं। फुलटाइम वेश्याएँ, स्वतंत्र वेश्याएँ, फ्लाइंग वेश्याएँ, छुकरी वेश्याएँ आदि। कुछ वेश्याएँ अपनी इच्छा से इस पेशे को अपनाती है वह स्वतंत्र वेश्यावृत्ति न करके अपितु चकले की मालकिन के अधीन रहकर कार्य करती है। चकले की मालकिन इन वेश्याओं को सभी प्रकार की सुविधाएँ उपलब्ध करवाती हैं रहने, खाने, पीने और यहाँ तक ग्राहकों को भी लाने में। लेकिन वह इन वेश्याओं से उनकी कमाई का पचास प्रतिशत वसूल लेती है। वेश्यावृत्ति में शामिल होने के विभिन्न कारण हैं–जैसे–गरीबी, बलात्कार, पति द्वारा उकसाया जाना, प्रेमी द्वारा छला जाना आदि। 'सलाम आखिरी' उपन्यास में इन सभी कारणों को चित्रित किया गया है।

वेश्याओं का जीवन ही असुरक्षा पर टिका हुआ होता है। वह न तो घर में सुरक्षित हैं और न ही इन बाजारों में पहुँचने पर! वेश्यालयों में पहुँचने पर अलग–अलग ग्राहकों द्वारा इनकी बुरी दुगर्ति होती है और बाद में जीवन के अन्तिम दिनों तरह–तरह के रोग ग्रस्त होने पर। चालीस–पैंतालीस की आयु तक पहुँचते ही ये वेश्याएँ तरह–तरह के रोगों से ग्रस्त हो जाती है। जैसे– एड्स, शरीर में छाले पड़ना, अन्दर से पूरी तरह सड़–गल जाना आदि। 'सलाम आखिरी' उपन्यास की रेश्मा नामक वेश्या जो किसी समय देह के कारण इन बाजारों की शोभा थी बाद में एड्स ग्रस्त हो जाने पर मालकिन द्वारा चकले से

निकाल दी जाती है। जीवन के अन्तिम दिनों में कोई सहारा न होने के कारण वह सड़कों पर भीख माँगती नजर आती है और एक दिन वही मर जाती है।

ज्यादातर वेश्याएँ यह जानते हुए कि भ्रूण हत्या महापाप है। इसके बाबजूद भी वह भ्रूण गिराने के लिए बाध्य है। वेश्याएँ यह जाने बिना कि गर्भ में लड़की है या लड़का वे भ्रूण गिरवा देती है। इनका विचार है कि लड़का हुआ तो वह इसको कौन सा अच्छा इन्सान बना पाएगी। वह न तो अपने बच्चों को स्कूल भेज सकती है और न ही उन्हें अपने पास रख सकती है और यदि लड़की हुई तो उसे भी उनकी ही तरह इस पेशे को अपनाना पड़ेगा। जिस तरह का शोषण, उत्पीड़न, अत्याचार का शिकार वह है उसी तरह उनकी लड़कियाँ भी उनके बाद यही सब करेगी। इसी भय से वह पहले ही भ्रूण गिरवा देती है। 'संलाम आखिरी' उपन्यास में पिंकी नामक वेश्या के दो बच्चे हैं लड़की और लड़का। वह नहीं जानती है कि इन दोनों बच्चों का पिता कौन है। 'पिंकी फिर से गर्भवती होती है इस बार वह नहीं चाहती कि उसका बच्चा जन्म ले। इसीलिए वह सुकीर्ति से मदद माँगती है। सुकीर्ति उसे समझाती है कि भ्रूण नष्ट करवाना कानूनी अपराध है। विवश होकर अंत में पिंकी भ्रूण गिरवा देती है और स्वयं भी अधिक रक्तस्राव के कारण मर जाती है।

आज अगर वेश्यावृत्ति पर रोक लगा दी जाए तो ज्यादातर वेश्याएँ भूखी ही मर जाएगी क्योंकि न तो शिक्षा, न कोई विकल्प और न ही किसी तरह का संरक्षण है इनके पास जिसके सहारे वह पुनः अपना जीवन आगे बढ़ा सके।

आज वेश्या उद्धार से जुड़े कुछ संगठन मॉग कर रहे हैं कि वेश्याओं को यौन कर्मी और वेश्यावृत्ति को उद्योग–धन्धे का नाम दिया जाए, ताकि ये वेश्याएँ भी आत्म–निर्भर बनने के साथ–साथ समाज में सम्मानित जीवन जी सके। आज एक और पुलिस के भय से और दूसरा समाज में अपने लिए कलंकित शब्द सुनकर इन पर भी एक ही धुन सवार है कि उन्हें यौन–कर्मचारी का दर्जा दिया जाए। जहाँ पर वह खुद को बिना रोक–टोक ऊँचे दामों पर बेच सकें।

वेश्याएँ अपने इस नीरस और नारकीय जीवन से उब चुकी हैं। हर शाम इनके मन में आशा की एक किरण जन्म लेती है कि शायद कुछ ऐसा परिवर्तन आ जाए कि उनको इस दलदल भरी जिन्दगी से मुक्ति मिल जाए पर रात के अँधेरे में उनकी यह आशा भी निरर्थक सिद्ध होती है। गहरी रात के कुछेक घण्टों को छोड़कर रात–दिन यहाँ देह व्यापार इन गलियों में चलता रहता है।

सोनिया गुप्ता
हिन्दी विभाग
जम्मू विश्वविद्यालय,जम्मू

युद्ध के संदर्भ में वर्जीनिया वुल्फ़ और महादेवी वर्मा का तुलनात्मक अध्ययन

युद्ध के प्रति स्त्री/पुरुष के दृष्टिकोण और युद्ध रोकने में स्त्री की भूमिका को लेकर सन् 1938 में वर्जीनिया वुल्फ़ की पुस्तक 'थ्री गिनीज़' प्रकाशित हुई। यह पुस्तक वस्तुतः 1928 ई. में वुल्फ़ द्वार केम्ब्रिज विश्वविद्यालय के महिला कॉलेज में दिया गया भाषण है और इसी विषय से संबंधित महादेवी वर्मा का छोटा–सा निबंध –'नारी और युद्ध' सन् 1942 में प्रकाशित हुए निबंध–संग्रह 'श्रृंखला की कड़ियों में संकलित है। महोदवी वर्मा की पुस्तक 'श्रृंखला की कड़ियां' में जिसे आज स्त्री–विमर्श कहा जा रहा है उससे संबंधित ग्यारह निबंध हैं।

दोनों विदुषी महिलाओं की पुस्तकों के प्रकाशन काल का अल्प अन्तर अपने आप में महत्वपूर्ण नहीं है, महत्वपूर्ण है पुस्तक लिखने की पद्धति। वुल्फ़ की दृष्टि शोध–दृष्टि है। वह विभिन्न लेखकों की जीवनियों, इतिहास के अध्ययन और अपने समय के तथ्यों की सहायता से विश्लेषण–विवेचन द्वारा अपने मत का निर्माण करती हैं; वह काल रेखा पर उभरी ऐतिहासिक निर्मितियों का सोदाहरण उल्लेख करती हैं। महादेवी वर्मा की दृष्टि भी इतिहास और अपने समय के तथ्यों पर है, जिनसे मत छन कर आता है, परन्तु वह अपने मत की पुष्टि ऐतिहासिक तथ्यों से न के बराबर करती हैं।

महादेवी की दृष्टि में युद्ध का कारण पुरुष की संकीर्ण स्वार्थ भावना है जिसमें असीमित अधिकार–लिप्सा निहित है। उसकी यह मनोवृत्ति दूसरे राष्ट्रों की जीवन भर की संचित संस्कृति को निगलने के लिए तत्पर रहती है। वुल्फ़ की दृष्टि में पुरुष को युद्ध की ओर ले जाने वाले तीन कारण प्रमुख हैं – (क) युद्ध उसके लिए व्यवसाय है, (ख) उसके लिए प्रसन्नता और उत्तेजना का स्रोत है और (ग) युद्ध इन पौरुषीय गुणों के विकास का मार्ग है जिनका विकास युद्ध–कला के माध्यम से हुआ है। स्थायी शांति होने पर उसके पौरुषीय गुणों के निकास का मार्ग बन्द हो जाएगा।[1] इन दोनों दृष्टियों का अन्तर भारत और इग्लैंड की संस्कृति और राजनीतिक इतिहास में छुपा हुआ है। वुल्फ़ के समक्ष वायु और थलसेना के सैनिकों की जीवनियां हैं। वुल्फ़ के देश में लोकतन्त्र की स्थापना के प्रयास सन् 1066 ई. में नॉरमन द्वारा ब्रिटेन पर विजय अभियान के समय से आरम्भ हो जाते हैं और सन् 1918 में वहां पूर्ण लोकतन्त्र स्थापित करने की प्रक्रिया सम्पन्न होती है। उस लोकतन्त्र में सैनिक की युद्ध में मृत्यु के पश्चात उसके परिवार के समक्ष आर्थिक समस्या नहीं है और न ही वहां विधवा पत्नी के समक्ष पुनर्विचार का सांस्कृतिक संकट है। महादेवी का काल भारत की परतंत्रता का काल है। उसके समक्ष उन सैनिकों का इतिहास है, जो लोकतांत्रिक व्यवस्था का परिवारों को आर्थिक सहायता नहीं देते थे। सांस्कृतिक रूप में भारतीय नारी के जीवन का केन्द्र घर–परिवार है, यही कारण है कि महादेवी युद्ध की समस्या पर चिंतन गृह को केन्द्र में रखकर करती हैं। उनके मन में प्रश्न है कि 'भिन्न देश और जातियों की, दुध मुँहें बालकों को अंचल की छाया में छिपाये और बड़ों को वात्सल्य से आर्द्र करती हुई माताएँ, तथा आने वाली आपत्ति की आहट सुनकर मुरझाई हुई स्नेहमयी पत्नियां क्या सोच रही हैं।''2

महादेवी के समक्ष वह आदिम बर्बर पुरुष है जिसकी स्वार्थ भावना उसे युद्धोन्मुखी बनाती है। उस बिन्दु से लेकर वर्तमान में सभ्य कहलाने वाले पुरुष का नाता युद्ध से टूटा नहीं है। समय के साथ उसके व्यक्तिगत स्वार्थ ने विस्तार पा कर 'जाति देश या राष्ट्र–विशेष' के स्वार्थ का रूप ले लिया, उसकी अधिकार–लिप्सा का भी विस्तार हुआ फलतः आज का पुरुष बर्बर–युग के पुरुष से अधिक क्रूर सिद्ध हुआ है। वुल्फ़ का यह कहना है कि आज का पुरुष शांति स्थापित करने के लिए शस्त्र उठा सकता है। यह कृत्य नारियों को स्वीकार नहीं हैं।[3] वुल्फ़ उदाहरण देती हैं कि शांति के नाम पर इग्लैंड के सैनिकों ने पहले फ्रांस में शस्त्र उठाए अब वे एक बार फिर स्पेन में भी उठा सकते हैं।

महादेवी और वुल्फ़ दोनों का यह निष्कर्ष है कि युद्ध पुरुष की मनोवृत्ति के अनुकूल है, नारी की मनोवृत्ति के नहीं। महादेवी की दृष्टि में इसके दो कारण हैं, पहला कारण यह है कि नारी के लिए घर और जीवन में कोई अन्तर नहीं है। घर का उजड़ना जीवन का उजड़ना है। पुरुष 'गृह में उतना अनुरुक्त नहीं है', इसका कारण उसका स्वभाव और बाहरी जीवन के संघर्ष में उसका लिप्त होना है। स्त्री के लिए गृह महत्वपूर्ण है, पुरुष के लिए युद्ध के लिए जाता हुआ सैनिक महत्वपूर्ण है। वुल्फ़ इग्लैंड के सैनिकों की सुन्दर और महंगी वर्दी से प्रभावित नहीं होती। उसका मत है कि इसे पहनने वाला सैनिक जीवन के ऐश्वर्य से प्रभावित होता है या दिखावे के माध्यम से युवाओं को सैनिक जीवन अपनाने का प्रलोभन दिया जाता है।

पुरुष को युद्ध से कैसे विमुख करके युद्धों को रोका जाए यह प्रश्न दोनों विदुशियों के सम्मुख है। महादेवी पुरुष और स्त्री के कार्यक्षेत्र और स्वभाव में अन्तर को पहचान कर राह निकालने का प्रयत्न करती हैं। पुरुष का कार्यक्षेत्र जीवन के बाह्य संघर्ष हैं। वह स्वभाव से स्वार्थी और शोशक है। उसमें अधिकार–भावना है। उसे जीवन में बहुत कुछ चाहिए, जबकि नारी थोड़े में ही गुजारा कर लेती हैं। आदिम नारी ने पुरुष की शक्ति और दुर्बलता को पहचान कर अपने बुद्धिबल से गृह की नींव रखी। पुरुष की बर्बरता को वश में करने का उसके पास साधन था आत्मनिवेदन। यह आत्मनिवेदन उस समय और सशक्त हो जाता है, जब घर में संतान आ जाती है। संतान की जीवन रक्षा और उसे पुरुष के समान बलशाली बनाने के लिए औरत ने आत्मनिवेदन किया होगा। तभी वह कुटिया बनाने और आखेट की ओर प्रवृत्त हुआ। गृह के अस्तित्व में आ जाने के पश्चात शत्रुओं से उलझने के स्थान पर उसे उनके सहयोग की आवश्यकता थी, गृह–रक्षा के दायित्व ने उसकी युद्धोन्मुखता को शांति की ओर धकेला, लेकिन युद्धों का अन्त नहीं हुआ क्योंकि जो युद्ध पहले वैयक्तिक था अब उसने सामूहिकता का रूप ले लिया। गृहों की रक्षा के लिए जातियों में परस्पर युद्ध हुए, लेकिन स्त्री कभी भी युद्ध की समर्थक नहीं रही।

महादेवी की दृष्टि में स्त्री का युद्ध से विमुखता का कारण केवल यह नहीं है कि वह शारीरिक और मानसिक दृष्टि से युद्ध के लिए उपयुक्त नहीं है; युद्ध उसके विकास में बाधक है। नारी–जीवन की सम्पूर्णता त्याग, तपस्या, साधना और प्रेम जैसे गुणों के कारण है। इन गुणों का विकास शांति की दशा

और पुरुष के साहचर्य में ही संभव है। युद्धोन्मुख सैनिक के लिए स्त्री के इन गुणों का कोई महत्व नहीं है, उसके लिए स्त्री केवल रूप है जिसका वह उपभोग कर सकता है।

पुरुषों पर नारी के प्रभाव को वुल्फ़ भी स्वीकार करती हैं। अतीत में नारियों ने राजनीति और उन शिक्षित पुरुषों को प्रभावित किया जिनका संबंध युद्ध से नज़दीकी संबंध रखने वाले व्यवसाय पर था। अपने समय में उन औरतों के प्रसिद्ध घरानों और उनके द्वारा आयोजित प्रीतिभोजों ने इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

वुल्फ़ के समक्ष युद्ध रोकने का प्रश्न इसीलिए उपस्थित हुआ कि उसके पास एक संस्था का पत्र आता है जिसमें पूछा गया है कि औरतें युद्ध रोकने के लिए क्या कर सकती हैं?साथ ही तीन सुझाव भी हैं कि युद्ध रोकने के लिए (क) अखबारों के लिए लिखे पत्र पर हस्ताक्षर किए जाएँ (ख) संस्था विशेष का सदस्य बना जाए (ग) और चंदा दिया जाए। औरतें क्या कर सकती हैं, इस प्रश्न पर ध्यान केन्द्रित करते हुए वुल्फ़ इग्लैंड में औरतों की स्थिति, औरतों का प्रभाव क्षेत्र, औरतों की आत्मनिर्भरता, शिक्षा पर औरतों का प्रभाव, शिक्षा का औरतों पर प्रभाव, शिक्षा और युद्ध; और चर्च और युद्ध जैसे विषयों पर स्त्री की पुरुष से तुलना करते हुए विचार करती हैं। उसके सामने एक अैर पत्र भी है, जिसमें महिला विद्यालय के जीर्णोद्धार के लिए चंदा मांगा गया है। वुल्फ़ दोनों पत्रों के उद्देश्यों की तुलना भी युद्ध रोकने के लिए स्त्रियों द्वारा सहायता किए जाने के सन्दर्भ में करती हैं।

सन् 1928 का समय है जब दूसरे महायुद्ध की पृष्ठभूमि तैयार हो रही थी और इग्लैंड में बहुसंख्या युद्ध समर्थकों की थी, लेकिन विसम्मतियां भी मौजूद थीं। वुल्फ़ की दृष्टि में उस समय देशभक्ति और राष्ट्रीय गौरव का जो अर्थ शिक्षित पुरुषों के लिए था वह औरतों के लिए नहीं था।[4] इग्लैंड को स्वतंत्रता और लोकतंत्र का घर कहा जाता है, लेकिन जीवनियों और इतिहास से यही प्रमाण मिलते हैं कि उनकी स्वतंत्रता पुरुषों से भिन्न रही है और मनोविज्ञान इस तथ्य की ओर संकेत करता है कि इतिहास में ऐसी घटनाएँ मौजूद हैं जिनका प्रभाव उसके मन और शरीर पर पड़ा। इसलिए देशभक्ति शब्द की उनकी व्याख्या अलग है। युद्ध के विषय को लेकर उस समय इग्लैंड के चर्च में भी मत वैभिन्य था।

वुल्फ़ के समक्ष जीवनियों और इतिहास से हट कर उस समय के जीवन की वास्तविकताएँ हैं। युद्ध की भयानकता से संबंधित कुछ चित्र हैं जिनमें घरों के अवशेष और शव दिखाई दे रहे हैं, जिन्हें देखकर औरतों की यही राय बनती है कि युद्ध घृणास्पद और बर्बरता है।

युद्ध रोकने के लिए औरतें अपने प्रभाव का प्रयोग कर सकती है, लेकिन उनके प्रभाव का क्षेत्र बहुत सीमित है क्योंकि प्रभाव के सभी क्षेत्रों पर पुरुष–वर्चस्व है। औरतों में भी एक श्रमिक वर्ग है, दूसरा शिक्षित पुरुषों की बेटियों का। कूटनीति और चर्च जैसे प्रभाव के क्षेत्रों में उन्हें प्रवेश करने की अनुमति नहीं है, न राष्ट्रों के साथ संधियां करने पर उनका अधिकार है। सिविल सर्विस में वे जा सकती हैं, लेकिन वहां पर पुरुषों की ही बात अधिक सुनी जाती है। गोला–बारूद बनाने के कारखाने में काम

करने वाली औरतें अगर हड़ताल कर दें तो उसका कुछ प्रभाव हो सकता है। शिक्षित पुरुषों की बेटियों का प्रभाव वहां पर भी नहीं है। उसका अप्रत्यक्ष प्रभाव शिक्षित पुरुषों पर उसी तरह है, जैसे अतीत में कुलीन स्त्रियों का प्रभाव राजनीति से संबद्ध पुरुषों पर था। यह अप्रत्यक्ष प्रभाव शक्ति की दृष्टि से कमजोर और गति की दृष्टि से धीमा है, यही कारण है कि औरतों को मताधिकार प्राप्त करने में बहुत अधिक समय लगा और बहुत अधिक परिश्रम करना पड़ा। महादेवी का आकलन है कि इस प्रकार के प्रभाव की अब कोई शक्ति नहीं रह गई है। आंसू बहा कर पुरुष को युद्ध से विरत करने के प्रयत्न या कर्तव्य–अकर्तव्य के उपदेश को वह अपने साहस के उपहास या बुद्धि को चुनौती के रूप में लेती है। अगर युद्धोन्मादी पुरुष को नारी त्याग दे तो उसका जीवन शुष्क और नीरस हो जाएगा। इस स्थिति से निपटने के लिए पुरुष ने यह तर्क गढ़ लिया है कि नारी दुर्बल है, उसमें शक्ति नहीं है, वह भावुक है, इसलिए युद्ध नहीं चाहती; नारी में आत्मरक्षणीयता का भाव है, जो लज्जा का विषय है।[5]

इग्लैंड में सन् 1919 में औरतों को निजी संस्थानों में कार्य करने की अनुमति मिली। तब से वे आत्मनिर्भरता की ओर बढ़ी हैं और उनका प्रभाव भी बढ़ा है, लेकिन यह प्रभाव उसके पहले वाले प्रभाव से भिन्न है। अब वह अपना मत प्रकट कर सकती है। पैसों के लिए सौम्य बन कर भाई या पिता पर निर्भर रहने की आवश्यकता नहीं है। अब उसकी छवि मौन सम्मति देने वाली औरत के रूप में नहीं रह गई है। इतना होने पर भी उसमें और पुरुष में अन्तर बना हुआ है। सम्पत्ति पर पुरुष का अधिकार है, औरतों का नहीं। यह अन्तर औरतों के शरीर और मानस में अन्तर ला देता है, इस तथ्य से मनोवैज्ञानिक भी इंकार नहीं कर सके। पुरुषों के मन, मस्तिष्क और शरीर को प्रशिक्षित करने का तरीका भी औरतों से अलग है। पुरुष औरतों से अलग तरीके से स्मृतियों और परम्परा से प्रभावित होते हैं, यही कारण है कि औरतों का संसार को देखने का तरीका भिन्न है। आर्थिक क्षेत्र में आत्मनिर्भर होने के पश्चात भी उनके पास न तो उतनी शक्ति है और न उतनी पूंजी जिससे वह राजनीति, कानून, धर्म या व्यवसाय को प्रभावित कर सकें।

आत्मनिर्भर होने के पश्चात उसका प्रभाव शिक्षा के क्षेत्र पर इतना ही है कि वह किसी शैक्षिक उद्देश्य की प्राप्ति के लिए चंदा दे सकती है। कॉलेज की मरम्मत के लिए वुल्फ़ एक गिन्नी चंदा भेज सकती है। लेकिन शर्त यह है कि उस गिन्नी का प्रयोग ऐसे समाज और व्यक्तियों के निर्माण में लगाया जाए जो युद्ध रोकने में सहायक हों, लेकिन अपनी इस शर्त का विरोध भी वुल्फ़ स्वयं ही इस तर्क के साथ करती है कि शिक्षित व्यक्ति की बेटियां जिस प्रभाव का प्रयोग युद्ध के विरोध में कर सकती हैं, वह उपार्जन से ही संभव है और उपार्जन की क्षमता कॉलेज में शिक्षा प्राप्त करने पर ही आएगी, इसलिए कॉलेज की मरम्मत के लिए एक गिन्नी चंदा भेज दिया जाना चाहिए। निष्कर्ष के रुप में कहा जा सकता है कि शिक्षित औरतें युद्ध का विरोध अपने प्रभाव द्वारा ही कर सकती हैं।

वुल्फ़ युद्ध की समस्या को स्त्री के चेतन और अवचेतन से जोड़ कर भी देखती हैं। स्त्री का चेतन युद्ध विरोधी है, जबकि उसके अवचेतन में युद्ध का समर्थन भी उपस्थित है। इसका प्रमाण यह कि सन्

1914 में पहले विश्वयुद्ध के समय औरतों ने अस्पतालों में जा कर घायल सैनिकों की सेवा और प्रशंसा की, गोला–बारूद बनाने वाले कारखानों में काम किया; अपनी सौम्यता और सहानुभूति का प्रयोग युवाओं को यह प्रेरणा देने के लिए किया कि युद्ध करना वीरोचित है, इसलिए वे युद्ध में सम्मिलित हो जाएँ। महादेवी इस समस्या का कारण पुरुषों की उस भूमिका में देखती हैं जिसकी प्रतिक्रिया स्त्रियों में हुई। पुरुषों ने स्त्री को भावुक, दुर्बल और रक्षणीय कहा जिसकी प्रतिक्रिया में औरतों ने संकल्प लिया कि वे पुरुषों की तरह सबल बन कर हथियार उठाएंगी। अब पुरुष नारी को सेना में भर्ती कर रहा है जिससे भविष्य में रक्तपात बन्द करने, दूसरों को स्नेह से आप्लावित करने और मनुष्यता को बनाए रखने में स्त्री की कोई भूमिका नहीं होगी। ऐसा नहीं है कि इतिहास में ऐसी नारियां दिखाई नहीं देतीं जिन्होंने शस्त्र न उठाया हो। उनमें और आज की नारी में अन्तर है। अतीत में नारियों द्वारा शस्त्र उठाना आशंका से उत्पन्न क्षणिक आवेश था या सत्य की रक्षा का प्रयत्न था; आज नारी में करुणा, स्नेह, दया, ममता आदि स्वभाव–जात गुणों के स्थान पर पुरुषों जैसी पाश्विक प्रवृत्ति उत्पन्न करने का प्रयत्न कर रहे हैं और 'मातृ–जाति अन्य संतानों का गला काटने के लिए अपनी तलवार में धार देने बैठी है।'[6]

यह आश्चर्य का विषय है कि सन् 1942 में प्रकाशित महादेवी के निबन्ध में भारत की स्त्रियों की युद्ध संबंधी सक्रियता या उदासीनता का कोई उल्लेख नहीं है, जबकि यह द्वितीय विश्वयुद्ध का समय है।

प्रो. अशोक कुमार
हिन्दी विभाग,
जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू

प्रदीपसौरभ कृत मुन्नी मोबाइल में ग्लोबल मुन्नी

मुन्नी मोबाइल बक्सर से दिल्ली आयी हुई एक लड़की बिन्दु यादव की दास्तान है। यह बिन्दु यादव के मुन्नी में और मुन्नी के मुन्नी मोबाइल में धीरे–धीरे परिवर्तित होने की कहानी है। एक साधारण सी नौकरानी किस प्रकार ग्लोबल मुन्नी का रूप धारण करती है यही तथ्य उपन्यास में प्रस्तुत है।

उपन्यास के दो पात्र प्रमुखता से हमारे समक्ष आते हैं : पत्रकार आनन्द भारती और उनकी नौकरानी मुन्नी। मुन्नी तलाकशुद्धा पत्रकार आनन्द भारती का घर सम्भालती है, उनके कपड़े धोती है, उनके लिए खाना बनाती है और उनके गमलों के पौधों को पानी दे–देकर हरा भी रखती है। मुन्नी एक नौकरानी तो है लेकिन उसके दबंग स्वभाव ने आनंद भारती के मन में अपने लिए विशेष जगह बना ली है। जब दीवाली के गिफ्ट के रूप में वह मोबाइल की माँग करती है और न मिलने पर महीनों मुँह फुलाए रखती है तब आनन्द भारती उसकी जिद्द स्वीकार करते हुए उसके समक्ष जब मोबाइल प्रस्तुत

करते हैं उसी दिन से उसका नाम 'मुन्नी मोबाइल' पड़ जाता है। मोबाइल ''उसके सामने उसका सपना था। दुनिया को मुट्ठी में करने की चाह थी। उसने मोबाइल लेकर माथे से लगाते हुए कृतज्ञता व्यक्त की''– (1) यही मोबाइल मुन्नी के जीवन में परिवर्तन लाता है। इसी मोबाइल के हाथ में आने से उसमें महत्वाकांक्षाओं के पर लगते हैं और वह धीरे–धीरे सम्पन्नता की डगर पर चढ़ चलती है और यही डगर उसका जीवन तहस–नहस कर देती है।

मुन्नी मोबाइल ने बिना पढ़े लिखे जो सफलता प्राप्त की वह सराहनीय है। शिक्षा का उसके जीवन में कोई महत्व नहीं था इसलिए तो वह अपने साहब आनन्द भारती से बहस करती है कि शिक्षा का जीवन में कोई खास महत्व नहीं है। उसका कहना है ''आपने पढ़कर क्या कर लिया। न घर चलाया .... न बच्चे पाले, न अपनी लुगाई रख पाये..... न अपने माँ–बाप की इज्जत कर पाये। तुम्हारे जैसा बेटा पैदा कर उनकी जिन्दगी दुःखी है। अकेले खाते हो, कमाते हो। मैं अनपढ़ हूँ। पढ़ी–लिखी नहीं हूँ।''–(2) पूरा कुनबा मतलब मुन्नी मोबाइल की छः संताने और पति नन्दलाल। मुन्नी पैसे के पीछे भागती है यही पैसा उसकी मृत्यु का कारण बनता है।

मुन्नी मोबाइल को धीरे–धीरे आगे बढ़ते जाने की लत लग जाती है। शुरू में वह बर्तन साफ करने वाली नौकरानी है उसके पश्चात् उसने कई अन्य कार्य भी किए जैसे आनन्द भारती के घर से दो कामवालियों को प्रस्थापित कर दिया। आगे जाकर वह नौकरानियों के यूनियन की लीडर बन जाती है, कई दूसरी नौकरानियों की तकदीर लिखना उसके बाँये हाथ का खेल है, क्योंकि उसने ''एक छोटी–मोटी फौज़ खड़ी कर दी। काम दिलाने के नाम पर पहली तनख्वाह का वह आधा हिस्सा कमीशन के रूप में लेने लगी। कामवालियों की सप्लाई करने वाली एक छोटी–मोटी एजेन्सी की मालकिन के रूप में वह काम करने लगी थी''–(3) आजकल मुन्नी मोबाइल पर ही सब कार्य करती है। मोबाइल ही उसके जीवन में क्रांति लाता है।

मुन्नी नौकरानी का कार्य त्याग कर अधिक पैसे के लालच के लिए शशि खोखरा नामक डाक्टरनी के सम्पर्क में आती है और मनचले युवा जोड़ों के बच्चे गिरवाने में मदद करती है। डाक्टरनी चटकीली है, फड़ककर रहती है और लिपिस्टिक पाउडर पोतकर सोलह साल की दिखने की कोशिश किया करती है। वह अवैध गर्भपात कराती थी जिसका मूल्य मोटी रकम होती थी। 'गर्भपात में वह मुन्नी से सहयोग लेने लगी। धीरे–धीरे मुन्नी नर्स बन गई। मुन्नी ने इंजेक्शन लगाना भी सीख लिया।'4

यूनियन लीडर बनने के बाद मुन्नी मोबाइल साहिबाबाद में ज़मीन खरीदती है और मकान बनवाती है। सेकेंड हैंड बस खरीदकर वह गाजियाबाद दिल्ली रूट पर बस चलाती है और ब्लूलाइन बस की

मालकिन बन जाती है। मुन्नी बहादुर औरत थी इसलिए वह कभी किसी से डरती नहीं थी। पुलिस हो या नेता मुन्नी सबको अपने से नीचे समझती थी। इसलिए वह किसी की धमकी से नहीं डरती थी।

बस आपरेटरी छोड़कर मुन्नी, पैसों के लालच के कारण इस हद तक पहुँच जाती है कि एक दिन वह लड़कियाँ सप्लाई करने के धंधे की शुरूआत करती है। वह 'कालगर्ल का रैकेट' चलाती है। उसका मानना है 'पैसे को कोई साधारण आदमी सही–गलत काम किये बगैर हासिल नहीं कर सकता'– (5) इसी कारण वह हर बुरा मार्ग ग्रहण करती है, जो उसे सफलता की सीढ़ी जैसा प्रतीत होता है। मुन्नी मोबाइल का मानना है ''वर्तमान व्यवस्था इंसान को बुरा करने के लिए प्रेरित कती है। नैतिकता की उसमें कोई जगह नहीं है। मूल्य शब्द बेमानी हो गया है । पैसा हासिल करने का हर गलत रास्ता एक सच्चा रास्ता है।'' –(6) कालगर्ल का धन्धा करते हुए आपसी प्रतिद्वंदिता के चलते मुन्नी का मर्डर हो जाता है। मर्डर भी इस प्रकार उसके परिवार के समक्ष प्रस्तुत होता है कि वे सहम जाते हैं। एफ.आई. आर. भी ऐसे लिखी जाती है ''किसी नामालूम व्यक्ति से पता लगा कि मोहन नगर चौराहे के पास किसी औरत की लाश पड़ी है। ..... तफतीश से पता चला कि उस औरत के सीने पर दो गोली लगी हैं और उसने मौके पर ही दम तोड़ दिया है। लाश को पोस्टमार्टम के लिए भेज कर मर्डर की तफतीश शुरू कर दी गई है। ..... शिनाख्त के बाद जानकारी मिली कि लाश मुन्नी मोबाइल की है, जो पहले बस आपरेटर थी ..... और मारी गई।''–(7) मुन्नी की मृत्यु के बाद उसकी छोटी बेटी रेखा चितकबरी इस पूरे धन्धे को विरासत के रूप में संभालती है। मुन्नी मोबाइल अपने जीवन में चाहे रानी लक्ष्मीबाई रही हो या फूलन देवी लेकिन सत्य यही है कि संघर्ष करने वाले लोग आगे बढ़ते हैं। ऐसे ही लोग जीवन में कुछ पाते हैं, जिनके अन्दर कुछ करने का का जज्बा होता है। परन्तु बुरे काम का नतीज़ा बुरा होता है। कालगर्ल के रैकट के जरिये पैसा कमाकर मुफ्तखोरी करने वाली मुन्नी अंत में मृत्यु ही पाती है।

साधारण नौकरानी मुन्नी जब ग्लोबल बनती है तब स्वयं समाप्त हो जाती है। संघर्षशील होने के पश्चात, मोबाइल के कारण उसका जीवन अस्त–व्यस्त हो जाता है। वास्तव में मोबाइल ही उसके जीवन की त्रासदी बनता है। भूमण्डलीकरण के कारण उपजे नये यथार्थ मोबाइल की क्रांति मुन्नी का प्रतिरूप है।

सीमा चौहान

जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू

स्त्री धर्म अर्थात उसका दायित्व

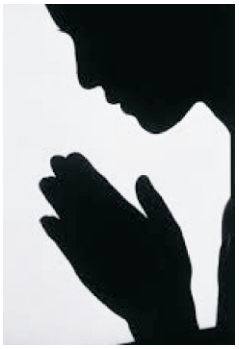

पुराणों के अनुसार विष्णु ने जब ब्रह्मा को सृष्टि–निर्माण का कार्य सौंपा तो ब्रह्मा ने सात ऋषियों का निर्माण करने के बाद मनु रूपी मानव स्वायम्भुव और ऋद्धा रूपी स्त्री शतरूपा का निर्माण किया और उन्हें सृष्टि को आगे बढ़ाने का कार्य–भार सौंपा। इस दृष्टि से स्त्री और पुरुष एक दूसरे के पूरक हैं। सृष्टि के विकास में दायित्व भार और शारीरिक संरचना के कारण स्त्री और पुरुष में कुछ समान और कुछ भिन्न गुणों का विकास हुआ।

वात्सल्य, स्नेह, श्रद्धा, ममता, दया, क्षमा, कोमलता बलिदान–भावना आदि गुणों का विकास स्त्री में हुआ। ये गुण स्त्री के सहज–स्वाभाविक गुण हैं। समाज में स्त्री के कन्या, पत्नी, माता, बहन, प्रेमिका आदि रूप मिलते हैं। इन विविध रूपों के अन्तर्गत स्त्री समाज के प्रति अपने दायित्वों का निर्वाह करती है।

शास्त्रों में स्त्री–धर्म के नाम से 'पतिव्रत्य' का ही निर्देश है। इस पतिव्रत्य के द्वारा नारी नर को पूर्ण बनाती है और मातृरूप से जगत को परम पवित्र चरित्रवान् पुरुषरत्न प्रदान कर भगवान के मंगल उद्देश्य की पूर्ति करती है। स्त्री घर की रानी है, घर में उसका एकछत्र राज्य है, पर वह घर की रानी है स्नेहमयी माता और आदर्श गृहिणी के ही रूप में। इसी कारण कहा गया है कि शिक्षकों से श्रेष्ठ आचार्य है, आचार्यों से श्रेष्ठ पिता है और पिताओं से अधिक श्रेष्ठ, वन्दनीय और आदरणीय माता है। स्त्री का जीवन क्षणिक वैशीयक आनन्द के लिये नहीं, वह तो जगत को प्रतिक्षण आनन्द प्रदान करने वाली स्नेहमयी जननी है। इसलिए पुरुष से हम उतने त्याग की कल्पना नहीं कर सकते जितना त्याग स्त्री सहज ही कर सकती है।

स्त्री में मातृत्व है, उसे गर्भधारण करना ही पड़ता है। प्रकृति ने पुरुष को इस दायित्व से मुक्त रखा है और स्त्री पर इसका भार सौंपा है। अतः उसकी शारीरिक स्वाधीनता सर्वत्र सुरक्षित नहीं है, परन्तु इस दैहिक परतन्त्रता में भी वह हृदय से स्वतन्त्र है, क्योंकि तपस्या, त्याग, धैर्य, सहिष्णुता, सेवा आदि सद्गुण सत्–स्त्री की सेवा में सदा लगे ही रहे हैं। पुरुष में इन गुणों को लाना पड़ता है, सो भी पूरे नहीं आते। स्त्री में स्वभाव से ही इन गुणों का विकास रहता है। स्त्री की यह सेवा महान है और केवल नारी ही इसे कर सकती है। इसी महान सेवा के लिए भगवान ने स्त्री का सृजन किया है।

मातृत्व स्त्री के जीवन का मंगलकारी और आत्मसंतुष्टि का पक्ष है। क्योंकि खुद स्त्री भी तब तक अपने को सम्पूर्ण नहीं समझती जब तक वह माँ नहीं बनती। मातृत्व प्राप्त स्त्री रूप समस्त संसार के कल्याण की क्षमता रखता है। माता के रूप में स्त्री को ममता की मूर्ति, स्नेह एवं वात्सल्य की साकार प्रतिमा कहा जाता है। अपनी संतान के लिए स्त्री बड़े से बड़ा त्याग करने में भी पीछे नहीं हटती। वह स्वयं दुख सहकर भी संतान को सुख पहुँचाने का प्रयास करती है। वह उन्हें अच्छे संस्कार और जीवन–मूल्य का ज्ञान देकर आदर्श इंसान बनाने का प्रयास भी करती है।

भारतीय परम्परा में संतान को सुसंस्कृत तथा नैतिक मूल्यों से युक्त अच्छा नागरिक बनाना माता का दायित्व समझा जाता है। संतान को घर के साथ जोड़ना तथा उसे उसका कर्तव्य बोध करवाना माता का दायित्व बन जाता है।

भारतीय परम्परा में पवित्रता नारी को महान, सर्वश्रेष्ठ व आदरणीय माना गया है। पति की यश सिद्धि एवं सकल मनोरथों की पूर्ति में यथाशक्ति सहयोग देना पत्नी का एकमात्र कर्तव्य है। भारतीय परम्परा से हम सीता को आदर्श पत्नी के रूप में मान सकते हैं क्योंकि वह पतिपरायण स्त्री थी। जिसने आजीवन पत्नी धर्म का पालन किया था। पति के साहचर्य से वन के दुखों में भी उसे सुख का अनुभव होता है। एक पतिव्रता स्त्री का धर्म है कि वह पति के सिवा अन्य किसी परपुरुष का स्पर्श न करें। प्राचीनकाल में सावित्री, दमयन्ती, शकुन्तला, गांधारी, द्रोपदी, सत्यभामा, सुभद्रा आदि स्त्रियों ने पतिव्रता धर्म का पालन किया है। जो हमारी भारतीय स्त्रियों के लिए आदर्श बन गई हैं।

'महाभारत' के शश्ठ खण्ड के 'अनुशासन' पर्व में पार्वती जी ने स्त्री धर्म का वर्णन करते हुए कहा है कि जिस स्त्री का आचरण उत्तम हो, जो परपुरुष में मन न लगाए तथा अपने पति को हमेशा देवता के समान समझती हो, वही स्त्री धर्मपरायण है तथा पतिव्रता के मन में पति के लिये जैसी चाह होती है, वैसी तो काम, भोग और सुख के लिए भी नहीं होती।

प्राचीनकाल से पत्नी के धर्म तथा मर्यादा का महत्व स्वीकार किया गया है। पत्नी के बिना गृहस्थी की कल्पना भी नहीं की जा सकती। स्त्री पुरुष का अर्धभाग होती है। इसलिए पत्नी को अर्धांगिनी कहा गया है। पतिव्रत को निभाना पत्नी का परम–धर्म माना गया है। पत्नी पति की शक्ति होती है। स्त्री अपनी योग्यता, कुशलता और सेवा से अपने दाम्पत्य जीवन को सुचारू रूप से चलाती हुई अपने पत्नी धर्म का पालन करती है। पार्वती, सीता आदि आदर्श नारियों का जीवन पतिव्रत धर्म का पाठ सिखाता है। पत्नी वाना एवं विलास की वस्तु न होकर सुख–दुख की सहभागिनी, धार्मिक कृत्यों की सहयोगिनी, परामर्शदात्री, अपनी ओजस्वी वाणी द्वार ऊँच–नीच के ज्ञान तथा कर्त्तव्य–भावना को जागरूक करने वाली सहचरी होती है। पत्नी गृहस्थी का मूलाधार होती है। इसलिए हमारे धर्म ग्रन्थों में पत्नी को पुरुष के घर की शोभा तथा कल्याण करने वाली बताया गया है। अतः पुरुष स्त्री के बिना और स्त्री पुरुष के बिना अधूरी होती है, दोनों मिलकर एक–दूसरे के जीवन को पूर्ण बनाते हैं।

पुराणों में बताया गया है कि वही पत्नी महान, सर्वश्रेष्ठ व आदरणीय है जो पति की सेवा करने में दासी के समान, रति–सुख देने में वेश्या के समान, भोजन देने में माता के समान और विपत्ति में राजभक्त मंत्री के समान होती है।

प्राचीनकाल से भाभी का रुप भी आदरणीय माना गया है, सीता भाभी के रुप में भी आदर्श स्थापित करती है। वह अपने देवरों को पुत्र–समान प्रेम करती थी। अतः भाभी का आर्शीवाद हमेशा अपने देवर रुपी पुत्र के लिए मंगलकारी होता है। अगर देवर की माता न हो तो भाभी के दायित्व और भी बढ़ जाते हैं। अपने दायित्वों का निर्वाह करने के कारण ही देवर के लिए भाभी सम्मान का पात्र रही है।

आज स्त्री में अपने दायित्वों का प्रायः अभाव दिखाई देता है, जिसके कारण आज परिवार अधिक बिखर रहे हैं। इसलिए स्त्री को अपने दायित्व का बोध होना अधिक आवश्यक है। क्योंकि स्त्री पुरुष को दायित्व–बोध करवाती है, अगर स्त्री ही अपने दायित्वों को भूल बैठी तो पुरुष का क्या होगा।

शान्ति कुमारी बाजपेयी कृत 'धुँधरू' उपन्यास में भी प्रायः स्त्री का आदर्श रूप ही देखने को मिलता है। इस उपन्यास में 'जीवा' ऐसी नारी–पात्र के रूप में सामने आई है जो बिना भेद–भाव किये अपने दत्तक पुत्र तथा पति के मित्र परिमल के आश्रय में रह रहे 'धुँधरू' और 'सागर' पर असीम ममता लूटाती

है। वह आदर्श पत्नी की भांति अपने पति का प्रत्येक परिस्थिति में सहयोग देती है। जीवा के अतिरिक्त परिमल की भाभी भी आदर्श नारी के रूप में दिखाई गई है, जो पति का सहयोग देने के साथ–साथ अपने देवर के जीवन को सफल बनाने के लिए आजीवन प्रयास करती है और इसमें सफल भी होती है। वह अपने देवर को पुत्र–समान प्रेम करती है। लेखिका ने अपने अन्य उपन्यासों में भी भारतीय संस्कृति की उदात्त चेतना को आत्मसात् करके मानवीय संवेदनाओं से युक्त पात्रों का जीवन्त चित्रण किया है।

अन्ततः कह सकते हैं कि यदि स्त्री–पुरुष दोनों अपने–अपने कर्तव्य–पालन में ईमानदारी से संलग्न रहे तो फिर देश में, समाज में ऐसी बुराई ही कौन–सी रह जाएगी, जिसे सुधारने का प्रयास किया जाए। एक स्वस्थ समाज बनाने के लिए अति आवश्यक है कि स्त्री–पुरुष को अपने दायित्वों का बोध हो और वे इन दायित्वों का पूर्ण रूप से निर्वाह करे।

पूजा शर्मा
जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू

बेटियाँ

ओस की नन्हीं सी बूँद होती हैं प्यारी बेटियाँ।
स्पर्श अगर खुरदरा हो तो रोती हैं प्यारी बेटियाँ।।

रोशन केरगा बेटा तो बस एक ही कुल को ।
दो–दो कुलों की लाज को ढ़ोती हैं बेटियाँ ।।

कोई नहीं है कम, न बेटा न ही बेटी।
हीरा है अगर बेटा तो सच्चे मोती हैं बेटियाँ।।

काँटों की राह पर अकेले चलती हैं बेटियाँ।
सबके लिए फूल बोती हैं बेटियाँ ।

विधि का विधान है, यही दुनिया की रस्म है।
मिट्टी से भरी धीर सी होती हैं बेटियाँ।।

सबकी लाडली, सबकी आज्ञाकारी ।
बहुत ही प्यारी होती हैं ये बेटियाँ।।

सुनीता
भा.स.औ.सं., जम्मू

ऐसे बन जाओ

इतने नरम न बनो तुम,
कि लोग तुम्हें खा ही जाएं ।
इतने गरम मत बनो तुम,
की कोई तुम्हें छू ही न पाए ।।

इतने सीधे न बन जाओ तुम,
की लोग तुम्हें मुर्ख ही बनाते जाएं।
इतने नीरस न बनो कि,
लोग तुम से उबकते जाएं।।

इतने छिछोरे मत बनो कि,
लोग तुम को मान देना ही भूल जाएं।
इतने सस्ते मत बनो तुम,
कि लोग तुम्हारा मोल ही न समझ पाएं।।

बस तुम ऐसे बन जाओ प्यारे कि,
लोग तुम्हें अपनी ऑखों में बसाते जाये,
अपना बनाते जाएं।

सुनीता
भा.स.औ.सं., जम्मू

बेटी

बहन, बेटी माँ, पत्नी या दादी, नानी
कल पछताओगे,
अगर कीमत उसकी न जानी।
आज हालात किए तुमने हैं ऐसे
अपनी ही जननी को,
अपमानित करते हो कैसे–कैसे।
बेटी का हक न देते उसको
कहते हो पराया धन,
बेटा करेगा कुल का बढ़ावा
और नाम रौशन।
बहन पर हक पूरा पिता–भाई का
जब तक न छोड़े मायका।
देकर घर की रौनक को कन्यादान में
समझे पिता खुद को धन्य,
समाज की झूठी शान में ।
कर जाती है घर सूना,
बे–रौनक हर कोना–कोना,
तब खलता घर का सूनापन,
खाली–खाली लगता आँगन।।
जाकर दूजे घर,
करती हर मुमकिन कोशिश,
जीत ले सबका मन,
पूरी करे सबकी ख्वाहिश
भाए सास–ससुर, ननद, देवर को
अपना ले ये पिया–घर उसका
अगर दहेज के ना भूखे तो,
एक आस बेटा तो दे दो
दे दो एक नया मेहमान,
जे बढ़ाए कुल और शान ।
और अगर जो आ जाए बेटी तो,
जो थी कल तक प्राण प्यारी,
हो जाते उसके प्राणों के प्यासे।
उफ न करती सबकुछ सहती,
सारा जीवन चलती रहती,
बेटा मांगने वाले न सोचें,
लाकर किसी के घर की बेटी,
मांगे उससे कुल का दीपक,
कल अगर न बचेगी बेटी तो,
कौन होगी उस दीपक की ज्योति,
कैसे बढ़ेगा अब कुल आगे,
अब खोल निद्रा ओ इंसान अभागे।
समझ बेटी की कीमत,
और दे उसको उसका स्थान,
खड़ी जब वो साथ रहेगी,
बढ़ेगा इसमें तेरा भी मान ।।

प्रिया कंवर,
वैज्ञानिक

राम-राज्य साकार कैसे करे ?

प्राचीन काल से ही भारत भूमि ऋषि–मुनियों की तपो भूमि रही है। यह सब उन्हीं के तप का प्रतिफल है कि भारतवर्ष विश्व के मानचित्र पर आर्यवर्त के नाम से सर्व विख्यात हुआ। समय की मांग के अनुसार उसमें वेद, उपवेद, उपनिषद्, शास्त्र, वेद भाष्य, ऋचाएं, रामायण और गीता जैसे अन्य अनेकों धर्म–ग्रंथों की संरचनाएं हुई और उनका श्रृंखलाबद्ध प्रचार–प्रसार भी हुआ।

देवभूमि भारत में अगर न्यायप्रिय राम–राज्य की स्थापना हुई थी तो उससे पूर्व अन्याय विरुद्ध राम का रावण के साथ भयंकर युद्ध भी हुआ था। कहते हैं रावण के यहां एक लाख पूत और सवा लाख नाती थे, पर अंतिम समय में, उसके घर दीपक जलाने वाला कोई भी शेष नहीं रहा था। भयावह होता है, युद्ध–परिणाम!

जो राम–राज्य हममें से किसी ने देखा नहीं, वह हमें अब भी घर–घर में उपलब्ध जीवंत रामायण रूप में पढ़ने व विचार करने हेतु अवश्य मिल जाता है। रामावतार हुए युग बीत चुके हैं परन्तु श्रीराम जी के प्रति हमारी दृढ़ आस्था आज भी ज्यों की त्यों बनी हुई है, वे मर्यादा पुरुषोत्तम थे। उन्होंने अपने जीवन काल में, हर कदम पर मर्यादाएं सुनिश्चित की थी, जिनके अंतर्गत उनसे हमें प्रेरणा मिलती है। वह हमारे जन मानस पटल पर अंकित है।

मातृ देवो भवः पितृ देवो भवः
गुरु देवो भवः अतिथि देवो भवः

अर्थात् माता देव तुल्य है, पिता देव समान है। गुरु देव तुल्य है और अतिथि भी देव समान हैं। ऐसे आदर्श वक्य अगर हमें कहीं मिलते हैं तो वह रामायण ही है जो देवभूमि भारतवर्ष में, हमारे पास घर–घर में विद्यमान है।

भले ही आज भारत में राम–राज्य न हो, ढूँढने पर शहर, गाँव, घर या परिवार में ऐसे सुसंस्कृत बच्चे अवश्य मिल जाते हैं जो अपना कोई भी कार्य आरम्भ करने से पूर्व अपने माता–पिता का आर्शीवाद लेना कभी भूलते नहीं हैं। वे उनके आशीर्वाद को साक्षात् ईश्वर का आशीर्वाद समझते हैं। धन्य हैं वह अभिभावक जिन्हें ऐसी संतान प्राप्त हुई हैं। धन्य हैं वह गुरुजन जिन्हें ऐसे विद्यार्थी मिले हैं और धन्य हैं वह गृहस्थी जिनके घरों में अतिथि – साधु और संतो ंके पवित्र चरण–कमलों की धूली पड़ती है और वहां उनका हार्दिक सम्मान होता है।

भारतवर्ष राम–राज्य विहीन है इसलिए उसकी पुनर्स्थापना हेतु हम सभी को आज ही से अपने–अपने कार्य क्षेत्रों में सक्रिय हो कर प्रयास अवश्य करने होंगे।

घर, परिवार में अभिभावकों के द्वारा पवित्र आत्माओं का अह्वान करके सुसंस्कृत बच्चों को जन्म देना होगा। उन्हें परंपरागत उचित शिक्षा प्रदान करके योग्य एवं गुणवान बनाना होगा।

आध्यात्मिक गुरुजनों को देशभर में, आठ–दस छोटे–बड़े गाँवों के, विभिन्न समूह बनाने होंगे और

प्रत्येक समूह के लिए परंपरागत एक–एक गौशाला सहित गुरुकुलों की स्थापना करनी होगी ताकि गुरुजनों के सान्निध्य में प्रतिभाशाली संस्कारिक बच्चों का भविष्य उज्ज्वल हो सके।

राजगुरु, शिक्षक एवं आध्यापकों को अपने पुरुषार्थी शिष्य एवं शिक्षार्थियों के साथ मिल–बैठकर स्वेच्छिक एवं रूचिकर विषयक ज्ञान–विज्ञान का पठन–पाठन करना होगा ताकि संयुक्त प्रयास से प्रतिभाशाली शिष्यों की योग्यता में निखार आ सके।

परंपरागत वैदिक ज्ञान–विज्ञान के प्रचार–प्रसार हेतु अतिथि–साधु और संतों को बहते पानी की तरह निरंतर भू–भ्रमण करते रहना होगा। भू–भ्रमण करते हुए उन्हें नए–नए अनुभव प्राप्त होंगे। उनके द्वारा गृहस्थियों को वैदिक ज्ञान के दिव्य प्रकाश से प्रकाशित करना होगा। इससे गृहस्थियों को वास्तविक सुख–शांति प्राप्त होगी।

इस प्रयास से अगर गाँव–गाँव में आदर्श परिवार बनते हैं तो एक दिन हर गांव में स्वयं ही ग्राम स्वराज भी होगा और जब गाँव–गाँव में ग्राम स्वराज होगा तो निश्चित ही भारतवर्ष में राम–राज्य की कल्पना भी साकार होगी।

भले ही देशभर में आंतरिक और ब्राहय संकटों के बादल मंडरा रहे हैं। देश के दुश्मन राष्ट्र को खंडित करने के लिए अपने मन, वाणी और कर्म से कृत संकल्प हैं। राष्ट्र को कदम–कदम पर भारी अपमान और विपदाओं का सामना करना पड़ रहा है। भारतवर्ष अंग्रेज शासित नहीं रहा है, फिर भी पैंसठ वर्ष बीत जाने के पश्चात्, वह आज भी उनकी नीतियों, व्यवस्थाओं और प्रावधानों का बंधक बना हुआ है। देश की जनता जाति, धर्म, ऊंच–नीच, आपसी फूट, लिंगादि भेद–भावों से ग्रस्त है। संपूर्ण देश महंगाई, भ्रष्टाचार और नारी अपमान की ज्वलंत ज्वाला से धू–धू करके जल रहा है। परन्तु भारतीय युवा–वर्ग की अपनी लगन और कड़ी मेहनत से प्रायः सुप्त पड़ी तरुणाई फिर से अंगड़ाई लेने लगी है। उसमें ज्ञान, प्रेम, समर्पण, न्याय और धैर्य जैसे सद्‌गुणों का प्रादुर्भाव होने लगा है। समय आ गया है, अब बुराई के रावण का, युवा–वर्ग – राम संहार अवश्य करेगा।

मान लो, मेरे चार बच्चे हैं। पहला बेटा संत है तो दूसरी बेटी सैनिक, तीसरा बेटा व्यापारी है तो चौथी बेटी इंजीनियर। कर्म के आधार पर भारतीय वर्ण–व्यवस्था में संत को ब्राह्मण, सैनिक को क्षत्रिय, व्यापारी को वैश्य और इंजीनियर को शूद्र कहा जाता है। अगर कोई अहंकारी, स्वार्थी व्यक्ति या शासक जाति, धर्म, ऊंच–नीच, लिंगादि भेद–भावों के आधार पर उन्हें मुझसे अलग करने की चेष्टा करे तो क्या मैं कभी उसे स्वीकार करूंगा ?

नहीं तो आइए! हम सब मिलकर जन–परिवार, गांव और राष्ट्रहित के कार्य करके दूसरों के लिए राम–राज्य की ओर जाने का मार्ग प्रशस्त करें।

चेतन स्वरूप भार्मा
केन्द्रीय भूमि जल बोर्ड, जम्मू

काँटे की गड़न

मीरा सोम्या की चचेरी बहन है। उम्र में लगभग उसके बराबर ही है। जबसे मीरा कालेज के टुअर से वापिस आई है सोम्या को ज़रा भी नहीं सुहाती। मीरा हैसियत में उससे कम है। न ढंग का खाना पीना, न ही पहनना ओढ़ना, वह यह सब नहीं जानती और न ही उसके परिवार की इतनी हैसियत थी कि इन मामलों में वह उसकी बराबरी कर सकती। बहुत कम हैसियत वाली उससे पहले आऊट ऑफ स्टेट हो आई थी यह उससे हज़म नहीं हो रहा था। चलो तंगहाली में पढ़ाई कर रही थी इतना सब ठीक था। इस बार जब वह उसके साथ चण्डीगढ़ के रोज़गार्डन के विषय में बताने लगती है तो वह टी.वी. पर कलर्स चैनल लगा देती है। बीच में टोक कर वह उतरन का अर्थ क्या होता है ? सिर्फ दूरदर्शन चैनल देखने वाली मीरा कहती है नहीं। जैसे तुम मेरे दिये गए पुराने ड्रैस पहन कर टुअर पर गई थी उसे उतरन कहते हैं। वह चुपचाप बिना कुछ कहे चली जाती है। शायद उसका हाथ रोज गार्डन के रोज़ की बजाए काँटे पर पड़ गया था।

ममता कुमारी
जम्मू

''एक बार चितवन तो बदलो''

स्त्री पुरूष के परस्पर समर्पण भाव में ही दामपत्य जीवन की वाटिका पुष्पित पल्लवित और फलवती हेती है। पुनश्च नारी पुरूष के लिए विधाता का मंगलवरदान है। प्रस्तुत रचना में कवि ने अत्यन्त कोमल भावों के द्वारा दाम्पत्य जीवन का अनुकरणीय आदर्श प्रस्तुत किया है; एतदर्थ **'निर्मल जी'** को राशि–राशि मंगलकामनाएँ।

एक बार चितवन तो बदलो, सारी पीड़ा दूर करूँगी।

प्रियतम तुम विश्वम्भर मेरे,
मैं हूँ पद्मासना तुम्हारी।
तुम विचार मेरे इस उर के,
मैं हूँ भाषा मधुर तुम्हारी।।

हे विचार मुस्कान छोड़ दे, भर–भर रस के प्याले दूँगी।

एक बार .....

प्रियतम आप तर्क है मेरे,
मैं सुकुमारी एक भगवान।
तुम ही रचयिता हो इस उर के,

मैं हूँ एक तुम्हारी रचना।।

नित्य नई कल्पना सुकोमल, प्रियतम तुम को दान करूँगी। एक बार .....

तुम हो केवल धर्म हमारे,
मैं परिशान्त तुम्हारी इच्छा।
तुम जीवन के पाठ्यक्रम हो,
मैं जीवन की एक परीक्षा।।

इसी परीक्षा में तुम को भी लेकर के उत्तीर्ण करूँगी।
एक बार .....

हे प्रियतम तुम रत्नाकर हो,
मैं परिशान्त तुम्हारी इच्छा।
तुम जीवन के पाठ्यक्रम हो,
मैं जीवन की एक परीक्षा।।

इसी परीक्षा में तुम को भी लेकर के उत्तीर्ण करूँगी।
एक बार .....

हे प्रियतम तुम रत्नाकर हो,
मैं हूँ उसका एक किनारा।
जहाँ नाचती हुई तरंगे,
दे जाती है भेद तुम्हारा।।

आप मधुर संगीत हमारे–सप्तम स्वर का दान करूँगी।
एक बार .....

तुम हो धनिक, तुम्हारा धन हूँ,
तुम योद्धा, मैं शक्ति तुम्हारी।
तुम हो एक अमर तरू मेरे,
मैं हूँ पुष्पित लता तुम्हारी।।

लता सदा अवलम्बन चाहे, अतः तुम्हें सम्वरण करूँगी।
एक बार चितवन तो बदलो सारी पीड़ा दूर करूँगी।।

श्री कृष्ण 'निर्मल'
राष्ट्रीय कवि, दिल्ली

गीत

ऋतु बसन्त की बनकर आना, मेरे जीवन के उपवन में।।
प्रतिबिम्ब प्रीति का बन जाना तुम, मेरे सूने मन दरपन में।।
हर पल रहे दरश अभिलाषा।
होती यही प्रेम परिभाषा।।
मिलन असम्भव ना हो जाऐ, मैं निशिदिन इस उलझन में।
ऋतु बसन्त की बनकर आना, मेरे जीवन के उपवन में।।
बोल तुम्हारे सुर का संगम।
कंगना–पायल की धुन सरगम।।।
मेरे गीतों को स्वर दे दो, कोयल गाये ज्यों मधुवन में।
ऋतु बसन्त की बनकर आना, मेरे जीवन के उपवन में।।
रात चाँदनी रजनीगन्धा।
रात की रानी पवन सुगन्धा।।
चन्द्र किरन बनकर आना तुम, मेरे जीवन अंधियारे आँगन में।
ऋतु बसन्त की बनकर आना, मेरे जीवन के उपवन में।।
प्रेम है सत्यम्, षिवम्, सुन्दरम्।
ज्योति कलश हो, तुम ही स्वयम्।।
पूजा थाल सजाकर आना, समझके मन्दिर मेरे मन में।
ऋतु बसन्त की बनकर आना, मेरे जीवन के उपवन में।।
मन पाती के ढाई आखर।
पावन प्रेम सुधारस सागर।।
मैं कान्हा राधा बन जाना, पावन मन के वृन्दावन में।
ऋतु बसन्त की बनकर आना, मेरे जीवन के उपवन में।।

डॉ. राजेन्द्र यादव, निदेशक,
सामाजिक न्याय एवं ग्रामोदय सेवा संस्थान,
शिरोहाबाद (उ.प्र.)

हमारे नैतिक मूल्य : कल आज और कल

नैतिकता के अभाव में मानव जीवन सारहीन हो जाता है। अतः मानव के सम्पूर्ण विकास के लिए नैतिकता परमावश्यक है। क्योंकि नैतिक आचरण से मनुष्य ससम्मान पूर्णता की ओर अग्रसर होता हुआ पूर्णत्व को प्राप्त होता है। अतः हमें अपने नैतिक धर्माचरण के प्रति सर्वदा सतर्क रहना चाहिए।

यदि हम भूतकाल के भारतीय समाज के निर्धारित नैतिक मूल्यों पर विहंगम दृष्टिपात करें तो हमें ज्ञात होता है कि इतने पवित्र आदर्श विश्व के किसी भी साहित्य, समाज व राष्ट्र में नहीं मिलते। हमारे यहाँ धर्म की झलक कर्म में तथा कर्म का प्रतिबिम्ब धर्म में परिलक्षित होता रहा है। अतः यहाँ धर्म–कर्म में जो एकरूपता का संगम दिखाई देता था, वह सम्पूर्ण विश्व में अगोचर था। हमारा हर सामाजिक प्रतिक्षण इस प्रकार सतर्क रहता था कि अपनी माता के अतिरिक्त अन्य नारियाँ भी उसके लिए माता के समान ही पूज्या होती थीं। इसका प्रतिपादन मनु महाराज ने मनुस्मृति में 'मातृवत परदारेशु' कह कर किया है। अपनी बहन के अतिरिक्त सभी लड़कियाँ अपनी बहन के समान ही पूज्या मानी जाती थीं। इस सन्दर्भ में मुगल सम्राट हुमायूँ तथा राजपूतानी कर्मवती के आदर्श रक्षाबन्धन का उदाहरण सम्पूर्ण संसार के लिए अनुकरणीय है। यथा –

भारत में जबतक यह राखी का त्यौहार मनेगा।

भाई और बहन का नाता तबतक अमर रहेगा।।

वीर हुमायूँ अमर रहेगा जबतक कोविद वाणी।

और तभी तक अमर रहेगी कर्मवती क्षत्राणी।।

नैतिक आदर्श का उदाहरण हमें महाभारत में भी उस समय मिलता है, जब स्वर्ग में अर्जुन इन्द्र की सभा में अप्सरा उर्वशी को देखते हैं, तब यह जानकर मंत्रमुग्ध हो जाते हैं कि उर्वशी उनके वंश की जननी है; ऐसा मानकर उसका अभिवादन करते है। उर्वशी सम्पूर्ण रहस्य को जान लेने पर भी अर्जुन के समक्ष अपनी कामवेदना शान्त करने का प्रस्ताव रखती है जिसे अर्जुन लज्जावनत होकर अस्वीकार करते हुए कहते है –

यथा कुनती च माद्री च राची चैव ममानधे।

तथा च वंश जननी त्वं हि मेडव्य गरीयसी।।

गच्छ मूर्ध्ना प्रपन्नोडस्मि पादौ ते वरवर्णिनि।

त्वं हि में मातृवत् पूज्या रक्ष्योऽहं पुत्रवत् त्वया।। श्लोक 28, 29 वनपर्व

हे माता! तुम मेरी माताओं के समान पूज्या हो; ऐसी बातें मुझसे मत कहो, मुझे भय लग रहा है, मुझे अपना पुत्र मानकर मेरी रक्षा करो।

इसी प्रकार परमपूज्य ग्रन्थ गीता में भी मनष्य को अपने नैतिक को पालन करने के लिए सुन्दर शब्दों में उपदेश दिया है –

स्वधर्मे निध्नं श्रेयः परधर्म भयावहः। श्लोक 35 अध्यय–03 अर्थात् अपने धर्म में मनुष्य का निधन

श्रेयस्कर होता है। दूसरे के धर्म में निधन भयकारक होता है। यहाँ पर धर्म का आशय जगत् में प्रचलित धर्म व सम्प्रदायों से नहीं है, अपितु इसका संकेत मनुष्य के नैतिक आचरण व कर्त्तव्यों से ही है। यही कारण है कि भूतकाल में सम्पूर्ण समाज में प्रचलित सम्बन्धों का निर्वहन आचरणबद्ध था।

महाराज शिवाजी का उत्कृष्ट नैतिक चरित्र आज भी हमारे लिए प्रेरणा का स्त्रोत है। युद्ध में प्राप्त एक यवनरूपसी गौहरबानू को शिवाजी के सैनिक जब उनके पास लाकर उनकी रानी बनाने का आग्रह करते हैं तो उस समय भयभीत शिवाजी से कहती है। ''क्या यह कौरवों की सभा हैं जहाँ द्रौपदी को भरी सभा में अपमानित किया गया था?'' इस पर शिवाजी कहते हैं, ''हे माता! ऐसा मत कहो–मत कहो! शिवाजी एक विलासी कुत्ता नहीं है, उसके माता हैं और बहन भी है, यदि मेरी माता सुन्दर होती तो मैं भी सुन्दर होता। अतः आप निर्भय हों।'' इन आदर्श शब्दों के साथ शिवाजी अपने सैनिकों के संरक्षण में गौहरबानू को उसके संरक्षक के पास भिजवा देते हैं। यह हिन्दू संस्कृति तथा साम्प्रदायिक एकता का सर्वोत्तम मौलिक उदाहरण है।

आर्य समाज के प्रवर्तक व वेदों वाले ऋषि के नाम से विख्यात महर्षि दयानन्द के समक्ष जब एक स्त्री उनसे उन जैसा ही पुत्र प्राप्त करने का निवेदन करती है तब ऋषिवर अत्यन्त शालीनता के साथ उत्तर देते हैं, ''हे माता! तुझे मुझ जैसा पुत्र ही तो चाहिए, तुझे इसके लिए कष्ट उठाने की क्या आवश्यकता है? तू मुझे ही अपना पुत्र मान लें।'' और स्त्री स्वयं को धन्य मानकर चली जाती है। यह नैतिक चरित्र का विश्ववन्दनीय उदाहरण है।

आज समाज में मानव मूल्यों का अधः पतन द्रुतगति से हो रहा है। समाज में प्रतिपल अनहोंनी व घिनोंनी दुर्घटनाएँ घट रही हैं। आज लोगों द्वारा गीता के आदर्श वाक्य –स्वधर्मे निधनं श्रेयः' को पूर्णतः विस्मृत कर दिया गया है। इसकी दुष्परिणिति के कारण ही पिता पुत्री के साथ, भाई–बहन के साथ, मामा भानजी के साथ, गुरू शिष्याओं के साथ और धर्मोपदेशक चेलियों के साथ पतिधर्म का निर्वाह करके नैतिक चरित्र व मर्यादाओं के कसाई हो रहे हैं। विदेशी पर्यटक व आस्थावान महिलाएं भारत को आध्यात्मिक गुरू मानकर भारतीय संस्कृति की पुजारिन बनने के लिए उत्कृष्ट व जीवन्त आशा से भारत आती हैं और यहाँ आने पर दरिन्दों द्वारा उनका सर्वस्व लूट लिए जाने पर भारी मन से असहाय होकर स्वदेश लौट जाती हैं। यह स्थिति अत्यन्त वीभत्स व निन्दनीय तो है ही हृदयविदारक व चिन्तनीय भी है।

आज हमारी किशोर पीढ़ींहठी, निरंकुश व स्वेच्छाचारी होती जा रही है, उसे न अब केई रोकने का प्रयास कर रहा है और न वह स्वयं ही रूकने वाली हैं यदि यही स्थिति अनवरत रही तो नैतिक आदर्श, मर्यादाएँ यहाँ तक कि रक्षाबन्धन जैसे शब्द व्यावहारिक नहीं अपितु कोरी कल्पना व शब्दकोष के शब्दमात्र ही रह जायेगे। वर्तमान समय में रक्षाबन्धन का स्वरूप कुछ इस प्रकार है–

अब करील से समता होती केसर के बागों की।

पैसों से समानता होती राखी के धागों की।।

प्रेमसाधना रूप वासना का लेकर है काली।

इसीलिए ही सूख रही है सावन की हरियाली।।

यह विश्वविदित है कि हम भौतिक विकास की ओर निरन्तर प्रगतिशील हैं, पर आध्यात्मिक व नैतिक आदर्श उच्चकोटि की पुस्तकीय विद्वता से कहीं अधिक श्रेष्ठ है। अतः वह समाज में वन्दनीय है। नैतिक आदर्श से व्यक्ति की जीवन शैली सात्विक होती है। परिणामतः व्यक्ति का दामपत्य जीवन तो सुखमय होता ही है साथ ही दूसरों के लिए भी अनुकरणीय होता है।

आज हम देखते है कि व्यक्तियों में विद्वता की कमी नहीं है पति–पत्नी अखिल भारतीय प्रशासनिक परीक्षा उत्तीर्ण कर भारतीय व विदेशी सेवा में अपनी सेवाएं दे रहे है। पर नैतिक आदर्शों के अभाव में उनका दामपत्य जीवन सुखमय नहीं है। उनमें से कुछ विवाहोपरान्त सम्बन्ध विच्छेद कर लेते है और कुछ तो ऐसे है कि माता–पिता बनने के बाद दिल के टुकड़ों को अनाथ कर अपनी क्षुद्रकामवासनाओं की पूर्ति हेतु स्वच्छन्द हो जाते है। फिर ये अनाथ बालक जर्जर शरीर वाले दादा–दादी व नाना–नानी के प्रकम्पित हाथों का सहारा लेकर पलते हैं या फिर अनाथालयों में शरणागत होकर अपने माता–पिता कृत पापों का दुष्परिणाम भोगने के लिए बाध्य होते है। आह! ऐसे अनैतिक विद्वानों के लिए 'करवाचौथ' की कोई कीमत नहीं होती। दामपत्य जीवन का यह घिनोंना सम्बन्ध विच्छेद 'तलाक' शब्द का पर्याय है जो कि पूर्णतः आयातित है। भारतीय ग्रन्थों में 'तलाक' शब्द की कहीं भी दुर्गन्ध नहीं है। अब 'कल' अर्थात् भविष्यकाल में हमारे नैतिक मूल्य किस प्रकार के होंगे ? इस सन्दर्भ में कुछ लिखने से पूर्व मेरी लेखिनी प्रकम्पित हो रही है। यद्यपि अनैतिक लोगों को सुधारने के लिए हमारी पुलिस कड़ाई के साथ अथक प्रयास कर रही है, माननीय न्यायालय अपराधियों को न्यायसंगत सजाएँ सुना रहे हैं फिर भी कदाचार में निरन्तर वृद्धि हो रही है। ऐसा क्यों हो रहा है ?इसका समाधान क्या है ? मेरे मतानुसार समाज के इस वीभत्स पतन के लिए सम्पूर्ण समाज ही दोषी है और इसका समाधान अत्यन्त साधारण होते हुए भी अत्यन्त असाधारण है। क्योंकि सामाजिकों के प्रयास सार्थक नहीं हैं। वर्तमान पीढ़ी को सदाचार की शिक्षाओं से दूर किया जा रहा है।

हमारे संस्कृत ग्रन्थों में नैतिक आदर्श भरे पड़े है। ये अनमोल आदर्श हितोपदेश, सदाचारोपदेश, सुभाशितानि, नीतिवाचनानि तथा स्मृतियों में अत्यंत सरलता के साथ संचित है। इसके अतिरिक्त अन्य संस्कृत ग्रन्थों के अनुवाद भी विश्व की सभी भाषाओं में किये जा चुके है और वहाँ के लोग अपेक्षित लाभ उठा रहे हैं फिर हमारी वर्तमान पीढ़ी इस लाभ से वंचित क्यों हो ? हमारे नीति निधारिकों को चाहिए कि वे संस्कृत के अमूल्य श्लोकों व दृष्टान्तों को पाठ्यक्रमों में रखें। शिक्षण का वर्ग कोई भी हो यह मेरा विनम्र सुझाव है। इसके साथ ही वैदिक मंत्र ''आ नो भद्रा कृतवो यन्तु विश्वतः' अर्थात् हे! इन्द्र भगवान हमें संसार में सब ओर से अच्छे विचार प्राप्त कराओ' को चरितार्थ करते हुए किसी भी ग्रन्थ की श्रेष्ठ शिक्षाएँ ग्रहण की जा सकती हैं।

परिवार नैतिक शिक्षा प्राप्त करने की प्रथम पाठशाला होती है। हमें बाल्यकाल से ही माता–पिता तथा परिवार के सदस्यों द्वारा पारिवारिक सम्बन्धों की मर्यादाएँ सिखलाई जाती थी। माताएँ बताया करती थीं कि हमें भी मुख से असत्य व अपशब्द भाषण नहीं करना चाहिए, बहन से पैर छू जाने पर पाप लगता है तथा कान पक जाते हैं। हमें पुस्तकों को भी कभी पैर से स्पर्श नहीं करना चाहिए, घर के बड़ों का सम्मान करना चाहिए। इस प्रकार ही पड़ोस तथा गाँव के लोगों के साथ अपेक्षित सम्बन्धों का ज्ञान करा दिया जाता था। परिणामतः शारीरिक विकास के साथ–साथ ही नैतिक संस्कार विकसित होते जाते थे।

यही कारण था कि पुरातन पीढ़ी का हर स्त्री–पुरुष नैतिक विचारों से ओत–प्रोत था। पितृशक्ति की मातृशक्ति में पूर्ण श्रद्धा थी और मातृशक्ति को पुरुषशक्ति पर पूर्ण विश्वास था।

अब भी नीति निर्धारक जाग जाएँ तो बात बन सकती है फिर भी पूर्णवत् बात बनने में सदियाँ लग जायेगी।

श्रीकृष्ण निर्मल
दिल्ली

मैं धन्य हो गई मित्रो

मैं धन्य हो गई मित्रों मैंने इस धरती पर जन्म लिया
जग में इस जैसे फूल नहीं, होंगे तो मकरन्द नहीं होगा।
बिन पिये जिसको अलि मस्ती में गा पाते होंगे छन्द नहीं,
कहाँ मिलेगी बच्चों को रंग–बिरंगी तितली रानी
कहाँ मिलेगा कल कल करता ऐसा झरनों का पानी
धरती का स्वर्ग कहे दुनियाँ, ऐसा विधि ने कश्मीर दिया
मैं धन्य हो गई मित्रो .....
प्राकृतिक सम्पदा मित्रो जग में भारत जैसी कहीं नहीं
भण्डार खनिज का लिए कोख में ऐसी धरती कहीं नहीं
निज धोता जिसके सिन्धु चरण जो सबकी है जीवनदाता
हम सब उसके प्यारे बेटे वह सबकी है भारतमाता
धरती पुत्रो की कौन कहे देवों ने भी गुणगान किया
मैं धन्य हो गई मित्रो .....

इतिहास हमारा चोटी का और प्यारे पर्वत चोटी के
अमृत सलिला सरिताएँ और नीले सागर चोटी के
गीता रामायण चोटी की और वेद यहाँ के चोटी के
नारियाँ यहाँ की चोटी की और पुरुष यहाँ के चोटी के
चोटी वाले चाणक्य गुरू ने सिख को राजा बना दिया
मैं धन्य हो गई मित्रो.....
कलम शक्ति ही मिटा सकेगी मानव के दिल की दूरी
फिर जाँच न पायेगी कोई क्या केसर है क्या कस्तूरी
सब लोग यहाँ अपने होंगे कोई न पराया होगा
जो बैर भाव फैले जग में उनका शीघ्र सफाया होगा
इस भारतीय बहुरंगी संस्कृति का सबने गुणवान किया
मैं धन्य हो गई मित्रो .....

कु. ऋचा निर्मल
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

अकेलापन

झूठ तो झूठ है अकेलापन
अकेलापन सुखद अहसास है..
इससे कोफ्त नहीं होती
यह तो लोगों को
परखने का साधन है
मन को, अनुभवों को
विस्तार मिलता है
अकेलापन खुद को खुद से
सिखाता है प्यार करना
भीड़ में खड़ा व्यक्ति
भले ही भ्रम में रहे
पर सच यह है कि वह
खुद में भी अकेला है
कोई किसी के पास होने का
दम नहीं भर सकता
परछाइं तक साथ नहीं देती
अमावस की मानिंद
अंधेरे में खो जाती है
अकेलापन!
कई भ्रमों को तोड़ता है
खुद को खुद से जोड़ता है .....

भूमिका वाधवा
शोध अध्येता

दलित विमर्श और 'हंस' की कहानियाँ

भूमण्डलीकरण के इस युग में साहित्य में यह दौर विमर्शों का दौर है। समकालीन विमर्शों (स्त्री विमर्श, आदिवासी विमर्श, साम्प्रदायिक विमर्श आदि) में दलित विमर्श प्रभावशाली विमर्श के रूप में उभरा है।

दलित शब्द का सामान्य अर्थ है – दबाया गया, गिराया गया, शोषित, बहिष्कृत, उपेक्षित आदि। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में समाज के उस वर्ग को दलित कहा जाता है जो समाज के सशक्त सत्ताधारी वर्ग द्वारा दबाया और कुचला गया हो। वे जातियां ही दलित हैं जो अछूत रही हैं तथा र्स्वदा सवर्णों द्वारा शोषित की जाती रही हैं। दलित शब्द उन जातियों को सामाजिक पहचान देता है जिनकी पहचान इतिहास के पृष्ठों से सदा–सदा के लिए मिटा दी गई थी।

दलित विमर्श उन तमाम मान्यताओं, धारणाओं को खारिज़ करता है जो मनुष्य–मनुष्य में भेद कर, मानवीय मुक्ति तथा मानवीय समता के रास्ते में किसी भी प्रकार का अवरोध–विरोध खड़ा करती हैं।

जातिवाद वर्ग व्यवस्था की देन है तथा वर्णव्यवस्था से उपजी पीड़ा को दलित सदियों से झेलता आ रहा है। भले ही आज इनकी स्थिति में कुछ परिवर्तन आया है, किन्तु शोषण निरन्तर जारी है। 'हंस' की हिन्दी कहानियों में न केवल इसकी गूँज सुनाई पड़ रही है अपितु दलित, समाज में अपने वास्तविक स्थान को पाने के लिए प्रयत्नशील भी दिखाई दे रहा है।

संवर्णो द्वारा आर्थिक दृष्टि से कमज़ोर/विपन्न दलितों का शारीरिक, मानसिक तथा जातीय शोषण किया जाता है। उन्हें कर्ज़ के चक्कर में फंसाकर सदैव के लिए अपना बंधुआ मजदूर बना लिया जाता है। विद्यासागर नौटियाल की कहानी 'फट जा पंचधार' की नारी पात्र रक्खी ब्यौरा प्रस्तुत करती हुई कहती है –''हम बंधुआ थे वीरसिंह के दादाओं ने मेरे दादा को उसके विवाह के वक्त कुछ पैसा उधार दिया था। उसके एवज़ में मेरे दादा वीरसिंह के दादाओं की खेती बाड़ी पर काम करता था..... जब तक जिन्दा रहा तब तक दादा और उनका कुनबा वीरसिंह के पुरखों की खेती पर काम करता रहा। कर्ज़ा चुकता नहीं हुआ'' दादा के मरने के बाद ..... मेरे बाप को वीरसिंह के घर पर तलब किया गया।[1] यही नहीं कहीं दलित इसका विरोध न कर दे। अतः उन्हें नरक का भय दिखलाया जाता है। प्रस्तुत कहानी में ब्राह्मण द्वारा रक्खी के बाप को इसी तरह बेगार के दलदल में फंसाया जाता है। ''ग्याडू का बाप कर्ज़दार है, वह नरक में है, ग्याडू कह रहा है, वह बाप के कर्ज़ को अपने ऊपर लेता है, हे गाय माता! इसके बाप को छुड़ा दे।[2]''

आज हम इक्कीसवीं सदी में प्रवेश कर आधुनिक होने का भ्रम पाले हुए हैं लेकिन सच तो यह है कि हम समय के साथ आधुनिक की ओर नहीं बढ़े, अपितु आज भी हम उतने ही पिछड़े हैं। आज भी हम व्यक्ति को उसकी योग्यता, कौशल, सामर्थ्य से नहीं बल्कि जाति से पहचानते हैं। राज वाल्मीकि की कहानी 'इतनी अनुदार सुबह' में कथानायक दिल्ली से फलैदा गांव अपने मित्र से मिलने आता है। टांगे पर बैठते ही टांगे वाला उससे पूछता है–''किनके यहां जाना है ? दुलीचंद के. कौन जात में ? बामनों में

या हरिजनों में ? जात पूछना ज़रूरी है ?सब बात ऐसी है कि जा गाम में दुलीचंद दो हैं एक बामनों में और एक हरिजनों में हरिजन कहना जरूरी है। कोई और नाम नहीं क्या सिडयूल कास्ट वालों का जैसे दलित '' साब, यहां दलित–फलित कोई जानत ना है हरिजन ना कहेंगे तौ भंगी–चमार कह देंगे।3

जाति केवल गाँव में ही नहीं, अपितु बड़े–बड़े शहर भी इससे अछूते नहीं है। रजत रानी 'मीनू' की कहानी 'हम कौन हैं' इसका ख़ुलासा करती है। कहानी में दम्पत्ति धनेश्वर तथा उमा दिल्ली के एक पब्लिक स्कूल में अपनी बेटी का एडमिशन करवाते हैं । उमा के शब्दों में –''जब चन्दौसी से दिल्ली आई थी, लोगों को कहते सुना था कि अब जाति खत्म हो गई है। बड़े शहरों में तो बिल्कुल ही कोई जात–पात नहीं पूछता। क्या इसी तरह शहरों में जाति समाप्त हो गई है ?[4]''

जाति के ही कारण दलितों को अस्तृश्यता का दंश झेलना पड़ता है। हमारे शिक्षा संस्थान जहाँ पर इस प्रकार के भेदभाव को समाप्त करने की शिक्षा दी जानी चाहिए। वहां भी छुआछूत को बढ़ावा दिया जाता है। कहानी 'रात' (शिवकुमार कश्यप) में राजेश के माध्यम से स्कूल में स्वर्णो द्वारा दलितों के साथ किए जाने वाले दुर्व्यवहार का ब्यौरा प्रस्तुत किया गया है। राकेश दलित है तथा ''जब उसने कुंए पर रखे बाल्टी–लोटे से पानी पिया और जाने लगा तभी..... एक लड़का बाल्टी में रखा पानी पीने चला कि गिरधारी तिवारी नामक लड़के ने कहा, 'अरे क्या करता है?पानी गिरा, देखा नहीं, इसी बाल्टी से वह चमरा पानी पी रहा था।' ... इसी बात की शिकायत राजेश जब स्कूल के प्रिंसिपल से करता है तो वह कहता है–''तुम लोग स्थिति देखकर रहा करो। ये बड़े घर के लड़के हैं..... लेकिन प्रिंसिपल साहब, स्कूल में तो सभी विद्यार्थी समान होते हैं, सरकार ने कानून बनाकर सभी को समान अधिकार दिया है..... तभी तो तुम लोग ब्राह्मणों, ठाकुरों के लड़कों के साथ बैठकर पढ़ रहे हो..... सरकार ने तुम लोगों को अपना दामाद बनाया है तो इसका मतलब यह नहीं कि सभी लोग तुम लोगों को अपने सिर पर बैठाएँ''[5]।

दलितों को न केवल अस्पृश्यता का ही दंश झेलना पड़ता है बल्कि उन पर स्वर्ण समाज द्वारा प्रतिमाहीनता का आरोप लगाकर उन्हें मानसिक आघात भी पहुँचाया जाता है। उनके अनुसार आरक्षण के बल पर अयोग्य दलित ऊँचे पदों को प्राप्त करते हैं। कहानी 'पिघला हुआ शीशा' (मुर्शरफ अली) में शुक्ल एक कारखाना मुंशी है तथा उसका मानना है कि ''सारी समस्याओं की जड़ यह कोटा है, जब से देश में लागू हुआ है। देश का बेड़ा गर्क हो गया है, जीरो नम्बर पाने वाले कोटे के कारण डाक्टर बन रहे हैं जो ऑप्रेशन करते समय पेट में औजार छोड़ देते हैं कोटे के इंजीनियरों द्वारा बनाए पुल कुछ साल भी नहीं चल पाते.... यह कहां का इंसाफ है कि सौ में नब्बे नम्बर पाने वाला चपरासीगिरी करे और तैंतीस वाला अधिकारी बन बैठे।''[6] लंकिन राजेन्द्र यादव की कहानी 'दो दिवंगत' इस छद्म यथार्थ का पर्दाफाश करती है। कथानायक आप्रेशन के लिए सरकारी डॉक्टर के पास न जानकर नर्सिंग होम में जाता है क्योंकि सरकारी डॉक्टर आरक्षित कोटे से हैकिन्तु ऑप्रेशन के दौरान उसकी मृत्यु हो जाती है तथा मरनोपरान्त उसे पता चलता है कि दूसरा डाक्टर पचासों–लाख रूपये घूस देकर तथा मंत्रियों नेताओं की सिफारिशों के बल पर डिग्री हासिल किए हुए हैं।

राजनीति में आरक्षण मिल जाने की वजह से दलितों की स्थिति में कुछ परिवर्तन तो आया है किन्तु स्वर्णों द्वारा उनके साथ बरते जाने वाले व्यवहार में कोई बदलाव नहीं आया है।

डॉ. राजेन्द्र कुमार कनौजिया द्वारा लिखित कहानी (सत्तू महौसा) में सत्तू यानी सत्यनारायण आरक्षण के आधार पर एम.एल.ए. तो बन जाता है लेकिन मानसिक प्रताड़ना का शिकार तब भी बना ही रहता है। अपने विषय में सोचते हुए – ''आज जहां खड़ा है वहां उसके पास सब कुछ है, सम्मान है, चाहे झूठा ही सही, पैसा है, ताकत है, साथी है ..... फिर भी कुछ है, अब भी जो उसे काटता है, अन्दर–अन्दर कुरेदता रहता है ..... आज भी उसके नाम के साथ हर अखबार दलित नेता सत्यनारायण लिखता है..... बड़ी बिरादरी के लोग उसे 'सत्तू दुसाध' बुलाते हैं ..... पीछे लोग उसकी प्रतिभा को नहीं सराहते बल्कि उसको जन्म और जाति से पहचानते हैं।''[7] यह सच है कि जहां अन्याय होता है वहां विरोध भी होता है। एक तरफ जहां दलितों को अपमानित प्रताड़ित किया जा रहा है, वहीं दूसरी ओर दलित इसका विरोध कर समतामूलक समाज के लिए संघर्ष भी कर रहे हैं। समकालीन कहानियों में विरोध के स्वर भी मौजूद हैं। ओम प्रकाश बाल्मीकि की काहनी 'चिड़ीमार' में सुनीति जिसे रास्ते में रोज कुछ स्वर्ण लड़के तंग किया करते हैं। एक दिन सुतेज उसके साथ जाकर उन्हें सबक सिखाने की बात करता है तो सुनीति कहती है ''ये बेशर्म लोग हैं–उनकी नज़र में हमारी कोई इज़्जत नहीं है..... ये उनके संस्कार हैं जिन्हें तुम लड़–झगड़कर जीत नहीं पाओगे, पुलिस, न्यायपालिका भी उनके साथ है ..... किस–किस से लड़ोगे..... कितनों से लड़ोगे.... तो क्या चुप बैठे रहें .... या समय बदलने का इंतजार करते रहें .... समय तो अपने आप तो घड़ी में भी नहीं बदलता बदलने के लिए कुछ करना होता है..... तुम फिकर मत करो..... इस रोज़–रोज़ के मरने से अच्छा है एक दिन ही मर लिया जाए।''8 चरण सिंह पंथिक की कहानी 'बात ये नहीं है' में भी दलितों का आक्रोश चित्रित है। कहानी का पात्र पून्या कोली कहता है–''हमारा वोट भी चाहिए। हमारी दारू चाहिए। हमारा बनाया हुआ मीट भी चाहिए। और फिर ..... नीचे सोने के लिए हमारी जवान बहु–बेटियां भी चाहिए। हम क्या इंसान नहीं है ? हमारी क्या इज्ज़त नहीं है ?अजी, अब तो अफवाह जूती बनाने की ही फैली है, लेकिन अब के बाद कोई अफवाह नहीं फैलेगी, जो कुछ होगा, सच होगा।''[9]

इसी तरह ओम प्रकाश बाल्मीकि की कहानी 'रिहाई' में लाला रामसुख ला के बंधुआ मिट्ठन तथा उसकी पत्नी सुगनी की मृत्यु के उपरान्त उनके बेटे छुटकू द्वारा उस गोदान से भाग जाना। आज की दलित युवा पीढ़ी द्वारा बंधुआ मज़दूरी को तिलाजंलि देने का प्रयास है।

अन्ततः हम यह कह सकते हैं कि सदियों से अवमानना यातनाओं को मूक बनकर सहता आया दलित न केवल अपने अधिकारों के प्रति सचेत/जागरूक हुआ है अपितु अपने अधिकारों को पाने के लिए संघर्ष भी कर रहा है जिसकी सशक्त अभिव्यक्ति 'हंस' की हिन्दी कहानियों में हुई है।

मुकेश कुमारी
शोध अध्येता, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू

तुम्हारे नाम

मित्र,
तुम जो मेरे सामने हो,
मेरी आँख और आवाज़ की परिधि में,
आज पूरे होशो–हवास में
मैं कर रहा हूँ,
वसीयत तुम्हारे नाम।
और लागू हो जायेगी यह
मेरे विदाई क्षणों पर,
जब हो जायेंगी बन्द
बेतरतीब धड़कनें ।

मैं
अपने हिस्से के
सारे सुखद पल,
प्रकाश किरणें,
दिन और रात,
आनंद और उल्लास,
पर्वतीय पवन, सरोवर,
नये फूलों की रुत,
सूर्यमुखी खेत,
दिल के दीवानेखाने,
ओस भरे संस्मरण,
तुम्हारे मन–मस्तिष्क के लिये
एक बांसुरी,
एक सकारात्मक सोच,
शब्दों की रोशनी,
रोटी और संगीत
गुलाब, चांदनी और
एक इन्द्रधनुष ।

पर,
मेरी अचल सम्पत्ति में,
फिर भी,
बकाया रह जायेगा
कुछ हिसाब किताब
जो अंकित है मेरे
चित्त, चेतना पर,
जो नितांत मेरा है।
और ये सब
मैं अपने साथ ले आउंगा ।

क्योंकि –
कल फिर मुझे आना है,
और
लड़ना है एक संग्राम ।
जीना है एक इंकलाब
मातृभूमि के लिये ।

मेरी इस सम्पत्ति में शामिल हैं–
मेरी अंतहीन पीड़ा,
तीखा दर्द
दुःख, घाव,
धूमिल आकाश,
मातम के दिन,
कालकोठडत्री की कैद,
उदास, दुखी रातें,
शोक–गीत,
मर्मांतक वेदना
और
अज्ञात–वास ।

धुआँ, कुहासा,
कोहरा, सन्नाटा,

बारूदी मौसम,

मेरी रगों के लहु में घड़कते विचार,

जोशीले भाषण,

व्याख्यान ।

और –

अपनी कविताओं की अग्नि,

जिसे रखना है जीवित मुझे,

जब तक संग्राम जारी है ।

डॉ. जितेन्द्र उधमपुरी
जम्मू

राजभाषा के रूप में हिन्दी के विकास एवं सरकारी कार्यालयों में हिन्दी प्रयोग

भाषा मात्र विचार सम्प्रेषण का माध्यम ही नहीं होती वरन भाव भी है, विकास मगर माध्यम भी है। इसमें देश की मिट्टी की गंध और सुगंध भी रहती है। यह हमारी संस्कृति को पीढी–दर–पीढी आगे ले जाने का एकमात्र माध्यम भी है। **भाषा को परिभाषित करते हुए महर्षि पतंजली** ने अपने महाभाश्य में लिखा है, ''व्यक्तां वाचि वर्णा येशां त इमे व्यक्त वाच'' (1) अर्थात् जो वाणी वर्गों में व्यक्त होती है उसे भाषा कहते हैं। **प्रसिद्ध भाषाविद् मैक्समूलर का कथन है,** ''भाषा और कुछ नहीं है, केवल चतुर बृद्धि द्वार आविष्कृत एक ऐसा उपाय है जिसकी सहायता से हम अपने विचार सरलता और शीघ्रता से दूसरों तक व्यक्त कर सकते हैं।''(2)

राजभाषा से अभिप्रायः–

भारत में राजभाषा शब्द कोई नया शब्द नहीं है। राजभाषा का इतिहास जानने से पूर्व राजभाषा शब्द का अर्थ जानना ज़रूरी है। राज का अर्थ है – हुकुमत, शासन, सरकार। भाषा का अर्थ हम पहले ही जान चुके हैं कि विचारों की अभिव्यक्ति के माध्यम को हम भाषा कहते हैं। इस प्रकार राजभाषा से अभिप्राय हैः– शासकीय अथवा राजकीय अथवा सरकारी कार्यों को संचालित करने के लिए प्रयोग में लायी जाने वाली भाषा। राजभाषा शब्द को हमारे संविधान में कैसे अंगीकार किया गया, यह जानना बहुत आवश्यक है। हमारे संविधान के भाग–17 का शीर्षक राजभाषा है। इसके अनुच्छेद 343(1) में कहा गया है कि संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी। संविधान में कहीं भी राष्ट्रभाषा शब्द का प्रयोग नहीं किया गया है। (3) चूंकि हमारा संविधान अंग्रेजी में तैयार किया गया था और अंग्रेजी में देश की भाषा के लिए **आफिसियल लैंग्वेज़** शब्द का प्रयोग किया गया है। जब संविधान निर्मात्री सभा ने **नेशनल लैंग्वेज़** शब्द को न लेकर और राष्ट्रभाषा शब्द पर बहस न करके **आफिशियल लैंग्वेज़** शब्द को ही अपनाया और उसे राजभाषा का नाम दिया (4) तब उन्होंने इन दोनों के बीच के गहरे अंतर को समझा, क्योंकि हिन्दी भाषा–भाषी केवल राष्ट्रभाषा शब्द को ही प्रत्येक अर्थ में लेते थे। इस प्रकार अंग्रेजी लेखक आस्टिन की दृष्टि से देखा जाए तो ज्ञात होगा कि हमारे संविधान निर्माताओं ने कितनी आसानी से इस बात को पकड़ लिया कि हिन्दी को राष्ट्रभाषा का शब्द पर बहस न करके उसे राजभाषा का ही नाम दिया । भारत के संविधान में राजभाषा शब्द एक स्पष्ट अर्थ में प्रयुक्त हुआ है, फिर भी संविधान लिखे जाने के बाद कई लेखकों तथा कोषकारों ने इसे अपने–अपने ढंग से परिभाषित किया है। यहां यह बात ध्यान देने योग्य है कि भारत के संविधान में राजभाषा शब्द एवं उसके प्रयोग का उल्लेख किया गया है जबकि संविधान में इस शब्द की परिभाषा कहीं भी नहीं दी गई

है।

हिन्दी सदियों से राजकाज की भाषाः–

भारत के इतिहास की भांति राजभाषा का इतिहास भी काफी पुराना है। हिन्दी सदियों से राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठित रही है। हिन्दी मौर्य काल से लेकर मुगलों के शासनकाल तक राजकाज की भाषा के रूप में प्रचलित रही है। मौर्यकाल के महान शासन अशोक ने आम बोलचाल की भाषा पाली का प्रयोग किया और वह जनता के अधिक निकट होकर एक लोकप्रिय शासन बना। गुप्तकाल में संस्कृत राजकाज की भाषा रही है। गुप्तकाल के समाप्त होते–होते पाली से प्राकृत, संस्कृत और फिर अपभ्रंश से हिन्दी का जन्म हुआ और नौंवी, दसवीं सदी आते–आते हिन्दी राजकाज की भाषा बन गई।

बारहवीं सदी में भारत में तुर्कों एवं अफगानों के आगमन से मुस्लिम शासन स्थापित हुआ और फारसी को राजभाषा बनाया गया परन्तु हिन्दी का प्रयोग भी शासकीय कार्यों में होता रहा। भारत में अपनी जड़े मजबूत करने के लिए उन्होंने हिन्दी को ही बढ़ावा दिया। मुहम्मद गौरी ने अपने शासन का कामकाज देवनागरी लिपि तथा हिन्दी भाषा के माध्यम से संचालित करने के आदेश दिए। (5) इन आदेशों का पालन कुतुबुद्दीन ऐबक ने बड़ी कुशलता से पूरा किया। उन्होंने अपने सिक्कों पर हिन्दुओं की भाषा एवं देवी–देवताओं के चित्र अंकित करवाए। अपने सिक्कों पर देवनागरी लिपि का प्रयोग किया। गुलाम वंश के शासकों ने भी इसी नीति का पालन किया और जनता के साथ पत्र–व्यवहार और शासकीय कार्यों में हिन्दी के प्रयोग को जारी रखा। अलाउद्दीन खिलजी एक सफल प्रशासक था, उसने एक विशेष भाषा नीति बनाई और कार्य निश्चित किए गये कि किस प्रकार का कार्य हिन्दी में किया जाएगा। इसी प्रकार तुगलक वंश के शासकों–फिरोजशाह तुगलक और मुहम्मद तुगलक ने भी हिन्दी के प्रचार–प्रसार को जारी रखा । मुगलों का शासनकाल भारतीय इतिहास का एक महत्वपूर्ण काल माना जाता है। इन सभी शासकों की अपनी एक अलग विशेषता थी। आज भी हमारी प्रजातांत्रिक प्रणाली में बहुत सारी बातें उनके शासनकाल से ली गई हैं। मुगलों की राजभाषा नीति भी सल्तनतकाल के शासकों की भांति उदार थी उन्होंने अवधी, ब्रज, राजस्थानी, खड़ी बोली और फारसी को देवनागरी के माध्यम से संचालित और प्रसारित किया। यद्यपि अकबर एक पढ़ा–लिखा विद्वान नहीं था तो भी वह हिन्दू विद्ववानों का आदर करता था और हिन्दी भाषा का सम्मान करता था। देशी रियासतों, राजाओं और मराठों ने भी राजभाषा हिन्दी का ही प्रयोग किया। **डॉ. रामविलास शर्मा ने अपनी पुस्तक**–हिन्दी की विकास परम्परा में लिखा है कि आगरा जैसे व्यापार केन्द्रों में उस समय विदेशी व्यापारी, राजदूत आदि ने केवल यहां की जनता से विचारों का आदान–प्रदान करने के लिए वरन् आपस में अन्तर्राष्ट्रीय सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी या हिन्दुस्तानी का व्यवहार करते थे। (6)

यद्यपि अंग्रेजों ने भारत में आकर अपनी भाषा नीति बनाई तो भी उन्होंने भारत में अपनी जड़ें मज़बूत

करने के लिए हिन्दी का ही सहारा लिया। ब्रिटिश शासनकाल में सदियों से राजकाज के रूप में चली आ रही हिन्दी भाषा का प्रयोग कम होने लगा और अंग्रेजी राजभाषा तथा हिन्दी आम जनता की सूचना की भाषा बन गई। यद्यपि अंग्रेजी की भाषानीति में बदलाव आ गया तो भी ब्रिटिश सरकार ने राजकाज की दृष्टि से यह स्वीकार कर लिया था कि भारत में आनेवाले सिविल सर्विस के उच्च अधिकारियों के लिए हिन्दी, हिन्दुस्तानी या भारतीय भाषाओं का ज्ञान अनिवार्य कर दिया जाए।

हिन्दी भाषा के रूप में हिन्दी का चयनः–

हिन्दी का राष्ट्रभाषा के रूप में चयन करने में अहिन्दी भाषी प्रदेश के नेताओं का अग्रणी योगदान रहा। राष्ट्रीय भाषा के रूप में हिन्दी की पैरवी करने वाले पहले नेता थे–बंगाल के श्री केशवचन्द सेन जिन्होंने बंगाल से निकलने वाले अपने पत्र सुलभ समाचार में लिखा था, ''यदि भाषा एक न होने पर भारतवर्ष में एकता न हो तो उसका उपाय क्या है? एक भारतवर्ष में एक भाषा का प्रयोग करना इसका उपाय है। इस समय भारत में जितनी भी भाषाएं प्रचलित हैं उनमें हिन्दी भाषा प्रायः सर्वत्र प्रचलित है। इस हिन्दी भाषा को यदि भारतवर्ष की एकमात्र भाषा मान लिया जाए तो अनायास ही यह एकता शीघ्र ही सम्पन्न हो सकती है।''(7)

राजभाषा के रूप में हिन्दी का विकासः–

स्वाधीनता आन्दोलन में हिन्दी का महत्व सर्वज्ञात हो गया। किसी भी आन्दोलन की सफलता के लिए भाषा एक महत्वपूर्ण कड़ी का काम करती है। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने भी हिन्दी के महत्व को भी समझा और अपने चालीसवें अधिवेशन में हिन्दी संबंधी प्रस्ताव पारित किया कि, ''यह कांग्रेस तय करती है कि कांग्रेस का, कांग्रेस की महासमिति का और कार्यकारिणी समिति का कामकाज आमतौर पर हिन्दुस्तानी में चलाया जाएगा।'' (8) कांग्रेस द्वारा ऐसा महत्वपूर्ण निर्णय करना हिन्दी को राष्ट्रीय भाषा के रूप में मान्यता दिए जाने में सहायक सिद्ध हुआ। इस प्रकार भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने अपने अधिवेशनों और सम्मेलनों में राष्ट्रीय भाषा के रूप में हिन्दी को प्रचारित–प्रसारित करने का एजेण्डा रखा और निरंतर प्रयास करते रहे। हिन्दी को राजभाषा के रूप में स्थापित करने में कांग्रेस का महत्वपूर्ण योगदान रहा। स्वाधीनता आन्दोलन के दौरान ही हिन्दी के प्रचार–प्रसार के लिए विभिन्न नेताओं और विद्वानों द्वारा विभिन्न संगठन और संस्थाएं बनाई गई। इस प्रकार हिन्दी के प्रचार–प्रसार और विकास की गति निरन्तर जारी रही।

संविधान में हिन्दीः–

जैसा कि ज्ञात है कि 1946 में संविधान निर्माण सभा का गठन हुआ और संविधाान निर्माण का कार्य प्रारम्भ हुआ। संविधान का प्रारूप तैयार होने तक देश का राजनीतिक वातावरण साफ हो चुका था। अखिल भारतीय स्तर पर एक भारतीय भाषा का चयन करना इसलिए भी आवश्यक हो गया कि भारत

जैसे बहुभाषी देश में भावनात्मक एकता स्थापित करने के लिए सम्पर्क भाषा का होना नितान्त आवश्यक है। इस विषय पर पं0 जवाहर लाल नेहरू ने एक अखिल भारतीय भाषा की आवश्यकता पर बल दिया और यह भी स्पष्ट किया कि स्वतंत्र देश को अपनी भाषा में राजकाज चलाना चाहिए। यह भाषा अन्ततः जनता के माध्यम से ही विकसित होगी। (9)

इस प्रकार एक राजकीय भाषा की आवश्यकता महसूस की गई और अन्ततः 14 सितम्बर, 1949 को भारतीय संविधान के भाग–17 के अनुच्छेद 343(1) में हिन्दी को संघ की राजभाषा का दर्जा दिया गया और देवनागरी लिपि को मान्यता दी गई। अंकों के प्रयोग के रूप में भारतीय अंकों के अन्तर्राष्ट्रीय रूप को निर्धारित किया गया। (10) संविधान में अनुच्छेद 343 से 351 तक राजभाषा संबंधी प्रावधान बनाए गये।

राजभाषा हिन्दी के प्रचार–प्रसार के लिए आवश्यक निर्देशः–

संविधान के अनुच्छेद 351 के अनुसार, ''संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिन्दी भाषा का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करे ताकि वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किए बिना हिन्दुस्तानी के और आठवीं अनुसूची में वर्णित भारत की अन्य भाषाओं के प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए जहां आवश्यक या वांछनीय हो वहां उसके शब्द–भण्डार के लिए मुख्यतः संस्कृत से और गौणतः अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करे।''(11)

केन्द्रीय सरकारी कार्यालयों में हिन्दी प्रयोगार्थ आवश्यक प्रावधानः–

केन्द्र सरकार के मंत्रालयों/विभागों/कार्यालयों आदि में हिन्दी का प्रयोग सुनिश्चित् करने के लिए संघ सरकार द्वारा आवश्यक प्रावधान बनाए गये जैसे वर्ष 1952, 1955, 1960 में राष्ट्रपति द्वारा आदेश जारी किए गये। वर्ष 1963 में राजभाषा अधिनियम बनाया गया जिसे वर्ष 1967 में संशोधित किया गया। वर्ष 1968 में संसद द्वारा राजभाषा संकल्प पारित किया गया। वर्ष 1976 में राजभाषा नियम बनाए गये। संघ के कार्यालयों में हिन्दी के प्रयोग लक्ष्य निर्धारित करने के लिए भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग द्वारा प्रतिवर्ष राजभाषा वार्षिक कार्यक्रम तैयार किया जाता है। इन प्रावधानों को लागू करने के लिए भारत सरकार द्वारा प्रारम्भ में मानव संसाधन विकास मंत्रालय के अधीन शिक्षा विभाग के अन्तर्गत राजभाषा प्रभाग बनाया गया और उसे यह कार्य सौंपा गया। (12) परन्तु वर्ष 1976 में स्वतंत्र रूप से गृह मंत्रालय के अधीन सचिव स्तर का राजभाषा विभाग बनाया गया और सरकारी कार्यालयों में राजभाषा हिन्दी की प्रगति और निगरानी के लिए इसे उत्तरदायी बनाया गया।

सरकारी कार्यालयों में हिन्दी के प्रयोग की स्थितिः–

निःसंदेह यह बात सही है कि सरकारी कार्यालयों में हिन्दी के प्रयोग की स्थिति पहले से बेहतर हुई

है। कार्यालयों की वार्षिक रिपोर्टें, पत्रिकाएं आदि हिन्दी में प्रकाशित हो रही हैं। आज के बदलते परिवेश में उदारीकरण, निजीकरण, विनिवेशीकरण, कम्प्यूटरीकरण, वैश्वीकरण के दौर से गुजरने के बाद भी हिन्दी निरन्तर आगे बढ़ रही है। सरकारी कार्यालयों में हिन्दी की वर्तमान स्थिति जानने के लिए जम्मू शहर के 10 कार्यालयों का राजभाषा प्रयोग संबंधी सर्वेक्षण किया। सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ कि अधिकांश अधिकारी/कर्मचारी वर्ग को हिन्दी भाषा का आधारभूत ज्ञान है। कम्प्यूटर पर हिन्दी में कार्य करने की सुविधाएँ उपलब्ध हैं। वरिष्ठ अधिकारियों का हिन्दी के प्रयोग के प्रति दृष्टिकोण बदला है। हिन्दी पत्राचार में वृद्धि हुई है। हिन्दी प्रतियोगिताओं का आयोजन भी किया जाता है। राजभाषा कार्यान्वयन समितियों की बैठकों का आयोजन किया जाता है। परन्तु सरकारी कार्यालयों में हिन्दी के प्रयोग की प्रगति की राह में अभी भी बहुत चुनौतियाँ मुँह बनाए खड़ी है जिनका हमें समय रहते निराकरण करना होगा।

श्री रामेश्वर दयाल (शोधार्थी)
पंचकूला (हरियाणा)

उपन्यासों के आइने में आदिवासी

विश्व के सभी देशों में आदिवासी निवास करते हैं। आदिवासी शब्द का अर्थ है–मूल निवासी। आदिवासी वर्ग एक ऐसा वर्ग है जो अपनी प्राचीन परंपराओं, मान्यताओं के साथ जीना चाहता है। आदिवासियों का जीवन सीधा–साधा और परंपराओं को पीढ़ी–दर–पीढ़ी जीते हुए व्यतीत होता है। वे शहरी सभ्यता से दूर जंगल में अपने ढ़ंग से ही जीवन चाहते हैं लेकिन सरकार देश के विकास के नाम पर उनको उनके जंगलो से निकाल रही है।

भूमण्डलीकरण के इस दौर में उनकी मूल संस्कृति पर हमला हो रहा है। आदिवासियों का संघर्ष मूलतः जल–जंगल–जमीन का संघर्ष है। उनकी आजीविका के साधन यही तीनों चीजें हैं। इनके बिना जीना इनके लिए असम्भव है। युगों से विकास के नाम पर पूंजीपति इनके प्राकृतिक संसाधनों को छीन कर अपने लाभ हेतु प्रयोग करते रहे हैं।

समकालीन उपन्यासों में आदिवासियों की सभ्यता, संस्कृति, उनके रहन–सहन, शिक्षा, उनकी पारिवारिक स्थिति और उन पर होने वाले अत्याचारों व अमानवीय व्यवहार का यथार्थ चित्रण मिलता है। आदिवासियों को औद्योगिक विकास के नाम पर विस्थापित किया जा रहा है, जिससे उन्हें न चाहते हुए भी अपना घर–बार छोड़कर जबरन जाना पड़ता है। उनकी विस्थापन की पीड़ा को रणेन्द्र के 'ग्लोबल गांव के देवता' उपन्यास में भी उभारा गया है–''लोगों के चेहरे से हँसी गायब थी। इधर–उधर झुंड में खड़ी फुसफुसाहटों की बेचैनियाँ आशंकित कर रही थी। लालचन दा जब बुध्नी दी वाले देशी

केबिन में आये तो बात खुली। 'वनविभाग ने खतियान में दर्ज सैंतीस वन–गांवों को खाली करने का नोटिस दिया है।''[1]

इस प्रकार आदिवासियों से उनके घर खाली करवायें जा रहे हैं। जब वे विस्थापित होते हैं तो सिर्फ अपना घर ही नहीं छोड़ते। बल्कि विस्थापन के साथ ही सदियों से संरक्षित उनकी आदिवासी संस्कृति भी नष्ट हो जाती है। अमिता शर्मा के 'विस्थापित' उपन्यास में भी आदिवासियों के घर से जुड़े मोह के बारे में पता चलता है। जब एक लड़की मिस्टर आनन्द को कहती है–''जानते हैं, हम लोग अपने घर वस्तुओं से भर लेते हैं। इनके घरों में सामान नहीं होता है। स्मृतियाँ होती है। वह भी अपनी स्मृति की तरह नहीं। एक गाथा की तरह–जिसमें इतिहास भी है, कल्पना भी है। भूत भी है, भविष्य भी। इन्हें यहाँ से वहाँ करने में एक घर नष्ट नहीं होता। एक पूरा जन संस्कार तहस–नहस हो जाता है।''[2]

जहाँ तक आदिवासियों के इतिहास को देखा जाए तो इनका इतिहास बहुत गौरवशाली रहा है। बिरसा मुड़ा, तिलका मांजी, चाँद, भैरव, सिदो, कान्हू जैसे कईं विद्रोही हुए हैं जिन्होंने अंग्रेजों के खिलाफ डट कर मुकाबला किया था। भारत की आज़ादी में इनका योगदान रहा है। आज भले ही इनके बलिदान को भुला दिया जाए लेकिन इन्होंने भी अंग्रेजों के खिलाफ काफी संघर्ष किया है। हरिराम मीणा अपने उपन्यास 'धूणी तपे तीर' की भूमिका में लिखते हैं–''इतिहास की सुरंगों में छिपा रहा है। मानगढ़ पर्वत। देश का पहला 'जलियांवाला काण्ड' ;अमृतसर 1919 से छः वर्ष पूर्व दक्षिणी राजस्थान के बांसवाड़ा में घटित हो चुका था जिसमें जलियांवाला से चार गुणा अधिक शहादत हुई।''[3] इस प्रकार लेखक ने हमें बताया है कि किस प्रकार आदिवासियों के जीवन की इतनी बड़ी क्रातिकारी घटना को किसी भी रचनाकार ने अपनी रचना द्वारा देशवासियों के सम्मुख आज तक प्रस्तुत नहीं किया। यकीनन यह तथ्य ऐतिहासिक व प्रमाणिक रहे होंगे कि आदिवासियों ने अपने पुराने अस्त्रों–शस्त्रों के बल पर अंग्रेजों की आधुनिक तकनीक को टक्कर दी और अपनी धरती अपनी मौजूदगी के लिए अपने प्राणों की बलि देने से पीछे न हटा। उसके साथ ही सम्पूर्ण आदिवासी जातियों के दिल–दिमाग में क्रांति का दीप भी जलाते गए। इसी का प्रमाण है कि अभी भी आदिवासी अपनी अस्मिता के लिए संघर्षरत हैं।

लेकिन आज भारत सरकार ही इनके साथ न्याय नहीं कर पा रही है। उनके इलाके में जाकर परमाणु परीक्षण किये जा रहे हैं जिस वजह से उन्हें अनेक विकिरणजनित बीमारियां हो रही है। 'मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ' उपन्यास में महुआ माजी ने इस सच का खुलासा किया है–''मरंग गोड़ा की गायें ठीक से दूध नहीं दे रही है . . . फलों में बीज नहीं हो रहे है . . . बहुतायत में विकलांग बच्चे पैदा हो रहे हैं . . . बगैरह बगैरह। इस प्रकार बताया गया है कि परमाणु परीक्षण की वजह से उनका सारा प्राकृतिक पर्यावरण विकृत हो गया है।

यह संयोग की बात है कि आदिवासी जिन क्षेत्रों में रहते हैं वहां पर खनिज पदार्थ भरपूर मात्रा में पाये जाते हैं। लेकिन अफसोस की बात यह है कि उनका यही वरदान उनके लिए अभिशाप बन गया है। इसी कारण उनकी जमीनों का वर्षो से दोहन हो रहा है।

डॉ वीर भारत तलवार भी आदिवासियों की संस्कृति की भूरि–भूरि प्रशंसा करते हैं और अपनी किताब 'झारखंड़ के आदिवासियों के बीच' में लिखते है–''कि आदिवासी गरीब हैं। उनकी अर्थव्यवस्था पिछड़ी हुई है, उनकी उत्पादकता कम है क्योंकि उनकी जमीन बहुत उपजाऊ नहीं है। उनके पास सिंचाई के साधन तथा उत्पादन के आधुनिक साधनों का अभाव है . . . लेकिन यह सही नहीं है कि उनकी संस्कृति घटिया है . . . इसके उल्टे, सच बात तो यह है कि आदिवासियों की संस्कृति, मूल्य तथा, बहुत सी सामाजिक परम्पराएं तथाकथित सभ्य बाहरी लोगों की संस्कृति, मूल्यों और सामाजिक परम्पराओं से कहीं अधिक श्रेष्ठ हैं और मानवीय है।''[5] मूलतः यह आदिवासी प्रजाति ही है जो आजतक हमारे परंपरागत रीति रिवाज, रूढ़ियों, लोकाचार, लोकगीतों, लोकनृत्यों की अमूल धरोहर को अपने अन्दर समेटे हुए है।

शिक्षा के क्षेत्र में भी इनके साथ धोखाधड़ी ही की जा रही है। आदिवासी इलाकों में निजी संस्थान विद्यार्थी हित से ज्यादा निजी हित से संचालित होते हैं। आदिवासियों को जिन भाषाओं में शिक्षा दी जाती है वे उससे बिल्कुल अनजान होते हैं। वे विषय वस्तु को उस हद तक ग्रहण ही नहीं कर पाते जिस हद तक कि ग्रहण होनी चाहिए जिस कारण वे दूसरे बच्चों से बिछड़ जाते हैं और हीन भावना से ग्रस्त रहते हैं। उन्हें उनकी ही भाषाओं में शिक्षा देनी चाहिए। आदिवासी भाषाएं साहित्य की दृष्टि से काफी समृद्ध हैं लेकिन लिपि का अभाव है। उनके लिए लिपि तैयार करनी चाहिए। कुछ जगह तो विद्यालय सिर्फ कागज़ों पर ही खुले हुए हैं वास्तविकता में वहाँ कोई स्कूल की इमारत ही नहीं है। इस बात को 'पठार पर कोहरा' उपन्यास के राकेश कुमार सिंह ने भी अध्यापक संजीव के माध्यम से उठाया है। जब अध्यापक संजीव का तबादला गजलीठोरी गांव में होता है तो वह स्कूल खोजता है लेकिन उसे वहां कोई स्कूल नहीं मिलता है तो उस गांव का साहूकार कहता है– ''नहीं मिलेगा, तुम्हारा स्कूल।'' साहू पूर्ववत् खुजलाते हुए बोला। 'क्यों . . . ? संजीव संशय में पड़ गये। ''क्योंकि यहाँ कोई स्कूल है ही नही।''[6] इस प्रकार शिक्षा के नाम पर आदिवासियों के साथ होने वाले छल कपट का संकेत हमें मिलता है।

निष्कर्षतः हम यह कह सकते हैं कि समकालीन हिन्दी उपन्यासों में आदिवासियों के जीवन का यथार्थ चित्रण हुआ है। इन उपन्यासों को पढ़कर हम आदिवासियों की अनेक समस्याओं से परिचित हुए हैं। पूँजीपति साहूकारों या सरकार द्वारा उनके साथ अमानवीय अत्याचार या शोषण किया जा रहा है। आदिवासी अपने मूल संसाधनों को छोड़कर विस्थापित नहीं होना चाहता। इसके लिए वह विरोध संघर्ष

करता है और जहाँ अति हो जाती है। वहां अपने समुदाय के साथ मिलकर क्रांति का आह्वाहन करने से भी पीछे नहीं हटता। कई महान उपन्यासकार जैसे राकेश कुमार सिंह, रणेन्द्र, संजीव आदि हैं जिन्होंने आदिवासी समाज की पीड़ा को दूसरों तक पहुँचाने की कोशिश की है और वे काफी हद तक इसमें सफल भी रहे हैं। समाज में जागृति लाने के लिए आदिवासियों के जीवन से जुड़े हर पहलू को उपन्यासकारो ने पूरी शिद्धत के साथ उठाया और पाठक वर्ग के समक्ष चिंतन, विचार, विश्लेषण हेतु प्रस्तुत किया है।

कामिनी देवी–शोध अध्येता
डॉ. ओम प्रकाश, द्विवेदी,
जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू।

हिन्दी की अनुमत् काव्यधारा : एक सारस्वत विमर्श

हिन्दी में रामकाव्य और कृष्ण काव्य पर अधिक प्रकाश डाला गया है, जबकि 'हनुमत् काव्य' उपर्युक्त उभय काव्यधाराओं से सामाजिक परिवर्तन में अधिक सहायक रहा है। राम और कृष्ण से जुड़ने वालों में कुछ उपर उठे हुए मनुष्य हैं किन्तु हनुमान से जुड़ाव रखने वालों में अनपढ़ ग्रामीण अर्थात प्रत्येक श्रेणी व स्तर के लोग हैं। सारांश यह कि हनुमान की प्रसिद्धि लोक तक है।

रामानन्द से पूर्व संस्कृत साहित्य में हनुमान की कथाएँ मिलती हैं। महर्षि वाल्मीकी ने 'रामायण' आदि काव्य ग्रन्थ के मध्य हनुमान का चित्रण किया है। महाभारतकार महर्षि व्यास ने 'हनुमत' संबंधी कुछ दुर्लभ कथाएँ कही हैं। कालिदास प्रभृति कवियों के काव्य में हनुमत संबंधी वर्णन मिलता है। पुराणादि ग्रन्थों में भी यत्र–तत्र हनुमत कथाएँ मिलती हैं। अन्य कवियों द्वारा रचित 'अध्यात्मरामायण', 'भुशण्डिरामायण' ग्रन्थों में भी हनुमान दिखाई पड़ते हैं। मुक्तिकोपनिशद् व अन्य उपनिषदों में भी हनुमान जी का वर्णन हुआ है। कोशग्रन्थ व व्याकरण ग्रन्थों में भी 'हनु' धातु का उल्लेख मिलता है। स्तोत्र काव्य व संस्कृत नाटकों में भी हनुमान जी के दर्शन होते हैं। कुछेक रूद्र ग्रन्थों में भी रूद्रावतार के रूप में इनका चित्रण मिलता है। हनुमान की लोकप्रियता इतनी बढ़ गयी थी कि 'हनुमान' या हनुमत्नाटक की अधिकता हो गयी।

हिन्दी के आदिकाल में 'हनुमत् काव्य' अल्प दिखायी पड़ता है, किन्तु भक्तिकाल के आरम्भ के कुछ पूर्व हनुमानजी से संदर्भित काव्यग्रन्थ व कविता मिलने लगती हैं।

रामानन्द जी समय पर विनय और स्तुति के हिन्दीपद भी बनाकर गाया करते थे। एक पद तो यह है, जो हनुमान जी की स्तुति में है। जैसे 'आरती कीजै हनुमान लला की। दुष्ट दलन रघुनाथ कला की।''1

''रामभक्ति का एक अंग आदिरामभक्त हनुमानजी की उपासना भी हुई। स्वामी रामानन्दजी कृत हनुमानजी की स्तुति का उल्लेख हो चुका है। गोस्वामी तुलसी दास ने हनुमानजी की वन्दना बहुत स्थलों पर की है। 'हनुमान बाहुक' तो केवल हनुमानजी को ही संबोधन करके लिखा गया है। भक्ति के लिए किसी पहुँचे हुए भक्त का प्रसाद भी भक्तिमार्ग में अपेक्षित होता है। संवत 1996 में रायमत्क पाण्डेय ने 'हनुमच्चरित्र' लिखा।

गोस्वामी तुलसीदास के नाम पर 'हनुमान चालीसा', 'हनुमानाश्टक', 'बजरंग बाण' प्रभृति पुस्तकें प्रसिद्ध व मिलती हैं। किन्तु 'हनुमद बाहुक' ही प्रामाणिक माना जाता है। उन्होंने अपने सभी ग्रन्थों में 'हनुमत' संबंधित चर्चाएं की हैं। विनय पत्रिका में हनुमद भक्ति से संबंधित बारह छन्द हैं जिनमें सबसे प्रसिद्ध छन्द है

''मंगल मूरति मारूत नन्दन।

शकल अमंगल मूल निकन्दन।।''

छन्द संख्या 25–36 तक के सभी छन्द पवन पुत्र से संबंधित है। अंतिम छन्द 'राग गौरी'[3] में गाया जाता है जिसकी प्रसिद्धि लोक में सर्वाधिक है–गायकों का भी यह प्रिय छन्द है।

तुलसीदास ने 'रामचरितमानस' के मध्य 'हनुमत कथा' की सुन्दर योजना की है। हनुमान की स्तुति संस्कृत व हिन्दी उभय भाषाओं में की गयी है।

'बालकाण्ड' के आरम्भ में ही चतुर्थ श्लोक में 'कर्वाश्वरकपीश्वरौ'[4] कहकर हनुमान जी को सादर स्मरण किया गया है। 'सुन्दरकाण्ड' के तृतीय श्लोक में भी 'अतुलित बलधामं'5 इत्यादि के द्वार हनुमानजी का गुणगान किया गया है। हिन्दी में भी 'महावीर विनवउॅ हनुमाना या अनेक स्थलों पर हनुमान स्तुति की गयी है। कथा के मध्य हनुमानजी एकमात्र के रूप में प्रथमतः 'किश्किन्धाकाण्ड' में उपस्थित होते है। सुन्दरकाण्डमें वे प्रधान पात्र के रूप में आते है। 'लंकाकाण्ड' व 'उत्तरकाण्ड में भी हनुमत वर्णन किया गया है। 'दोहावली', 'गीतावाली, 'वरवैरामायण', 'कवितावली प्रभृति ग्रन्थों में भी हनुमान दिखायी पड़ते हैं। कवितावली में 'लंकादहन के प्रसंग में ओजस्वी भाषा में उनका चित्रण किया गया है।

तुलसी के परवर्ती कवियों में कवि हृदयराम ने 'हनुमतकाव्य धारा' को और अधिक समृद्ध किया है ''ये पंजाब के रहने वाले और कृष्णदास के पुत्र थे। इन्होंने संवत 1980 में संस्कृत के 'हनुमननाटक' के आधार पर 'भाषा हनुमन्नाटक' लिखा जिसकी कविता बड़ी सुन्दर और पारिमार्जित है। इसके अधिकतर कविता और सवैयों में बड़े अच्छे संवाद है। अतः उस काल के भीतर ही नाटक के रूप में कई रचनाएॅ हुई जिनमें सबसे अधिक प्रसिद्ध हृदयराम का हनुमन्नाटक हुआ।''[6] इस नाटक में हनुमानजी की

चतुरता सर्वत्र दिखायी पड़ती है

''एहो हनू। कहयौ श्री रघुवीर कछू सुधि है सिय की हित मॉही।

है प्रभु लंक कलंक बिना सुबसै तहॅ रावन बाग की दॉही।''

हृदयराम के कुछ ही बाद के कवि बलभद्र मिश्र रचित 'हनुमन्नाटक' का उल्लेख भी मिलता है। कवि केशवदास ने 'हनुमान जी' से संबंधित ग्रंथ तो नहीं लिखा है, किन्तु 'रामचन्द्रिका' के मध्य 'हनुमान जी' को स्थान दिया है। राम नामक किसी कवि द्वारा लिखित हनुमान–नाटक भी खोज में मिला है। कवि सेनापति ने 'कवित्त रत्नाकर' में हनुमत संबंधित कुछ कवित कहा है जो भाषा व भाव की दृष्टि से सौन्दर्यपूण व महत्वपूर्ण है। 'गोविन्द रामायण' में भी हनुमत–कथा उपलब्ध है, इसके रचयिता गुरू गोविन्द सिंह है।

श्रृंखला की अगली 'खोज में इनकी (भगवंत राय खीची) हनुमत–पचीसी मिली है। निर्माण काल दिया है। इनकी कविता बड़ी ही उत्साहपूर्ण और ओजस्विनी है।'[7] जैसे

'ओढे ब्रहा अस्त्र की अवाती महाताती बंदौ

युद्ध मत माती छाती पवन कुमार की।'

काशी निवासी कवि मनिचार सिंह ने 'हनुमत छबीसी' 'सुन्दरकाण्ड' रचकर हनुमत काव्य धारा को पुष्ट किया।' इनकी भाषा सानुप्रास शिष्ट और परिमार्जित है।'[8] जैसे

'वीर हनुमंत तेहि गरजि सुहास करि

उपटि पकरि ग्रीव भूमि लै परे पछारि'।

किसी गणेश नामक कवि द्वारा लिखित 'हनुमत पचीसी' भी उपलब्ध है।

फडकते हुए शब्दों में कविता करने वाले 'लक्ष्मण शतक' के सर्जक खुमान नामक कवि ने हनुमान संबंधी–हनुमान नखशिख, हनुमान पंचक, हनुमान पचीसी, रचकर इस प्रवाह को बनाये रखा।

भारतेन्दु के कुछ ही पूर्व के 'सरदार' कवि ने हनुमत भूषण लिखकर इस परम्परा को गतिशील रखा। आधुनिक युग में श्यामनारायण पाण्डेय ने 'जय हनुमान' लिखकर हनुमत काव्य धारा को समृद्ध किया और वैचारिक–परिवर्तन भी। वर्तमान में 'लक्ष्मीनारायण सिंह 'ईश' कलंकदहन (1945) ओज गुण युक्त खण्ड काव्य है, जिसमें हनुमान द्वारा लंकादहन की कथा नौ सर्गों में प्रौढ परिश्कृत ब्रज भाषा में वर्णित है।'10 सर्वाधिक प्रसिद्ध रहा है।

उपर्युक्त का सारांश यह कि 'हनुमत काव्यधारा' हिन्दी में उपेक्षित रहा है–अतः इस धारा का अध्ययन अध्यापन होना चाहिए। रीतिकाल के मध्य क्या कारण रहा था कि हनुमान काव्य अधिक लिखा

गया। एक और श्रृंगार की रस धारा में निमग्न लोग दिखायी पड़ते हैं, तो वहीं फड़फड़ाते शब्द लिये हनुमत काव्य धारा के कवि जनता को सचेत कर रहें थे। कहने का तात्पर्य है कि हिन्दी साहित्य के मध्य हनुमत काव्यधारा तत्व व जागृति उभय दृष्टि से महत्वपूर्ण रहा है अतः इस काव्यधारा पर गहन चिन्तन मनन कर के इसकी प्रासंगिकता निर्धारित करनी चाहिए तथाऽतु ।

डॉ. भारतेन्दु कुमार पाठक
सहा. प्रोफेसर कश्मीर विश्वविद्यालय, श्रीनगर

आज के युग में हिंदी की महत्ता, स्थिति तथा सरलीकरण से प्रचार एवं प्रसार के उपाय

हमारे देश में हिंदी लगभग सभी प्रांतों में बोली जाती है। देश में हिंदी भाषी लोगों की तादाद ज्यादा है। हिंदी भाषा में देश की सभी भाषाओं का तत्व समावेश है। हिंदी भाषा अपने आप में विश्व की एकमात्र समृद्ध एवं वैज्ञानिक भाषा है, जो कि ध्वनि पर आधारित है। देश में हिंदी के लोकप्रिय होने की वजह से ही हिंदी को हमारे देश के संविधान निर्माताओं ने राजभाषा के रूप में स्वीकार किया।

महावीर बुद्ध बौद्ध धर्म के प्रचार एवं प्रसार के लिए चीन, जापान, नेपाल, वर्मा में गए थे और वहाँ पर उन्होंने धर्मोपदेश हिंदी में दिए थे। उसी प्रकार गुरू नानक जी ने लंका, चीन, तिब्बत, मक्का और मदीना आदि देशों में गए और वहाँ उन्होंने हिंदी भाषा में ही उपदेश दिए थे। इससे जान पड़ता है कि उस समय भी हिंदी भाषा राष्ट्रभाषा थी और उसका सार्वजनिक प्रचार एवं प्रसार था।

वर्तमान समय में हिंदी का प्रचार एवं प्रसार के लिए गृह मंत्रालय भारत सरकार राजभाषा विभाग प्रयासरत हैं। केन्द्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान, नई दिल्ली केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों के लिए विभिन्न प्रशिक्षण जैसे–हिंदी आशुलिपिक, हिंदी टंकण आदि प्रशिक्षण चला रही हैं। ये सभी प्रयास तभी सफल होंगे जब हिंदी को जटिलता से सरलता की तरफ बढ़ाया जाएगा। जिससे हिंदी में काम करना प्रत्येक व्यक्ति के लिए रूचिकर एवं सरल हो जाए।

अंग्रेजी भाषा विदेशी भाषा है। उसकी प्रकृति को हम समझ नहीं सकते। जिसकी प्रकृति को हम समझ नहीं सकते, उस भाषा को माध्यम बनाकर हम अपने विचार प्रभावशाली ढंग से व्यक्त नहीं कर सकते। एक बात बिल्कुल स्पष्ट है, जब हम अंग्रेजी भाषा की प्रकृति को समझ नहीं सकते तो महसूस भी नहीं कर सकते। यदि किसी भाषा की प्रकृति को हम समझ ही नहीं सकते तो फिर हम कैसे अपने को अंग्रेजी भाषा में व्यक्त कर सकते हैं। आज देश में अंग्रेजी का बोल–बाला है। पं0 मदन मोहन मालविय जैसे विद्वान जो कि अंग्रेजी भाषा के भारत में प्रखर ज्ञाता थे लेकिन उससे भी ज्यादा वे

संस्कृत व हिंदी के ज्ञाता थे।

प्रसिद्धविद्वान एवं राजनियक श्री सिंधवी के अनुसार – अंग्रेजी भाषा के माध्यम से शिक्षा में सोलह वर्ष लगते हैं। यदि इन्ही विषयों की शिक्षा मातृभाषा के माध्यम से दी जाए, तो ज्यादा से ज्यादा दस वर्ष लगेंगे। इस प्रकार हजारों विद्यार्थियों के छः –छः वर्ष बचने का अर्थ यह हुआ कि कई हजार वर्ष जनता को मिल गए।

अंग्रेजी भाषा द्वारा शिक्षा पाने में दिमाग पर जो बोझ पड़ता है, वह असह्य है। यह बोझ हमारे बच्चे उठा तो सकते हैं, लेकिन उसकी कीमत उन्हें चुकानी पड़ती है। वे दूसरा बोझ उठाने के लायक नहीं रह जाते। आज हमारे स्नातक अधिकतर कमजोर, निरूत्साही और कोरे नकलची बन जाते हैं। उनमें खोज करने की शक्ति, विचार करने की शक्ति, साहस, धीरज, वीरता, निर्भयता और अन्य गुण बहुत क्षीण हो जाते हैं।

किसी भी भाषा को समृद्ध बनाने के लिए उसमें सभी भाषाओं के शब्दों को समादर सहित सहर्ष स्वीकार करना ही होगा, अन्यथा भाषा का प्रचार एवं प्रसार अवरूद्ध हो जाएगा। भाषा संकरी एवं सिमट के रह जाएगी। इसके साथ ही वह भाषा एक विशेष वर्ग/समाज तक सीमित रह जाएगी तथा विकास धीरे धीरे रूक जाएगा। लोग भाषा की कलिष्ट्ता देखकर दूर भागेगें। जैसे :– संस्कृत भाषा। संस्कृत भाषा आज केवल विद्वत जनों की भाषा बन कर रह गई है, जो कि लगभग लुप्त होने की कगार पर है। यदि इसमें सभी भाषाओं का समावेश हुआ होता तो यह निश्चित तौर पर समृद्ध भाषा होती।

इसके विपरित अंग्रेजी भाषा के केवल अपने मूल 100 शब्द ही हैं। जबकि अन्य सारे शब्द विदेशी हैं। इसमें सभी भाषाओं का समादर समावेश है। इसलिए आज अंग्रेजी अन्तर्राष्ट्रीय भाषा बन चुकी है।

राजभाषा विभाग गृह मंत्रालय भारत सरकार भी अब यह स्वतंत्रता देता है कि आप जिन शब्दों का हिंदी अनुवाद नहीं कर सकते अर्थात जिन शब्दों का हिंदी में कोई अर्थ ने मिले उनको वैसे ही रोमन हिंदी में उतार लिया जाए। जैसे हमारे ढाबे शब्द को आक्सफोर्ड शब्दकोश में ज्यों का त्यों डाल दिया गया है। उसी प्रकार हम भी अन्य भाषाओं के शब्दों को हिंदी में समाहित कर सकते हैं। जैसे कम्प्यूटर आदि। इस प्रकार हमारी हिंदी भाषा का प्रचार व प्रसार सुनिश्चित होगा तथा भाषा सरल, समृद्ध व निरन्तर अग्रसर होती रहेगी।

आज विश्व के विकसित देशों ने यह मान लिया है कि हिंदी विश्व के लगभग 30 प्रतिशत अर्थात एक तिहाई लोगों की भाषा है, जो न केवल भारत में (जिसकी जनसंख्या विश्व की लगभग 20 प्रतिशत है) बल्कि नेपाल, भूटान, बर्मा, श्रीलंका, फिजी, टोरन्टो, पाकिस्तान, अफगानिस्तान, तिब्बत, इंडोनेशिया आदि देशों में बोली, लिखी व समझी जाती है। इसलिए अमेरिका सरकार ने भी अपने समस्त

विश्वविद्यालयों में हिंदी भाषा का पठन/पाठन का एक अनिवार्य विषय के रूप में संलग्न कर दिया है। इसके अलावा हमारे जितने भी राजदूत अन्य देशों में तैनात किए गए हैं उनको भी हिंदी अधिकारी प्रदान किए गए हैं, ताकि हिंदी का प्रचार एवं प्रसार समस्त विश्व में हो सके। आज हमें हिंदी को लोकप्रिय बनाने के लिए हिंदी की महत्ता को जनमानस में पेश करना होगा। यह तभी संभव हो सकता है जब हम हिंदी को सरल माध्यम से लोगों तक पहुँचा सकें। इसके लिए हमें हिंदी भाषा में उन तमाम् शब्दों को सादर समाहित कर लेना चाहिए जिन्हें लोग अंग्रेजी में या अन्य भाषाओं में बोलने–समझने में अभ्यस्त हो चुके हैं। हिंदी के कलिष्ट शब्दों का सरलीकरण भी अनिवार्य है जिससे अहिंदी भाषी नागरिक आसानी से समझ सकें। इस प्रकार हम हिंदी का सरलीकरण करके इसका प्रचार एवं प्रसार कर पाने में समर्थ हो पाएंगे और हिंदी का शब्दकोष समृद्ध एवं वृहत हो पाएगा।

कैलाश चन्द्र मठपाल
निरीक्षक (अनुवादक)
फ्रंटियर मुख्यालय सीसुबल

जम्मू कश्मीर में जल प्रलय के समय देवदूत की तरह अवतरित हुई भारतीय सेना

जम्मू कश्मीर में हिन्दी पखवाड़ा मनाया जा रहा था तथा कम वर्षा के कारण किसान ही नहीं जन सामान्य भी लगभग वर्षा ना होने को देवयोग मान बैठे थे तथा इसे अपनी नियति का प्रतिफल मानकर चल रहे थे। इसी बीच अचानक पूरे राज्य में घनघोर बादल छाने लगे साथ ही वर्षा होने लगी एक दो दिन पूरे साल के बराबर पानी बरस गया लेकिन फिर भी बादल थमते नजर नहीं आ रहे थे इस स्थिति ने धीरे–धीरे छः सितम्बर आते हुए प्रदेश वासियों के माथे पर गहरी चिन्ता की लकीर खिचने लगी। लोगों के चेहरे से खुशी ने चिन्ता का स्थान ले लिया पहाड़ों से पानी के साथ मिट्टी व चट्टाने बहकर तवी तथा झेलम व चिनाव नदी में आने लगीं देखते ही देखते सारा जम्मू कश्मीर जल प्रलय का स्थान बन गया जल–थल का भेद समाप्त हो गया। नदियों का उफान देखकर डर लगने लगा लोग समझ नहीं पाये आखिर इतना पानी कैसे आ गया। धीरे–धीरे जब स्थिति राज्य सरकार के नियंत्रण से बाहर हो गई तब केन्द्र सरकार ने सारा बचाव व राहत कार्य अपने हाथ ले लिया। पहले भारत सरकार के गृहमंत्री श्री राजनाथ सिंह आये, बाद में दूसरे ही दिन भारत के प्रधानमंत्री भी जम्मू और श्रीनगर पहुॅचे

अधिकारियों से जानकारी लेकर बिना किसी देरी के राहत एवं बचाव कार्य भारतीय सेना को सौंप दिया थल सेना के सैनिकों ने ज़मीन पर मोर्चा संभाल लिया तो नेवी नौ सेना जल में उतर गई और वायु सेना ने आसमान और जमीन की दूरी मिटा दी पानी में फसे लोगों को पूरे राज्य से बाहर निकालने के साथ ही जो लोग पानी से बाहर नहीं निकल पा रहे थे उन्हें वहीं भोजन पानी तथा रहने के लिए टेन्ट तथा कंबल की व्यवस्था की गई। जब भारतीय सेना ने आपरेशन मेघराहत चलाया तो सभी प्रदेश वासियों को आशा बंधी कि अब उनकी जान व माल की रक्षा हो सकेगी और यही हुआ सेना के एक लाख जवान राहत कार्य में 24 घण्टे लगे रहे और रोजाना हजारो लोगों के जीवन की रक्षा की जाने लगी पूरे प्रदेश से आये पर्यटकों को भारत सरकार के निदेश के अनुसार उनके गन्तव्य तक पहुँचाया जाने लगा। दिल्ली, चण्डीगढ़ तथा जम्मू से जो जहाज राहत का सामान लेकर प्रभावित क्षेत्रों में जाते थे वे वापिसी में खाली जहाजों तथा हेलीकाप्टरों से पानी के प्रलय से बचाये गये देशवासियों को दिल्ली तथा चण्डीगढ़ पहुँचा रहे थे पूरा देश इन जांबाज़ सैनिकों की राष्ट्र के प्रति देश भक्ति देखकर भारतीय सेना को हृदय की गहराइयों से आर्शीवाद दे रहे थे तथा जगह–जगह उनका गुणगान ही हो रहा था और वास्तव में भारतीय सेना जम्मू कश्मीर में देव दूत बनकर उतरी उसने जम्मू कश्मीर के लोगों में अपना विश्वास स्थापित किया तथा अपने कर्तव्य परायणता का उत्कृष्ट उदाहरण पेश किया धीरे–धीरे जल स्तर जम्मू में काफी घट गया तथा लगभग 10 तारीख तक जम्मू में तो स्थिति लगभग सामान्य हो गई टूटा हुआ पुल सेना द्वारा एक सप्ताह में तैयार कर लिया गया। लेकिन घाटी में स्थिति अभी भी सामान्य नहीं हुई है। यद्यपि पानी का स्तर हर पल धीरे–धीरे कम हो रहा है लेकिन अभी–घाटी को सामान्य होने में महीनों लग जायेंगे क्योंकि जलस्तर घटने के बाद घरों की मरम्मत व सफाई कार्य में सालों लग जायेंगे तथा जो कष्ट इस जल प्रलय ने जम्मू कश्मीर को दिया ऐसी विपरीत परिस्थितियां एक शताब्दी के बाद आई है लेकिन भारतीय सेना ने देवदूत का काम किया है इसलिए उसे इस राहत कार्य का पूरा–पूरा श्रेय जाता है तथा भारत के माननीय प्रधानमंत्री श्री मोदी साहब का मार्गदर्शन तथा सहायता बहुत महत्वपूर्ण है। राहत कार्य में प्रत्यक्ष तथा परोक्षरूप से जुड़े सभी प्रशंसा के पात्र हैं।

अशोक दीक्षित
वरि. प्रबंधक श्री गांधी सेवा सदन, जम्मू

सम्राट अकबर शासन काल के बहुमूल्य नवरत्न

मुगल बादशाह अकबर का जन्म 15 अक्टूबर 1542 को वर्तमान में पाकिस्तान स्थित थार और परकार जिले के सदर मुकाम अमरकोट दुर्ग के रनवास में हुआ था। इनके पिता का नाम हुमायूँ तथा माँ का नाम हमीदा बानू था। वे विभिन्न रूचियों वाले, कुशाग्र बुद्धि के सम्राट थे साथ ही विद्यानुरागी और विद्वानों के आश्रयदाता थे। विद्वानों, वैज्ञानिकों, धर्मचार्यों, दार्शनिकों, कवियों, लेखकों, संगीतज्ञों आदि के साथ सत्संग व वाद–विवाद करने में उन्हें आनन्द की अनुभूति होती थी। उनके दरबार में हिन्दू, पारसी, सिक्ख, जैनधर्म, ईसाई धर्म के प्रमुख पादरी निवास करते थे तथा इबादतखाने में जाकर अपने–अपने धार्मिक सिद्धान्तों की निर्भीक होकर व्याख्या करते थे। इनके सिद्धान्तों को सुनकर अकबर उनकी ओर आकर्षित हुए। प्रभावस्वरूप अकबर एक ओर जहाँ हिन्दुओं के अवतारों व देवी–देवताओं के प्रति श्रद्धा रखने लगे, त्योहारों को धूमधाम से मनाने लगे वहाँ दूसरी ओर पारसी प्रभाव से सूर्य और अग्नि की पूजा के प्रति आदरभाव व जैन धर्म के प्रभाव से शिकार व मांस–मदिरा स्थगित करके जीव हत्याएँ बन्द करवा दी। उनके शासनकाल की नौ प्रमुख महान विभूतियां थी जिन्हें नवरत्नों की संज्ञा दी जाती हैं।

1. **शेख मुबारक** :– शेख मुबारक का जन्म इस्लाम के एक गुरू के घर में हुआ था। इनके दो पुत्र शेख फैजी व अबुल फजल थे। अकबर के यहाँ ये मदरसा चलाते थे, जिसमें अनेक विद्यार्थी पढ़ने आते थे, जो इनके परम शिष्य हो गये थे। शेरशाह, सलीमशाह और हुमायूँ शासनकाल में धर्म का ठेकेदार मखदमू–उल–मुल्क सुल्तानपुरी इनसे शत्रुता रखता था और बरबाद करने पर तुला हुआ था। वह शेख मुबारक को पकड़कर इस्लाम विरोधी होने का आरोप लगाकर मौत की सजा दिलाना चाहता था। उसके भय से अपने दोनों पुत्रों शेख फैजी व अबुल फजल को लेकर वे इधर–उधर अज्ञातवास करते रहे किन्तु जब अकबर को सच्चाई का मान हुआ तो उन्होंने इनको अपने दरबार में आमंत्रित किया। शेख मुबारक अपने पुत्र फैजी को लेकर दरबार में प्रस्तुत हुए। अकबर के दबार में शेख मुबारक व शेख फैजी दोनों को बहुत सम्मान प्राप्त हुआ।

2. **शेख फैजी** :– शेख फैजी अकबर युगीन विद्वान शेख मुबारक के बड़े पुत्र थे। एक कवि व विद्वान के रूप में अकबर ने इनकी प्रशंसा सुन रखी थी, इसी कारण अकबर ने इन्हें अपने दरबार में आमंत्रित किया और वह राज्यसभा का एक विद्वान अधिकारी बन गया। फैजी की विद्वता से प्रभावित होकर अकबर ने अपनी सन्तान सलीम, मुराद और दानियाल की शिक्षा हेतु इनको नियुक्त किया। फैजी अकबर द्वारा संचालित दीन–इलाही के सम्मानित सदस्य भी थे। इनके यहाँ अतिथियों की भीड़ लगी रहती थी। वे प्रत्येक गुणी व विद्वान व्यक्ति का आदर सत्कार करते थे।

3. **अबुल फजल** :– अबुल फजल, शेख मुबारक के छोटे पुत्र थे। ये अपनी योग्यता के बल पर अकबर

के परामर्शदाता बन गए। दीन–इलाही की स्थापना में इनके योगदान को भुलाया नहीं जा सकता। दीन इलाही में शामिल होने वाला हर शख्स पहले इनसे ही सम्पर्क करता था तदन्तर वे अकबर के पास ले जाकर दीक्षित कराते थे। अबुल फजल केवल कलम के ही नहीं कृपाण के भी धनी थे। अकबर ने दक्षिण अभियान की विजय में अपने पुत्र मुराद के नेतृत्व में जब सेना भेजी थी तो उसमें अबुल फजल को भी साथ भेजा था। इस युद्ध में जहाँ मुराद की मृत्यु हो गई तो अबुल फजल ने ही स्थिति को नियंत्रित किया। इसी बीच अकबर ने दानियाल को सेनानायक नियुक्त किया और अबुल फजल को उसका सलाहकार और सैनिक व्यवस्थापक नियुक्त किया । अबुल फजल ने अपनी बहादुरी और काबलियत से दक्षिण अभियान में विजय हासिल कर ली। अकबर के शासनकाल में अबुल फजल की सेवाओं को विस्मृत नहीं किया जा सकता। इनके द्वारा फारसी में लिखित दो ग्रन्थ – 'अकबरनामा' व 'आईन–ए–अकबरी' इनकी असाधारण प्रतिभा के परिचायक हैं।

4. मुल्ला अब्दुल कादिर बदायूँनी :– मुल्ला अब्दुल कादिर, शेख की स्थिति अच्छी नहीं थी इसलिए शेख फैजी और अबुल फजल के साथ परिवार की सेवा करते हुए और इनको शाही सेवा में रख लिया। ये वीणावादक, गायक व संगीतप्रिय इन्सान थे इसलिए अकबर ने अपने दरबार के सात इमामों में से एक इमाम नियुक्त किया। अब्दुल कादिर एक बहादुर सैनिक भी थे। महाराणा प्रताप के विरुद्ध हल्दी घाटी के युद्ध में इन्होंने सहभाग किया था। ये अरबी–फारसी के विद्वान थे। इन्होंने कई ग्रन्थ लिखें तथा संस्कृत ग्रन्थों का फारसी अनुवाद भी किया था।

5. बीरबलः– बीरबल का वास्तविक नाम महेशदास था। इनकी काव्य प्रतिभा, हाजिरजवाबी, मेधावी शक्ति से प्रभावित होकर रीवां नरेश रामचन्द्र बघेल ने अपनी राज्यसभा में आश्रय प्रदान किया तदन्तर आमेर नरेश भगवन्तदास के संरक्षण में पहुँचकर अकबर के दरबार में अपनी सेवाएँ प्रदान की। कुछ ही दिनों में बीरबल, अबकर के अभिन्न मित्र बन गये। अपनी अनुपस्थिति में अकबर ने प्रसन्न होकर बीरबल को कविराय व राजा की उपाधि से अलंकृत किया था। उन्होंने अनेक कवित्त, दोहे व चुटकलों की रचना की जो आज भी जनमानस में अत्यधिक मनोयोग से पढ़े व सुने जाते हैं।

6. राजा टोडरमलः– अकबर के शासनकाल में राजा टोडरमल सर्वप्रथम लेखक के पद पर नियुक्त हुए थे किन्तु योग्यता के बल पर वे प्रभावशाली दरबारी और अधिकारी बन गये । वे एक श्रेष्ठ सैनिक व सेनानायक भी थे। उन्होंने अनेक युद्धों में भाग भी लिया था। उपवेग सरदारों के विद्रोह का दमन करने में, रणथम्भौर किले को जीतने में तथा बंगाल में विद्रोही दाऊद के विरुद्ध युद्ध करने में उन्होंने अपनी वीरता, साहस व दूरदर्शिता का परिचय दिया था। इनकी सेवाओं से अभिभूत होकर अकबर ने इनको मुशरिफे दीवान के पद पर पदोन्नत किया था।

7. अब्दुर्रहीम खानखानाः– अब्दुर्रहीम, हुमायूँ के परामर्शदाता और परम सहयोगी बैराम खाँ के पुत्र

थे। इनकी माता का नाम सलीमा बेगम था। बैराम खाँ की मृत्यु के पश्चात् अब्दुर्रहीम को अपना पुत्र घोषित कर अकबर ने विधवा सलीमा को अपनी बेगम बना लिया एवं रहीम की शिक्षा–दीक्षा की व्यवस्था का भार उन्होंने अपने ऊपर ले लिया। रहीम ने बड़े होकर अकबर के यहाँ प्रशासनिक व सैनिक पदों पर कार्य किया। उनके द्वारा लिखे गये दोहे शिक्षाप्रद हैं जो आप भी व्यावहारिक जीवन में उद्घृत किये जाते हैं। उनके गुणों के कारण अकबर ने उन्हें मिर्जाखाँ की उपाधि से अलंकृत किया था।

8. महाराजा मानसिंहः– महाराजा मानसिंह आमेर नरेश भगवन्तदास के पुत्र थे। इनका अधिकांश जीवन अकबर की सेवा करने में ही व्यतीत हुआ। रणथम्भौर या गुजरात की विजय, बिहार, उड़ीसा व बंगाल में शान्ति व्यवस्था स्थापित करना, राजपूत व हिन्दू नरेशों को अकबर की सेवा में लगा, मुगल साम्राज्य की सीमाओं में विस्तार करने में महाराजा मानसिंह ने अपना अपूर्व योगदान दिया। वे एक कुशल सेनापति के साथ वीर योद्धा थे। अकबर ने उनकी सेवाओं से प्रसन्न होकर मुगल अमीरों और अधिकारियों में सर्वोच्च 7000 जात और 6000 सवार का मनसब प्रदान किया था। अकबर के पुत्र युवराज सलीम का विवाह मानसिंह की बहन के साथ हुआ था, इस कारण मानसिंह और सलीम के घनिष्ठ सम्बन्ध थे किन्तु जब सलीम ने अकबर के विरुद्ध विद्रोह किया तो मानसिंह ने कुशल सेनापति की तरह सलीम का साथ नहीं दिया था।

9. तानसेनः– तानसेन का वास्तविक नाम त्रिलोचन पाण्डेय था। वे प्रतिभासम्पन्न व बाल्यकाल से संगीत प्रेमी थे। ग्वालियर से 1549 में वे आदिलशाह के दरबार में गये तथा 1550 में रीवां के राजा रामचन्द्र बघेल की राज्यसभा में नौकरी कर ली। रामचन्द्र सम्मान प्राप्त किया तथा तानसेन की उपाधि से अलंकृत किया गया। जब तानसेन की प्रसिद्धि अकबर तक पहुँची तो उन्होंने अपना दूत भेजकर तानसेन को अपने दरबार में बुला लिया। अकबर के यहाँ सर्वोच्च गायक के रूप में उन्होंने यश कर लिया। उन्होंने भारतीय गान को नवीन दिशा देकर नये रागों को प्रचलित किया। संगीतज्ञ के साथ–साथ तानसेन के अन्दर कवि की प्रतिभा भी विद्यमान थी। राजा रामचन्द्र बघेल व तानसेन की प्रशंसा में उन्होंने अनेक पदों की रचना भी की थी।

सारतः प्रमाणित होता है कि अकबर विद्यानुरागी के साथ–साथ विद्वानों, कवियों, लेखकों व संगीतज्ञ के आश्रयदाता थे। उनके शासनकाल में अरबी–फारसी के अतिरिक्त संस्कृत, हिन्दी, बंगाली, गुजराती व मराठी आदि भाषाओं के साहित्य का सृजन हुआ। इसका मुख्य कारण यही है कि अकबर और उनके सामन्तों ने अपने दरबार में अनेक लेखकों, कवियों, दार्शनिकों, विचारकों, संगीतज्ञों व उलेमाओं को उदार संरक्षण व प्रोत्साहन प्रदान किया था।

डॉ. सुनीता सक्सेना
एसो. प्रो., (हिन्दी विभाग)
ज. नेहरू (पी.जी.) कॉलेज, एटा (उ.प्र.)

न फेर निगाहें मुझ से तू

गम रिश्तों का कर न तू
यह चाँद सितारे गवाई हैं सारे
प्यार मुझ से करती तू
पर दुनियाँ से क्यों डरती तू
न फेर निगाहें मूझ से तू

न सुन किसी की बातें तू
ज़रा दिल अपने में झाँक तो तू
पुकार रही मुझे पल पल तू
हालात के डर से भाग रही तू

प्यार का गला घोट रही तू
अपनी नैया पार लगा तू
गम रिश्तों का कर न तू
फिर दोष भाग्य को देगी तू

हाथ मले फिर सिर पटके तू

आँखें बन्द तस्वीर देखे तू
फिर बीती बातें याद करे तू
दिल का हाल बता न सके तू

उमर काटेगी घुट कर तू
बिछड़ जाएं जब यह दो सासें
फिर कौन सुने तेरी मीठी मीठी बातें

सुदामा के तू सतू खाती
कुटिया में तू संग मेरे रहती
मेरे संग तू हंसती रहती
सारी जिन्दगी यूँ कट जाती।

तारो देवी
वरि. लेखाकार

मेरा गाँव

एक छोटा सा मगर प्यारा सा गॉव,
ठंडी–ठंडी हवा दे पीपल
की छॉव ।

गाँव की सड़क बेशक
कच्ची,
पर लोगों की मुहब्बत
सच्ची ।
एक दुबे के घर आते जाते,
ईद और दीवाली इक्टठे मनाते ।

घण्टों पीपल को छाँव तले लोग वतियाते,
अपना दुःख सुख एक दूसरे को सुनाते।
बदलाव की हवा ऐसी चली तो खुब हुई
तरक्की,
बिजली आई और सड़क हुई पक्की ।

सुविधाएं जब आ गईं गाँव के अन्दर,
एक बना दी मस्जिद और बना दिया
मन्दिर।
मन्दिर में पण्डित जी बैठाए,
मस्जिद में भी मुल्ला ले आए।
पण्डित और मुल्ला अब लगे लोगों को
उकसाने,
धर्म की आड़ में अपनी–अपनी दुकानें चलाने
लगे।
पीपल की छाँव से अब लोग कतराने लगे,
हिन्दू मन्दिर, तो मुसलमान मस्जिद जाने
लगे।

साम्प्रदायिक एकता का प्रतीक ,
मेरा गाँव दंगों का मैदान हो गया।
कोई इंसान न बचा था गॉव में,
कोई हिन्दू तो कोई मुसलमान हो गया।

''राजकुमार उत्तम''
कार्यालय महालेखाकार, जम्मू

''बीज की व्यथा''

बीज भली भांति जानता है,
कि अब परीक्षणों का दौर है।
असम्भव की बैशाखीयों पर,
सम्भावनाओं का जोर है ।
आज इंसान को इतना सब्र कहाँ,
कि देखे किसी को परिपक्व होते।
आज आदमी को इतनी फुर्सत कहां,
कि देखे वक्त का अनुभव होते ।
क्योंकि हर कोई चाहता है,
तुरन्त से भी तुरन्त परिणाम ।
थोड़ी सी मेहनत के बदले,
एक बड़ा सा इनाम ।
परीक्षणों के डर से ही बीज़ चुपचाप सिमटा पड़ा है,
धरती की अनजान परतों में लिपटा पड़ा है।
क्योंकि वो नहीं चाहता फिर से वही पीड़ा झेलना,
बचपन से बुढ़ापे तक कूद जाने की असीम वेदना।
इसलिए वह जमाने से छुपा ही रहना चाहता है,
अंकुरित होने की बजाए धरती के भीतर और भीतर जाना चाहता है।

''राजकुमार उत्तम'',
कार्यालय महालेखाकार, जम्मू

''डालर के मुकाबले रुपया कितना गिर गया''

आदमी का जीवन स्तर, किस कद्र बिगड़ गया।
डालर के मुकाबले, रुपया कितना गिर गया ।।

1. महंगाई की मार इतनी, कि मुश्किल है अब गुजारा धोखाधड़ी, फरेब की इस दुनिया में, पैसा ही है प्यारा दिल–जिगर तो बिकता था पहले भी, अब ईमान भी बिक गया डालर के मुकाबले रुपया कितना गिर गया।
2. साधु–संत भी अब शैतान बनने लगे कहीं यौन–शोशण, कहीं बच्चों की तरक्की, देश–दुनिया को लगने लगे, भोग–विलासता में डूबा संत, कब सुधर गया? डालर के मुकाबले रुपया कितना गिर गया ।
3. मासूम बचपन को रोंद डाला, पांव तले कुचल के कई अधखिली कलियां नोंच डाली बीच बाजार मसल के इंसान का जमीर जाने किधर गया ? डालर के मुकाबले रुपया कितना गिर गया ।
4. कभी सोने की चिड़िया था देश हमारा, पहचान दूर तक थी, अब घोटालों का देश है, याद आती है उस वतन की, जिस वतन की खातिर भगत सिंह सूली पे चढ़ गया ? डालर के मुकाबले रुपया कितना गिर गया।
5. देश के बिगड़े हालात का जिम्मेवार हर शख्स है। हर आदमी बना है नेता, हर आदमी विपक्ष है। देश को तोड़ो फिर राज करो, कोई मरता है मरे अपना भाग्य तो संवर गया ? डालर के मुकाबले रुपया कितना गिर गया।

आदमी का जीवन स्तर किस कद्र बिगड़ गया।
डालर के मुकाबले रुपया कितना गिर गया।

दर्शना देवी
सहायक लखा अधिकारी
कार्यालय महालेखाकार, जम्मू

सहमे-सहमे से आज कल रहने लगे हैं हम बिना कुछ भी कहे, सब कुछ कहने लगे हैं हम।

1. गैरों का जिक्र छेड़ो, गैरों की वफा की बात करो, अपनों की मेहरबानियों से तो, अब डरने लगे हैं हम बिना कुछ भी कहे, सब कुछ कहने लगे हैं हम ।
2. जिन्दगी के उजालों से, अब नहीं कोई वास्ता शाम–ए–गम बनके, जबसे ढलने लगे हैं हम बिना कुछ भी कहे, सबकुछ कहने लगे हैं हम ।
3. अब ना शिकवा कोई, न किसी से कोई गिला जो मुकद्दर में था वो हम को मिला। यही सब सोच के हर सितम सहने लगे हैं हम ।
4. सूनी हैं दिल की राहें, क्यों फेर दी निगाहें सपनों में तुम और याद आये, जितना भी हम भुलायें, यादों के दायरों में अब सिमटने लगे है हम बिना कुछ भी कहे, सबकुछ कहने लगे हैं हम ।
5. क्यों लेते हो इम्तहान, तुम मेरे सब का पैमाना छलके उठा है अब अपने भी सब्र का उठाई है कलम हमने अब लिखने लगे हैं हम बिना कुछ भी कहे सबकुछ कहने लगे हैं हम ।

दर्शना देवी
स.ले.अधिकारी
कार्यालय महालेखाकार, जम्मू

अरमाँ

यों खामोश चल दिये,
थोड़ा रुक तो जाओ।
आओ मेरे पहलू में कुछ देर बैठो,
फिर चाहे चले जाओ।
अभी तो मेरे हाथों की मेहन्दी सूखी कहाँ है।
इसकी भीनी–भीनी खुश्बू में रूह खो गई है।
पूरी रंग जाऊ तो चले जाओ ।
यह काली कजरारी रात,
जो रोके तभी है सवेरा,
कौन सी चीज़ है जिसका रहा यहाँसदा बसेरा।
भोर की दस्तक होने दो, फिर चले जाओ ।
बसंत की सुरमई मदमाती हवाओ,
तुझे उन सब दुआओं की कसम
दिल ने जो तस्वीर बसाई है
देख तो जाओ, देख लोग तो सोचेंगे ।
क्या हुआ क्यों हुआ तड़पेगें
यह सुनामी अपनी आँखों से रोक तो पाओ ।

मीना धर
व.ले.अधिकारी कार्यालय महालेखाकार, जम्मू

एक संयुक्तिका

मुस्कानों का रस पाकर के, पत्थर पारसमणी हो गये,
देने वाले हाथ स्वयं, लेने वालों के त्रणी हो गये।
किसे खोजते, कहाँ खोजते, कौन उन्हें अपनापन देता,
यही सोचकर भोले शंकर, खुद ही अर्द्धांगिनी हो गये।
एक चकोर न जाने कब से, तुम्हें देखने को व्याकुल था,
किन्तु न तुम बदली से झाँके, क्यों इतने कृपणी हो गये।
जयशंकर तो जयशंकर थे, उनकी जय तो सदा अमर है,
हाँ 'प्रसाद' ही शंकर पाकर, सचमुच कामायनी हो गये।
श्याम घटायें, हरी मयूरी, अश्रु गिराता मस्त मयूरा,
पर ऐसे में केश किसी के हम को मन्दाकिनी हो गये।
ऐसे घर की गीली पूजा प्रभु के सिवा किसे भायेगी,
जहाँ नयन हो गये तराजू, आँसू आमदनी हो गये।
ऐसा भी परिवर्तन आया, मौसम ठगा ठगा सा दीखा,
कलियाँ वैरागिनी हो गयीं, भौंरे रामायणी हो गये।
निर्दोशी हम तुम दोनों का लेन देन कुछ रहा इस तरह,
हम तुमको दे सके अँधेरा तुम हमको रोशनी हो गये ।

डॉ. बहादुर सिंह निर्दोशी
सिरसागंज (उ.प्र.)

स्वतंत्रता के बाद हिन्दी की दशा एवं दिशा

भारत एक विशाल देश है, जिसमें विभिन्न जातियों, धर्मों, सम्प्रदायों, संस्कृतियों भाषाओं एवं बोलियों वाले लोग निवास करते हैं। हिन्दी के अतिरिक्त प्रान्तों की अपनी–अपनी भाषाएं है – जैसे तेलगू, आसामी, कन्नड़, पंजाबी, कश्मीरी आदि। लेकिन हिन्दी भाषा देश की लोकप्रिय भाषा है। ऐसी भाषा जो देश के अधिकांश भागों में बोली व समझी जाती है। इसकी लोकप्रियता को ध्यान में रखते हुए संविधान सभा में 14 सितम्बर 1949 को हिन्दी को राष्ट्रीय भाषा घोषित किया गया और यह भी कहा गया कि 15 वर्ष तक राजकाज की भाषा अंग्रेजी होगी और हिन्दी का भी प्रयोग किया जा सकता है। लेकिन भाषा अधिनियम 1963 के अनुसार कहा गया कि राजकाज की भाषा अंग्रेजी एवं हिन्दी दोनों होगी। अंग्रेजी भाषा के समाप्ति के बारे में कुछ नहीं कहा गया। राजकीय (प्रान्तों) कार्य अपने–अपने राज्य की भाषा में किये जा सकते हैं। सरकार की इस दोषपूर्ण नीति का हिन्दी के विकास एवं उन्नति पर अच्छा प्रभाव नहीं पड़ा । हालांकि स्वतंत्रता के बाद हिन्दी भाषा का काफी विकास हुआ। कला विषयों के अतिरिक्त विज्ञान, वाणिज्य एवं अन्य टेक्नोलोजी के विषयों की पुस्तकें उपलब्ध होने लगी है। हिन्दी के प्रसिद्ध विद्वान रामवृक्षसिंह ने कहा कि देश की 80 प्रतिशत जनता हिन्दी में बोल, समझ एवं लिख भी सकती है। इसके विकास में मीडिया की भूमिका अहम् है। कम्प्यूटर ने भी इस कार्य को आगे बढ़ाया है। संविधान की भी भावना को पूर्ण करने के लिये केन्द्रीय सरकार ने हिन्दी भाषा के विकास एवं उन्नति के लिये कई महत्वपूर्ण कदम उठाये है। जैसे अहिन्दी भाषी अधिकारियों, कर्मचारियों को हिन्दी पढ़ाने के लिये देश के विभिन्न भागों में प्रशिक्षण केन्द्र खोले हैं। हिन्दी अधिकारी, हिन्दी टाइपिस्ट प्रत्येक मंत्रालय के हर विभाग में भर्ती किये गये। अहिन्दी भाषियों के उनकी पदोन्नति में वरीयता दी गई। प्रत्येक साक्षात्कार बोर्ड में एक सदस्य हिन्दी विशेषज्ञ होगा, साक्षात्कार में उम्मीदवारों को हिन्दी–अंग्रेजी में बोलनें की अनुमति होगी। सरकार के प्रयासों के अतिरिक्त अनेकों स्वैच्छिक हिन्दी संस्थाओं के द्वारा क्षेत्रीय, प्रान्तीय, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी सम्मेलनों का आयोजन किया जाना। लेकिन फिर भी हिन्दी की उन्नति के संतोषजनक परिणाम नहीं रहे।

1. सरकार की भाषा नीति दोशपूर्णः–

केन्द्रीय सरकार ने 1949 को यह अश्वासन दिया था कि अंग्रेजी 15 वर्ष के के बाद समाप्त कर दी जायेगी। ऐसा नहीं हुआ। इससे दफ्तरों में अंग्रेजी का बर्चस्व बना रहा और प्रायः देखा गया कि

साक्षात्कार में अंग्रेजी भाषा में बोलने वाले उम्मीदवारों को वरीयता दी गई।

2. हिन्दी भाषा के सम्बन्ध में सरकार की ढुलमुल नीतिः–

इसका प्रभाव अविभावकों की मानसिकता पर बहुत बुरा पड़ा। उनको सरकार पर संदेह होने लगा कि सरकार हिन्दी भाषियों के प्रति न्यायोचित व्यवहार नहीं कर रही। इस नीति के कारण अविभावकों को यह महसूस हुआ कि मेरे बच्चों का उज्जवल भविष्य हिन्दी में न होकर अंग्रेजी भाषा में निहित है। अतः अविभावमी वाध्य होकर अपने बच्चों को पब्लिक स्कूल में भेजने लगे हैं। इस सम्बन्ध में अशोककुमार ने कहा जब तक संविधान में अंग्रेजी प्रतिष्ठत रहेगी तब तक हिन्दी और उसके साथ ही भारतीय भाषाओं को उचित स्थान नहीं मिल सकता।

3. रागात्मक चेतना का अभावः–

डॉ. मार्कण्डेयसिंह ने कहा स्वतंत्रता के पूर्व भारत में अपनी भाषा की स्वतंत्रता के बाद उसमें कमी आयी । यह चिन्ता का विषय है।

4. कार्यालयों में हिन्दी में काम करने का वातावरण नहीं:–

प्रायः देखने में आया है कि अधिकांश दफ्तरों में काम करने का ढंग पुराना ही है–जो अंग्रेजी भाषा से प्रभावित है। ऊँचे पद पर कार्यरत पदाधिकारी हिन्दी में कार्य करने के लिये प्रोत्साहन न देकर हिन्दी में काम करने वालों को हतोत्साही करते हैं।

5. दफ्तरों की हिन्दी कठिन होती है ।

6. भूमण्डलीयकरण एवं बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के आने के कारण भी हिन्दी भाषा के विकास में बाधा पड़ी है– व्यापारिक सम्बन्धों और उनकी जानकारी लेने और देने में केवल अंग्रेजी का प्रयोग किया जाता है और आधुनिक यन्त्रों में अंग्रेजी में ही काम होता है। राष्ट्रीय वं अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में व्यापार का अधिकांश कार्य अंग्रेजी में ही किया जाता है।

7. विदेशी सभ्यता एवं संस्कृति से प्रभावित युवा पीढ़ी जाने अनजाने हिन्दी की उपेक्षा करती है।

8. विदेशी भाषाओं के प्रति आसक्ति रखने वाले लोगों की संख्या में दिन–प्रतिदिन वृद्धि हो रही है और यह कहना असत्य न होगा देश की जनता के एक वर्ग (कुलीन) ने अंग्रेजी को ही अपनाया और हिन्दी की उपेक्षा की। सार्वजनिक आयोजनों एवं शादियों, जन्मदिन आदि आयोजन में भी कार्ड अंग्रेजी में ही होते हैं।

9. भारत में रहने वाले एक विशिष्ट वर्ग जो अंग्रेजी से अधिक प्रभावित है–उसकी मानसिकता है कि अंग्रेजी भाषा में बोलना लिखना प्रतिष्ठा एवं बड़प्पन का विषय है।

इसी संदर्भ में हिन्दी के एक विद्वान अनिल चमड़िया ने कहा ''अंगेजी के जाने के बाद देश में ही एक

अंग्रेजी भाषी वर्ग विकसित हुआ है इससे भी हिन्दी की प्रगति में बाधा पड़ी है। त्रिभुवन नाथ शुक्ल के शब्दों में'' इस बाजार भाव ने हमारे जीवन की स्वामित्रता को नष्ट कर दिया है। विज्ञापनों में हिन्दी वाक्य अंग्रेजी अक्षरों के द्वारा लिखे जाते है। साधारण जनता पर इसका बुरा प्रभाव पड़ा है। यह दुख की बात है कि केन्द्रीय सरकार द्वारा नियंत्रित दूरदर्शन में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के ऐसे विज्ञापन लगातार प्रसारित किये जाते है। हिन्दी भाषा की प्रगति एवं सम्मान के लिये कुछ प्रमुख सुझाव निम्नलिखित हैं।

1. सरकार की भाषा नीति स्पष्ट होनी चाहिये ।

   सरकार को हिन्दी भाषा के सम्बन्ध में स्पष्ट नीति घोषित करनी चाहिये ।

2. स्नातकोत्तर (बीए) तक सरकार की ओर से पूरे देश में एक ही पाठ्यक्रम लागू करना चाहिये और साथ ही साथ हिन्दी को अनिवार्य भाषा भी घोषित करना चाहिये ।

3. जो अधिकारी हिन्दी को प्रगति में एवं कार्य संचालन में बाधा पहुंचाते हैं। उनके विरूद्ध विभागीय कार्यवाही करनी चाहिये।

4. ऐसा देखा गया है कि सरकारी एवं अर्द्धसरकारी सेवाओं में अंग्रेजी में परीक्षा एवं साक्षात्कार देने वालों की नियुक्ति हिन्दी की अपेक्षा अधिक होती है। इस स्थिति की निष्ठा एवं शक्ति के साथ निष्पक्ष जॉच कराई जाये और दोषी पाये जाने वाले अधिकारियों के विरूद्ध सख्त कदम उठाये जायें।

5. हिन्दी की प्रगति एवं प्रचार–प्रसार के लिये देश के कोने–कोन में स्वैच्छिक हिन्दी संस्थाएं संचालित हैं। लेकिन निष्ठा एवं आर्थिक अभाव के कारण वे अपने कर्तव्य का निर्वाह ठीक प्रकार से नहीं कर पा रही हैं। अतः सरकार को चाहिऐ कि इन संस्थाओं को सर्वदा आर्थिक सहायता दे।

6. हिन्दी को व्यवसायिम शिक्षा से जोड़ने का प्रयास करें।

7. सभी सरकारी, अर्द्धसरकारी कार्यालयों, संस्थानों के नाम एवं पदाधिकारियों के नाम हिन्दी में लिखे गाए।

8. यदि सरकार हिन्दी के प्रति निष्ठावान है तो उसे पब्लिक स्कूलों पर नियंत्रण रखना चाहिये। और यह देखें कि यह स्कूल हिन्दी की उपेक्षा तो नहीं कर रहे। यदि ऐसा हो तो सरकार को उनकी मान्यता समाप्त कर देना चाहिये।

महेन्द्र प्रताप सिंह
से.नि.शिक्षा अधिकारी, दिल्ली

अस्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा (केदारनाथ) (यात्रा संस्मरण)

संसार के विभिन्न धर्मों की आश्रय स्थली भारत में सनातन धर्म के धर्मावलंबियों की संख्या सबसे अधिक है। जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है ''सनातन'' शब्द का अर्थ है जिसका आदि या अंत नहीं है अर्थात् जो अनंत काल से चला आ रहा है। ''वसुधैव कुटंबकम'' का आदर्श, सनातन धर्म का मूल सिद्धांत रहा है तथा विश्व को शांति का संदेश आदि काल से ही यह धर्म देता आ रहा है। इस धर्म के मतावलंबियों की पावन स्थली ''केदारनाथ'' हिमालय की गोद में स्थित वह रमणीय स्थल है वहां पहुंचने पर मन स्वयं को जीवन के कंटकाकीर्ण अनुभवों से दूर एक अलौकिक आनंद से ओत–प्रोत पाता है।

मानव मन की मूल प्रकृति शांति में स्थित होना है। इसीलिए सांसारिक दांव–पेंचों से आहत मन अंततः शांति की ओर ही उन्मुख होता है। मानव को शास्वत शांति प्रकृति के सान्निध्य में ही मिल सकती है। शहरों की भीड़–भाड़ तथा घुटन भरे माहौल से दूर प्रकृति की गोद में स्थित उत्तराखंड के चार धामों में से एक ''केदारनाथ'' की यात्रा का संयोग 2012 के मई माह में बना। तदनुसार अपने परिवार के सदस्यों के साथ हम दिल्ली से 19 मई 2012 को समुद्र तल से 3584 मीटर की ऊँचाई पर स्थित इस पावन स्थल की यात्रा पर चल पड़े। भगवान शिव के 12 ज्योतिर्लिंगों में से केदारनाथ एक है अन्य के नाम तथा स्थान इस प्रकार है :–

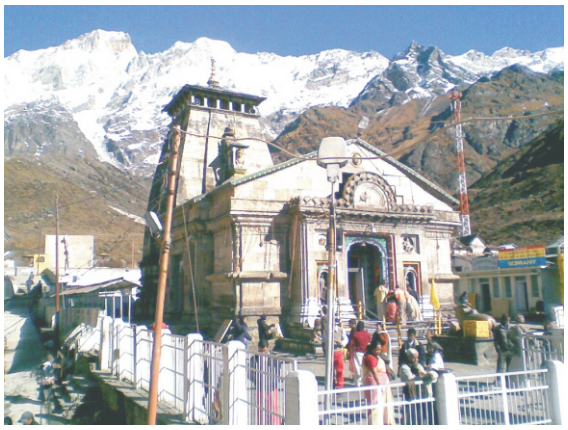

सौराष्ट्रे सोमनाथ च श्रीशैले माल्लिकार्जुनम
उज्जयिन्यां महाकालं, ओंकार ममलेश्वरम
परल्यां वैजनाथं चं दाकिन्यां भीमशंकरम् ।
शेतुबधेतु रामेशं नागेशं, दारूकावने
बाराणभ्योतु विशेषं त्रयंबकं गोमती तटे
हिमालयेशु केदारं घृश्णेक्षं च शिववालये ।।

मई माह में जहाँ देश के मैदानी भागों में गर्मी की भीषण तपन से लोग संतप्त रहते हैं। हमने हरिद्वार में ''हर की पौड़ी पर गंगा के शीतल जल में स्नान करके स्वयं को तरो–ताजा महसूस किया। दिनांक 20.05.2012 को प्रातः 9.00 बजे हमने हरिद्वार से एक टैक्सी किराए पर बुक की तथा चल पड़े केदारनाथ यात्रा पर । हरिद्वार से 25 कि.मी. दूर ऋषिकेश में भी काफी गर्मी थी। यहां से आगे पर्वतीय मार्ग शुरू हो जाता है जहाँ सर्पाकार रास्तों पर चलते हुए गाड़ी हमें गंगा नदी के नयनाभिराम प्रवाह का

साक्षी बना रही थी। नदी के उस पार नीलकंठ महादेव के लिए सड़क नजर आ रही थी।

ऋशिकेश से 74 कि.मी. दूर देव प्रयाग नामक तीर्थ स्थान आता है जहाँ पर भागीरथी तथा अलकनन्दा नदियों का पवित्र संगम है। यहीं से इनका सम्मिलित रूप ''गंगा'' कहा जाता है। जिसका पवित्र जल लगभग हर घर में श्रद्धा तथा आदर के साथ रखा जाता है।

देवप्रयाग से 34 कि.मी. की दूरी पर श्रीनगर आता है तथा श्रीनगर से रूद्र प्रयाग की दूरी 33 कि.मी. है। यहां पर अलकनंदा तथा मंदाकिनी नदियों का संगम होता है। यहां से बद्रीनाथ तथा केदारनाथ के मार्ग अलग हो जाते हैं। रूद्रप्रयाग तक हमें काफी गर्मी लग रही थी परन्तु वहां से जैसे–जैसे हम आगे बढ़ते गए बाहर का तापमान धीरे–धीरे कम होने लगा। हम निरंतर ऊंचाई पर बढ़ते चले जा रहे थे। पर्वतों के बीच शीतल पानी के स्रोत दिखे जिनका शीतल जल पीने के बाद शरीर में ताजगी का अहसास हो रहा था। उत्तराखंड में ''कुमाऊँ'' तथा ''गढ़वाल'' दोनों ही पर्वतीय क्षेत्र हैं। ''कुमाऊँ'' क्षेत्र में स्थित पहाड़ों की तुलना में ''गढ़वाल'' क्षेत्र में स्थित पहाड़ एकदम खड़े हैं जिन पर चढ़ना कठिन होता है। यह सम्पूर्ण पर्वतीय क्षेत्र ''देवभूमि'' के नाम से जाना जाता है। यहां के मूल निवासी सरल तथा निश्छल स्वभाव के होते हैं तथा घरों पर ताले नहीं लगाए जाते हैं।

शाम के 5.00 बजे हम ''गौरी कुंड'' पहुंच गए थे। यहां से आगे सड़क मार्ग नहीं है। अतः यहीं पर हमने होटल में कमरा बुक किया। होटल में ही शाम को एक व्यक्ति हमारे कमरे में आ गया तथा सुबह गौरी कुंड से केदारनाथ मंदिर जाने के लिए उसने उसके घोड़े बुक करने के लिए हमसे कहा। अगले दिन सुबह 5.00 बजे घोड़े वाला व्यक्ति हमारे कमरे में ही आ गया तथा हमारा मार्गदर्शन करते हुए पहले गौरी कुंड में स्नान कराने के लिए ले गया। इतने शीतल प्रदेश में गौरी कुंड में गर्म पानी का स्रोत देखकर प्रकृति की इस अनुपम व्यवस्था को देखकर आश्चर्य होता है। यहां पर स्नान करने के बाद आगे की 14 कि.मी. की यात्रा के लिए घोड़ा बुक करने हेतु बने सरकारी काउंटर पर 1600 रू. प्रति घोड़े की दर से पैसे जमा किए तथा रसीद घोड़े वाले को दे दी। तत्पश्चात् यहां से आगे की यात्रा हमने घोड़े पर सवार होकर की क्योंकि आगे कोई वाहन नहीं जा सकता।

गौरीकुंड से केदारनाथ के 14 कि.मी. के रास्ते पर पत्थर बिछे हुए हैं जिन पर लगातार घोड़ों की टापों से निरंतर घर्षण तथा प्रहार के कारण गड्ढे बन चुके हैं। रास्ते में कई जगह सीढ़ियॉ बनी हुई हैं तथा खड़ी चढ़ाई है जिस पर चढ़ते हुए संतुलन बनाना आवश्यक हो जाता है। लगभग 10–12 फीट चौड़े रास्ते में आने–जाने वालों की भारी भीड़ देखते ही बन रही थी। बीमार, वृद्ध तथा बच्चे पालकी तथा पिट्ठू पर जा रहे थे। पहाड़ों पर निरंतर ऊंचाई पर चढ़ते हुए 7 कि.मी. की दूरी पर ''रामबाड़ा'' नामक स्थान आया। यहां पर घोड़े वालों ने अपने घोड़ों को रोका। हमने चाय पी तथा घोड़ों को चारा

दिया गया। 15 मिनट बाद हम आगे की यात्रा पर चल पड़े। यहां से पर्वतों के हिमाच्छादित श्वेत शिखर जहां मन को मोह रहे थे वहीं लगभग हर 15 मिनट बाद घाटी को गुंजायमान करते हुए तीर्थयात्रियों को लेकर जाते हुए हेलीकॉप्टर समानांतर रूप से केदारनाथ को जा रहे थे। नीचे कल–कल करती हुई मंदाकिनी नदी चरैवेति–चरैवेति का शास्वत संदेश दे रही थी। चार घंटे की इस कठिन पर्वतीय यात्रा के बाद हम 11.00 बजे केदारनाथ पहुंचे। हिम के मुकुट से शोभित पर्वतों के बीच ऐतिहासिक केदारनाथ मंदिर के आध्यात्मिक वातावरण के बीच स्वयं को पाकर मन आह्लादित हो उठा। जब हम यहां पहुॅचे, खिली हुई धूप थी तथा केवल 20 मिनट के अंतराल में घटाएं घिर आईं तथा प्रकृति ने आकाश से श्वेत पुष्पवत हिम–कणिकाओं की बरसात करके हमारा स्वागत किया। इसके 15 मिनट बाद फिर से धूप खिल उठी। दिल्ली में जहां गर्मी की तपन से हम परेशान थे, यहां गर्म से गर्म कपड़े भी ठंड को रोक नहीं पा रहे थे।

कत्यूरी शैली की अनूठी स्थापत्य कला में निर्मित (जनश्रुति के अनुसार पांडवों द्वारा निर्मित) और आदि शंकराचार्य द्वारा जीर्णोद्वारकृत, पुराणोक्त भगवान शिव के द्वादश ज्योतिर्लिंगों में से सर्वाधिक ऊंचाई पर स्थित वास्तुकला की अनूठी कृति केदारनाथ मंदिर के दर्शन करने का सौभाग्य अंततः हमें मिला। मुझे आश्चर्य हुआ कि केवल हिन्दू ही नहीं बल्कि विदेशों से भी आए हुए कई पर्यटक यहां दिखाई दिए। पहाड़ों के बीच यहां कुछ समतल भूमि दिखाई दी तथा सामने ही हेलीपेड भी बना है जहां से हेलीकॉप्टर से लोग फाटा नामक स्थान के लिए निरंतर आ–जा रहे थे।

उत्तराखंड के रूद्रप्रयाग जिले में स्थित यह सुप्रसिद्ध मंदिर अक्षय तृतीया (मई) से लेकर भाईदूज (नवंबर) तक खुला रहता है। इसके बाद अत्यधिक ठंड तथा बर्फबारी के कारण मंदिर बंद हो जाता है तथा भगवान शिव की मूर्ति ऊखीमठ में ले जाई जाती है। इस दौरान केदारनाथ में कोई नहीं रहता परन्तु हमें यह जानकर आश्चर्य हुआ कि कुछ ऐसे संयासी भी हैं जो बारहों महीने यहाँ गुफा के अन्दर रहते हैं।

प्रकृति प्रेमियों के लिए भी यह स्थान निश्चित रूप से अनूठा है। प्रकृति तथा आध्यात्म को समन्वित रूप में देखते हुए हमने सर्वशक्तिमान शिव से यही प्रार्थना कीः– ''तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु''।

पी.सी.खुल्वे,
केन्द्रीय विद्यालय संगठन, जम्मू

पत्रकारिता का भविष्य

भविष्य के गर्भ में पत्रकारिता की कुछ मिसाल है तो वर्तमान के आंचल में कुछ काली खबरों की कहानी भी है। ऐसे में न तो हम संस्कार पर टिके रहने की बात कर सकते हैं, न तो भ्रष्टाचार का भूत भगाने की। आज पत्रकारिता के व्यापारिक दृष्टिकोण ने उसे जनता के प्रति उदासीन बना दिया है। कभी समाचार पत्र संदेश वाहक माने जाते थे। लोकतंत्र में एक जागरूक प्रहरी की भूमिका को ध्यान में रखकर जो पत्रकारिता को संविधान में दी गई, उसकी भूमिका लक्ष्मी की गोद में समा गई। क्या होगा देश का, समाज का, धरती से जुड़ी जनभावनाओं का, जब बड़े–बड़े व्यवसायी घराने एक के बाद एक मीडिया समूहों का अधिग्रहण करते जा रहे हैं। इसमें सिर्फ इनका व्यावसायकि हित और राजनीतिक भागीदारी निहित है। आज पढ़ने, सुनने, देखने में आता है कि सदी के विकास का आधार सूचना क्रांति है। आज इस क्रांति ने पृथ्वी की अनेक संस्कृतियों को मिटा दिया। देश आज इसी त्रासदी से संघर्ष करने में परेशान है। हम पूछते हैं कि क्या कृषि प्रधान देश को आम आदमी के लिये 3 जी, 4 जी की जरूरत है या मानवीय मूल्यों की, जिससे भारत समृद्ध हुआ। पचास साल पहले और आज के गांव का अन्तर यही है कि जड़ पदार्थ विकसित हुये, चेतना गायब हुई। आज हमारी कलम जड़ चीजों को प्राप्त करने में अपनी चेतनता खो रही है। देश की हर तरह की मीडिया का वैचारिक रसायन लगभग एक है। उनके विकास का गणितीय सूत्र एक है। मीडिया खास की बात करने लगा है। जबकि भारत आम लोगों का प्रतिनिधित्व करता है। जितना आजाद हिन्दुस्तान नहीं है उतनी आजाद उसकी कलम है। आप कह सकते हैं कि आजाद कलम निरंकुश है। तानाशाह है या मज़ाकबाजी है। क्या यही सब पत्रकारिता का संवैधानिक उपचार है। आज मर्यादित पत्रकारिता करने वाले सामान्य जीवन ही जी पाये। आज श्रेष्ठ साहित्यकार या पत्रकार लोकप्रिय नहीं है जो भविष्य के लिये खतरनाक है। साहित्यकारों, पत्रकारों, लेखकों का बाज़ार गर्म है। घूर पर उगे कुकुरमुत्ते से भी ज्यादा संख्या में इनकी बढ़त है और चमक है। उछलकूद में सिद्धहस्त कलम, लेखनी नहीं पद से पहचानी जाती है। आज बड़ी कलम का अर्थ है। जो बटन सही दबाये न कि सही लिखे–आज समृद्ध पत्रकारिता आकर्षण युक्त पत्रकारिता की भीड़ में गुम है। प्रश्न ये है कि हम आने वाले समय में समर्थ कलम की अनुवांशिकता को कैसे स्थानान्तरित करेंगे ? क्या आने वाली पीढ़ी ओछेपन को, बिकाऊपन को, कलम के नगरवधू होने को ही इसकी अनुवांशिकता समझे ? जरूरत है कि कुछ लोग ही सही इस क्षेत्र में पुनर्जागरण जैसी क्रांति लायें और पत्रकारिता को लोकतंत्र का दर्पण बनायें । ये सच है कि – हमेशा चरमराती हुई व्यवस्था को पटरी पर लाने के लिये सिद्धान्तों की लड़ाई लड़नी पड़ती है तब जाकर नई व्यवस्था का जन्म होता है। वर्ना अस्मितत्व को प्रकाश में लाने के लिये हमें अपने ही स्वाभिमान का चीरहरण करना पड़ेगा और तालमेल बैठाने के लिये विचारों की नग्नता को स्वीकारना पड़ेगा ।

रचना तिवारी
सोनभद्र रावर्ट्सगंज

हिन्दी में समानार्थ शब्दों का अर्थगत विश्लेषण

माधवी,
शोध अध्येता,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी (उ.प्र.)

किसी भाषा की शब्दावली कई शाब्दिक समूहों को अन्तर्विष्ट करते हैं, समानार्थक उनमें से एक है। जिन शब्दों के अर्थ समान होते हैं उन्हें समानार्थक शब्द या पर्यायवाची शब्द कहते हैं, अर्थात दो शब्दों को समानार्थक शब्द कहते हैं जब दोनों का अभिप्राय समान हों, जैसे–सहायता–मदद, धारणा–भावना और अनादर–अपमान इत्यादि। यह लेख प्रस्तुत करता है कि समानार्थक शब्दों का प्रयोग कैसे किया जाता है, कभी–कभी समानार्थक शब्दों को परस्पर बदला जा सकता है परन्तु कभी–कभी उनका प्रयोग पृथक–पृथक किया जाता है, कोई भी दो शब्द पूर्ण रूप से समानार्थी नहीं होते हैं उनमें सूक्ष्म भिन्नता होती है, उदाहरण के लिए–पानी और जल दोनों समानार्थक शब्द हैं परन्तु दोनों को हमेशा परस्पर नहीं बदला जा सकता है जैसे–जलपान गृह और गंगा जल, इन दोनों में जल का प्रयोग उचित है जल के स्थान पर पानी का प्रयोग नहीं किया जा सकता है। जिन समानार्थक शब्दों का विवेचन हम करने जा रहे हैं वह वाराणसी के हिन्दी वक्ताओं के उच्चारित भाषा से लिया गया है।

समानार्थक शब्दों के अर्थ में समरुपता होती है। परन्तु सभी शब्द समान नहीं होते, प्रत्येक शब्द की अपनी विशेषता होती है। क्योंकि अधिकांश समानार्थक शब्द अर्थ में समान होते हैं किन्तु प्रयोग और कुछ श्रेणी के अर्थों में उनमें भिन्नता होती है। उदाहरण के लिए–भगवान शिव के कई नाम हैं जैसे–विश्वनाथ, महादेव, नीलकंठ, त्रीनेत्र, भोलेनाथ, अर्धनारीश्वर इत्यादि, किन्तु प्रत्येक नाम अर्थ में भिन्न होते हैं और कृपा और दया में समानता होती है लेकिन कुछ वाक्यों में दोनों को प्रतिस्थापित नहीं किया जा सकता है, जैसे–प्रार्थना पत्र में हम कृपा करें प्रयोग करते हैं दया करें नहीं प्रयोग कर सकते हैं और उसी प्रकार उसकी स्थिती देखकर हमें दया आ गयी, यहां दया के स्थान पर कृपा का प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

हिन्दी में समानार्थकताः–

हिन्दी में असंख्य समानार्थक शब्द हैं, उनमें से कुछ यहां लिए गये हैं–

भूल–गलती

ये दोनों ही शब्द समानार्थक शब्द है। और ये दोनों ही शब्द कभी–कभी एक दूसरे से परस्पर बदले जा सकते हैं परन्तु कभी–कभी उनका प्रयोग पृथक–पृथक किया जाता है। जैसे–

- उस लड़की को तुच्छ समझना तुम्हारी भूल है।

- वह भूल मुझसे गलती से हो गयी।

उपर्युक्त वाक्यों में भूल के स्थान पर गलती शब्द का प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

- मैंने पत्र लिखते समय भाषा की गलती कर दी।
- राम को एहसास हो गया कि उसने जानबूझ कर गलती की थी।

उपर्युक्त वाक्यों में गलती के स्थान पर भूल शब्द का प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

- कृपया मेरी उस गलती के लिए आप मुझे माफ कर दीजिए।
- लेकिन उपर्युक्त वाक्य में गलती के स्थान पर भूल शब्द का प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

कष्ट–तकलीफ

- यदि आप यहाँ आने का कष्ट करें तो अच्छा होगा।
- यदि आप मेरे लिए कष्ट क्यों करते हैं ।
- उपर्युक्त वाक्यों में कष्ट के स्थान पर तकलीफ शब्द का प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

यदि आप ने आने की तकलीफ कैसे की ।

उसी प्रकार उपर्युक्त वाक्य में तकलीफ के स्थान पर कष्ट शब्द का प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

तारीफ–प्रशंसा

- वह जैसा भी है सब उसकी तारीफ करते हैं।
- सम्मान के योग्य लोगों की सभी तारीफ करते हैं।

उपर्युक्त वाक्यों में तारीफ के स्थान पर प्रशंसा शब्द का प्रयोग नहीं किया जा सकता है। लेकिन घ

- सम्मेलन के बाद कवि की सभी ने बहुत प्रशंसा की।

इसी तरह के वक्तव्यों में लोग अधिकतर प्रशंसा ही प्रयोग करते हैं तारीफ बहुत कम प्रयोग किया जाता है।

भेद–अन्तर

- बच्चों ने सच और झूठ में भेद किया था।
- काले और गोरे में कोई भेद नहीं है।

उपर्युक्त वाक्यों में भेद के स्थान पर अन्तर का प्रयोग भी किया जा सकता है लेकिन ज्यादातर भेद ही प्रयोग करते हैं। जबकि अन्य कथन में जैसे –

- राम और श्याम में ज़मीन आसमान का अन्तर है।

इस वाक्य में अन्तर के स्थान पर भेद का प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

मित्रता–दोस्ती

- एक समाज को दूसरे समाज से मित्रता रखनी चाहिए।

उपर्युक्त वाक्य में मित्रता के स्थान पर दोस्ती का प्रयोग भी किया जा सकता है, क्योंकि दोस्ती का प्रयोग करने पर बहुत ही अनियमित और विचित्र प्रतीत होता है।

- राम और श्याम के बीच बहुत गहरी दोस्ती है।

उपर्युक्त कथन में दोस्ती के स्थान पर मित्रता का प्रयोग भी कभी–कभी किया जा सकता है परन्तु दोस्ती शब्द ज्यादा उचित लगता है और दोस्ती को ही ज्यादा प्रयोग करते हैं ।

ऊँचा–लम्बा

- वह भवन बहुत ऊँचा है।

उपर्युक्त वाक्य में ऊँचा के स्थान पर लम्बा का प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

- राज अपने शहर का सबसे लम्बा आदमी है।

उपर्युक्त वाक्य में लम्बा के स्थान पर ऊँचा का प्रयोग नहीं किया जा सकता है, क्योंकि जब हम सप्राण लोगों के विषय में चर्चा करते हैं तो हम लम्बा ही प्रयोग करते हैं ऊँचा नहीं प्रयोग करते हैं परन्तु निर्जीव चीजों के सन्दर्भ में ज्यादातर ऊँचा ही प्रयोग किया जाता हैं।

शंक–संदेह

- तुम किस बात पर शंका कर रहे हो।

इस प्रकार के वक्तव्यों में ज्यादातर शंका ही प्रयोग करते हैं लेकिन शंका के स्थान पर सन्देह का प्रयोग भी किया जा सकता है।

- भगवान पर सन्देह करना गलत है।

लेकिन उपर्युक्त वाक्य में सन्देह के स्थान पर शंका का प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

चिन्तनीय–विचारणीय

- गरीबों की स्थिती चिन्तनीय है।

इस तरह के कथन में चिन्तनीय के स्थान पर विचारणीय का प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

- आपके मुताबिक विचारणीय मुद्दा क्या है।

उसी प्रकार इस कथन में विचारणीय के स्थान पर चिन्तनीय का प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

हैरान–परेशान

- उसकी बात सुनकर सब हैरान रह गये।

उपर्युक्त वाक्य में हैरान के स्थान पर परेशान का प्रयोग नहीं किया जा सकता है। जिस प्रकार इस कथन में दोनों समानार्थक शब्दों को परस्पर नहीं बदला जा सकता है, उसी प्रकार अन्य वाक्य में जैसे–

- किसी को नहीं मालूम वह परेशान क्यों है।

इस वाक्य में परेशान के स्थान पर हैरान का प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

अद्भुत–विचित्र

- क्या अद्भुत नज़ारा था वहां का।

इस तरह के वाक्यों में अद्भुत शब्द ज्यादा लगता है उसके स्थान पर विचित्र का प्रयोग ज्यादातर नहीं किया जाता है परन्तु केवल कुछ प्रसंगों में ही विचित्र का भी प्रयोग किया जा सकता है।

- वह बहुत विचित्र आदमी है।

उपर्युक्त वाक्य में विचित्र के स्थान पर ज्यादातर अद्भुत का प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

बलिदान–कुरबानी

- महान व्यक्ति अच्छे कार्यों के लिए अपने सुखों का बलिदान कर देते हैं।

उपर्युक्त वाक्य में बलिदान के स्थान पर कुरबानी का प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

- भगवान को प्रसन्न करने के लिए पशुओं की कुरबानी दी जाती है।

उसी प्रकार इस वक्तव्य में भी कुरबानी के स्थान पर बलिदान का प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

वायदा–प्रतिज्ञा

- तुमने उससे वायदा किया था कि तुम उसका साथ दोगे।

उपर्युक्त वक्तव्य में वायदा के स्थान पर प्रतिज्ञा का प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

- उसने आज से अच्छा काम करने की प्रतिज्ञा ली है।

उसी प्रकार इस कथन में भी प्रतिज्ञा के स्थान पर वायदा का प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

निश्कर्श

इस प्रकार इस लेख में मैंने कुछ हिन्दी से लिए गये समानार्थक शब्दों के समूहों को प्रस्तुत करने

की कोशिश की है। यद्यपि समानार्थक का अर्थ होता है एक या समान वस्तु परन्तु फिर भी उनके अर्थों में सूक्ष्म भेद होता है, उनका वर्गीकरण पृथक–पृथक होता है और उन समानार्थक शब्दों को हमेशा परस्पर नहीं बदला जा सकता है।

ग्रंथ–सूची

एल.वार्शनेय, लेट डॉ. राधेय. 2005–06. एन इन्ट्रडक्टरी टैक्स्टबुक ऑफ लिंग्विस्टिक्स एण्ड फनैटिक्स.स्टूडेन्ट स्टोर, बरेली ।

बहल, के.सी. 1974. स्टडीज़ इन दी स्ट्रक्चर ऑफ हिन्दी. वौल्यूम फर्स्ट ।

सक्सेना, डॉ. द्वारिका प्रसाद, सिंह डॉ. उदय प्रताप. 2013. भाषा विज्ञान के सिद्धान्त और हिन्दी – भाषा मीनाक्षी प्रकाशन, एकेडेमिक प्रेस, मेरठ ।

गीतांजलि संस्था, शिकोहाबाद (तु.प्र.) द्वारा गीतांजलि सम्मान-काव्य समारोह:-

शिकोहाबाद 20 सितम्बर हिन्दी पखवाड़े के उपलक्ष्य में एक काव्य समरोह का आयोजन श्री ओम प्रकाश बेवरिया के आवास पर वरिष्ठ साहित्यकार ज़नाब मंजर उल वासै की अध्यक्षता में किया गया, जिसमें श्री राम कैलाश देव इलाहाबादी द्वारा रचित, प्रकाशित उनकी चार पुस्तकों के आधार पर सन् 2013 का गीतांजलि सम्मान प्रदान किया गया। गीताजंलि संस्था के संरक्षक डॉ. चन्द्र वीर जैन तथा अध्यक्ष रामदास सैनी द्वारा उन्हें शॉल उढ़ाकर प्रशस्ति पत्र प्रदान कर सम्मानित किया। इस अवसर पर जम्मू से पधारे डॉ. अमर सिंह, वरिष्ठ हिन्दी अधिकारी एवं सदस्य–सचिव, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जम्मू को मुख्य अतिथि के रूप में शॉल उढ़ाकर सम्मानित किया किया गया तथा राष्ट्रीय कवि बहादुर सिंह निर्दोशी को विशिष्ट अतिथि के रूप में शॉल उढ़ाकर सम्मानित किया गया।

काव्य समारोह का शुभारम्भ निर्दोश कुमार प्रेमी की वाणी वन्दना से हुआ।

जिसके सिर, माँ का आर्शीवाद है,

वो अस्वाद है।

तत्पश्चात मंजर उलवासै ने 'भारतीय संस्कृति और भाषाईविवाद' पर एक आलेख का पाठ किया, जिसमें भारतीय भाषाओं की महत्ता तथा विस्तार पर प्रकाश डाला गया। इसके बाद डॉ. अमर सिंह ने हिन्दी के इतिहास, उत्पत्ति तथा लोक जीवन में इसकी महत्ता पर विस्तार से व्याख्या की।

सर्वप्रथम सिंरसगंज से पधारे कवि राष्ट्रीय बहादुर सिंह निर्दोशी ने हिन्दी के विविध शब्दों की उत्पत्ति, अर्थ व भावोत्पादक व्याख्या करते हुये काव्य पाठ से श्रोताओं को खूब गुदगुदाया –

आग ने गोद में लेकर, स्वयं जिसकी समीक्षा की,

वह सीता की नहीं साक्षात हिन्दी की परीक्षा थी।

तत्पश्चात ओज कवि ओमप्रकाश बेवरिया ने हिन्दी पर काव्य रचना प्रस्तुत करते हुये कहा–

कर्मभूमि इस भारत भू से जन्म भूमि का नाता है,

जितनी बोली वतन में अपने हिन्दी सबकी माता है।

सम्मानित कवि, रामकैलाश पाल इलाहाबादी ने लोक गीत पढ़ कर खूब तालियॉ बटोरीः–

जिन पर डेंगू चढ़ा बुखार

को सुधारै बाबू जी ।

आयोजक ओमप्रकाश बेवरिया ने हिन्दी पर अपने विचार प्रस्तुत करते हुये, कहा कि हिन्दी का भविष्य उज्जवल है। स्वतंत्रता के पश्चात् विश्व में बोली जाने वाली भाषाओं में हिन्दी का स्थान पाँचवां था जबकि वर्तमान में चीनी भाषा के बाद विश्व में हिन्दी का स्थान दूसरा है। हिन्दी एक सहिष्णु भाषा है जिसमें सभी भाषाओं के शब्दों को आत्मसात करने की क्षमता है, यही इसकी मूल विशेषता है और इसकी व्यापकता का आधार है।

संरचनात्मक कर रहे अशोक अनुरागी ने हिन्दी पर काव्य पाठ प्रस्तुत करते हुए व्यंग्यात्मक शैली में काव्य प्रस्तुत किया–

हिन्दी के इस स्वाभिमान को जब कोई ललकारेगा,

कलम छोड़ हथियार उठा तब इंकलाब हम बोलेंगे।

हास्य कवि अनिल बेधड़क ने जिन्दगी को परिभाषित करते हुए कहा–

कुछ पल की जिन्दगी में इतना गुरुर क्यों ? बस लक्ष्य इसका दोस्तों दो गज जमीन है ।

कप्तान सिंह संघर्शी ने हिन्दी की महत्ता बताते हुये कहा–

भारत की शान हिन्दी और जिगर है हमारी हिन्दी,

तुलसी सूर कबीरा इसके बने पुजारी ।

गीतकार रवीन्द्र रंजन ने काव्य पाठ करते हुये श्रोताओं को खूब आह्ववालादित किया–

पीड़ा देवकी बनकर हृदय कारा में बन्दी है,

कन्हैया गीत बनकर के नया अवतार होना है।

हास्य कवि पहुँची लाल विशधर ने कहा–

खो जाती जो वस्तु कठिनता से मिल पाती,

अर्थी जा शमशान लौट कर फिर ना आती।

महेशचन्द्र मिश्र ने ओजस्वी स्वर में कविता पढ़कर सबको रोमांचित किया –

वीरों की गौरव गाथा, जब जब भी गाई जाती है,

है और नहीं कोई भाषा, हिन्दी में पाई जाती है।

सत्यदेव पाण्डेय ने कविता पाठ करते हुये कहा–

जीवन एक अबूझ पहेली, कोई मर्म नहीं जाना,

सत्यदेव को सत्य बताना अच्छा लगता है ।

डॉ. चन्द्रवीर जैन कहा –

मुमकिन है कि दामन धुल सके गंगा नहाने से,

फिर भी नहीं डरते हैं दाग दामन में लगाने से।

रामदास सैनी ने कहा–

टूटी कश्ती है तेज धारें हैं,

दूर हमसे हुये किनारे हैं।

इसके अतिरिक्त काव्य पाठ करने वालों में श्री उत्तमसिंह उत्तम, डॉ. ए.एस.खान, अवन्तिका, डॉ. विजय निर्मल, श्री रेशम सिंह, अल्हड़ तथा विद्वान श्री लक्ष्मी नारायण यादव आदि कवि थे। सभी कवियों व श्रोताओं का आभार व्यक्त गीतांजलि के उपाध्यक्ष श्री सत्यप्रकाश यादव ने किया तथा काव्य गोष्ठी का संचालन श्री अशोक अनुरागी ने किया। इस अवसर पर प्रो. श्रभ् राम आया पूर्व चैयमेन कृ प्र0 लाम मावा समाज सेवी श्री पी.एस.राणा आदि गणमान्य व्यक्ति भी उपस्थित थे।

श्री ओमप्रकाश 'बेवरिया' (राष्ट्रकवि)
शिकोहाबाद (उ.प्र)

गीत ''आदमी के लिये''

ये चेहरा बना देखने के लिये,
जुबाँ दी गई बोलने के लिये,
मत करो कदनुमा शाहे चेहरे जुबाँ,
आदमी है बना आदमी के लिये।
ये शहर है उगा आदमी के लिये,
इसकी शामो शहर आदमी के लिये।
प्रयत्न करता रहा उम्र भर आदमी,
आदमी ना हुआ आदमी के लिये ।
ये नावें खड़ी आदमी के लिये,
हंमको जाना उधर आदमी के लिये।
है ये खुशबू का डेरा इसमें वस जाइये,
सॉस लेते रहो आदमी के लिये ।
हंमको जीना यहाँ आदमी के लिये,
हंमको मरना यहाँ आदमी के लिये।
जबकि आये हैं सिर्फ आदमी के लिये,
फिर ये नफरत है क्यों अदमी के लिये।
ये धरती बनी आदमी के लिये,
इसका हर एक लम्हा आदमी के लिये।
आसमाँ झुक रहा आदमी के लिये,
आप झुक जाइये आदमी के लिये ।
है अँधेरा बहुत आदमी के लिये,
आदमी रोशनी आदमी के लिये।
आदमी आज क्यों इतना सस्ता हुआ,
जबकि महँगा है सब आदमी के लिये।

श्री ओमप्रकाश 'बेवरिया' (राष्ट्र कवि),
शिकोहाबाद (फिरोजाबाद)

फिर एक दिन

किसी का घर लुटा
कोई शहर यहॉ फिर बर्बाद हुआ
कोई ठंड से कोई गर्म से
अपने जीवन से आजाद हुआ
पर मेरे लिए क्या हुआ
सुबह की एक खबर
जिसे मैंने चाय के साथ पढ़ा
और फिर एक दिन
रोज की तरह शुरु हुआ ।

नजरअंदाजी

नजरअंदाजी हमारी फितरत सी हो गई है,
सही को गलत कहने की आदत सी हो गई है।
जज्बात ऐसे दफन हुए हैं कि
जलते हुए शहर में भी
रोटियॉ सेकने की ख्वाहिश सी हो गई है।
नजरअंदाज हमारी फितरत सी हो गई है,
सही को गलत कहने की आदत सी हो गई है।
वो भूख से तड़पता है,
दिन रात लड़ता है,
हमें इस भूखे के हाथ से
रोटियां छीनने की जरुरत सी हो गई है।
नजरअंदाज हमारी फितरत सी हो गई है
सही को गलत कहने की आदत सी हो गई है।

सोचता हूँ

सोचता हूँ
कि मैं तुम्हें कभी पा पाउंगा
या व्यर्थ ही होंगे मेरे सारे प्रयास
जिन्हें लेकर मैं आगे बढने की जद्दोजहद में हूँ।
क्या उन्हें उस मुकाम तक पहुँचा पाउंगा
या व्यर्थ ही होंगे मेरे सारे प्रयास।
जो उलझन सी है
तुमको लेकर मेरे जहन में
उसको सुलझा पाउंगा
या व्यर्थ ही होंगे मेरे सारे प्रयास।
अपने कल्पना के संसार को
हकीकत के कैनवास पर
उकेर पाउंगा
या व्यर्थ ही होंगे मेरे सारे प्रयास ।

गर तू....

गर तू मेरी जगह होता,
तो क्या तू भी वही करता
सब जानता, सब समझता
पर फिर भी खामोश रहता
या आवाज लगाता
चीखता चिल्लता ।

विकास शुक्ला
कार्यालय र.ले.प्र.नि.उ.क., जम्मू

भोजपुरी क्रिया रूप : एक तुलना

नेहा मौर्या,
प्रो. राजनाथ भट्ट
भाषा–विज्ञान विभाग,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी (उ.प्र.)

परिचय

प्रस्तुत शोध पत्र भोजपुरी क्रिया रूपों की व्याख्या करने की दिशा में एक प्रयास है। इस शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य भोजपुरी क्रिया रूपों की व्याख्या मानक हिन्दी और अवधी जो कि भोजपुरी के निकटवर्ती उप–भाषाओं में है, के समकक्ष करना है।

क्रिया

जिस शब्द अथवा शब्द–समूह के द्वारा किसी कार्य के होने अथवा करने का बोध हो उसे क्रिया कहते हैं। जैसे –

बच्चा खेल रहा है।

राम ने खाना खाया ।

, इनमें खेल रहा है, खाना खाया, शब्द व्यापार का बोध करा रहे हैं। इन सभी से किसी कार्य के करने या होने का पता चल रहा है अतः ये सभी क्रियाएं हैं।

धातु

क्रिया का मूल रूप धातु कहलाता है। जैसे – लिख, पढ़, जा, खा, गा, रो, पा इत्यादि। संस्कृत में धातु के बाद प्रातिपदिक बनता है फिर क्रिया की रचना होती है। किन्तु हिन्दी में धातु और प्रादिपदिक समान होते हैं। हिन्दी में इन्हीं धातुओं (या प्रादिपदिकों) से लिखता, पढ़ता, जाता आदि क्रियाएं बनती हैं।

भोजपुरी क्रिया रूप

क्रिया का उपयोग विधान करने में होता है और विधान करने में काल, रीति, लिंग और वचन की अवस्था का उल्लेख करना आवश्यक होता है।

क्रिया में वाच्य, अर्थ, पुरुष, लिंग और वचन के कारण विकार होता है। जिस क्रिया में ये विकार पाए जाते हैं और जिसके द्वारा विधान किया जा सकता है, उसे समापिका क्रिया कहते है, जैसे 'लड़का

खेलता है', इस वाक्य में 'खेलता है' समापिका क्रिया है, 'नौकर काम पर गया।' यहाँ 'गया' समापिका क्रिया है।

भोजपुरी में, सभी क्रियाओं में प्रथम पुरुष, एक वचन का प्रयोग कम पाया जाता है। ये सिर्फ कविताओं मे बहुधा देखने को मिल जते हैं। एकवचन की तुलना में बहुवचन का प्रयोग अपेक्षतया अधिक है। बहुवचन का प्रयोग ही शिष्ट या विनम्र माना जाता है। प्रथम पुरुष बहुवचन का प्रयोग मध्यम पुरुष की अपेक्षा में बहुधा सम्मान प्रकट करने के लिए होता है।

		पुलिंग	**स्त्रीलिंग**
1 पुरुष	**एकवचन / बहुवचन**	हम घर जात हई ।	**पुलिंग के सामान**
		मैं घर जाता हूँ ।	
2 पुरुष	**एकवचन / बहुवचन**	तू / तू सभे घरे जात हये । **(अशिष्ट)**	तू / तू सभे घरे जात हयी । **(अशिष्ट)**
		तुम घर जाते हो ।	तुम घर जाती हो ।
	एकवचन / बहुवचन	तू / तू सभे घरे जात हया । **(शिष्ट)**	तू / तू सभे घरे जात हऊ । **(शिष्ट)**
		तुम घर जाते हो ।	तुम घर जाती हो ।
3 पुरुष	**एकवचन / बहुवचन**	उ घरे जात हव् । **(अशिष्ट)**	**पुलिंग के सामान**
		वह घर जाता है / जाती है	
	एकवचन / बहुवचन	ओन सभे घरे जात हयन । **(शिष्ट)**	ओन सभे घरे जात हयीं। **(शिष्ट)**
		वे लोग घर जा रहे हैं ।	वे लोग घर जा रही हैं।

उपर्युक्त सारिणी से भोजपुरी में प्रयुक्त होने वाले निम्नलिखित काल विशेष में प्रयुक्त प्रत्ययों के बारे में पता चलता है।

अपूर्ण वर्त्तमान : /–त/

पूर्ण भूत : /–ल/

निकटतम भविष्य : /–ब/

शिष्ट पुलिंग : /–अन/

शिष्ट स्त्रीलिंग : /–इन/

मानक हिन्दी, भोजपुरी एवं अवधी के क्रिया रूपों की एक झलक

क्रमांक	प्रकार	अंग्रेजी	क्रिया	मानक हिन्दी	भोजपुरी	अवधी
1.	वर्त्तमान काल	To speak	बोल	बोलता है	बोलत	बोलत, बोलीत
	भूत काल			बोला	बेललीं, बोललस, बोललन	बोलेस, बोलीं, बोला
	भविष्य काल			बोलेगा	बोलब, बोलिहं	बोलब, बोलबो, बोलिहें
	प्रेरणार्थक	Make X to speak		बोला, बोलवा	बोलब, बोलवाइब	बोलत, बोलवाइब
2.	वर्त्तमान काल	To tell	कह	कहता है	कहलन	कहे, कहत
	भूत काल			कहा	कहलस / कहलेस	कहेस, कहीन
	भविष्य काल			कहेगा	कहिहं, कहीब, कहब	कहिहें, कहिब
	प्रेरणार्थक	Make X to tell		कहा, कहवाया	कही, कहवाइब	कही, कहवाइब
3.	वर्त्तमान काल	To Sleep	सो	सोता है	सुतत	सोत
	भूत काल			सोता था	सुतल, सुतलस	सोव किहिस,
	भविष्य काल			सोयेगा	सुतब, सोइब	सुतिब
	प्रेरणार्थक	To make X to sleep		सुला, सुल्वाना	सुताईब, सुतवाईब	सुताईब, सुतवाईब
4.	वर्त्तमान काल	To run	दौड़	दौड़ता है	दउड़त	दउड़त
	भूत काल			दौड़ता था	दउड़ा	दउड़ा, दउडेस
	भविष्य काल			दौड़ेगा	दउड़ीहं, दउड़ब	दउड़ीहं, दउड़ब
	प्रेरणार्थक	Make X to run, cause X to run		दौड़ाना, दौड़वाना	दउडाइब, दउड़वाईब	दउडाइब, दउड़वाईब
5.	वर्त्तमान काल	To walk	चल	चलता है	चलत	चलत
	भूत काल			चलता था	चलल, चललस	चलल, चललेस
	भविष्य काल			चलेगा	चलब	चलब
	प्रेरणार्थक	Make X to walk, cause X to walk		चलना, चलवाना	चलाइब, चलवाइब	चलाइब, चलवाइब
6.	वर्त्तमान काल	To stop	रुक	रुकता है	रुकत	रुकत, रुकित
	भूत काल			रुकता था	रुकल, रुकलस	रुकिस, रुकलेस
	भविष्य काल			रुकेगा	रुकब	रुकब
	प्रेरणार्थक	Make X to stop		रुकवाना	रुकवाइब	रुकवाइब
7.	वर्त्तमान काल	To take	ले	लेता है	लेत	लेब, लीन्ह
	भूत काल			लेता था	ल्लेस, लेहलेस	लिहिस

संयुक्त क्रिया

संयुक्त क्रिया में **क्रिया + क्रिया** (V+V) का संयोग होता हैं।

यौगिक क्रिया

यौगिक क्रिया में **संज्ञा / विशेषण + क्रिया** (N/Adj + V) का संयोग होता हैं। धातुओं के कुछ विशेष कृदंतो के आगे (विशेष अर्थ में) कोई–कोई क्रियाएं जोड़ने से जो क्रियाएं बनती हैं, उन्हें यौगिक क्रियाएँ कहते हैं; जैसे जा सकना, मार देना इत्यादि । इन उदाहरणों में करने, जा और मार कृदंत हैं और इनके आगे लगना, सकना, देना, क्रियाएं जोड़ी गयीं हैं। यौगिक क्रियाओं में मुख्य क्रिया का कोई कृदंत रहता है और सहकारी क्रिया के काल के रूप रहते हैं। (गुरु; 2001)

उदाहरण

Verbs (English)	**यौगिक क्रिया (मानक हिन्दी)**	**यौगिक क्रिया (भोजपुरी)**
Abuse	गाली देना	गरिया–ना / –ईब /–वत
Kick	लात मारना	ललिया–ना / –ईब /–वत
Slap	थप्पड़ मारना	थपड़ीया–ना / –ईब /–वत
Serve food	खाना देना	खिला–ना / –ईब /–वत
To buffet	धक्का मारना	धकीया–ना / –ईब /–वत
Get angry	गुस्सा करना	गुसिया–ना / –ईब /–त

यहाँ हम देख सकते हैं की जो हिन्दी में क्रियाएं कहलाती है वो भोजपुरी में साधारण क्रिया रूप में प्रयुक्त होती हैं। भोजपुरी में ये क्रियाएं –ना / –ईब / –वत या –त प्रत्यय लेती हैं जो की क्रिया के काल के अनुसार होती हैं।

प्रेरणार्थक क्रिया

प्रेरणार्थक क्रियाएं, सकर्मक क्रिया में प्रेरणार्थक प्रत्यय लगाने से बनती है। प्रेरणार्थक क्रियाओं में कार्य स्वयं कर्ता न करके बल्कि किसी दुसरे के द्वारा करवाता है अर्थात ये कार्य करने की प्रेरणा देता हैं। ये सकर्मक क्रियाएं अकर्मक क्रिया से ही उद्धित होती हैं। प्रेरणार्थक क्रिया दो प्रकार की होती हैं।

भोजपुरी में पहली प्रेरणार्थक क्रिया, सकर्मक क्रिया में '–आ+इब' प्रत्यय जोड़ने से बनती है और दूसरी प्रेरणार्थक क्रिया सकर्मक क्रिया में '–वा + इब' प्रत्यय जोड़ने से बनती है।

उदाहरण

लिख, लिखाईब, लिखवाइब

पढ़, पढ़ाइब, पढ़वाईब इत्यादि ।

उपसंहार

प्रस्तुत शोध पत्र भोजपुरी और अवधी के क्रिया रूपों की व्याख्या में एक छोटा किन्तु सफल प्रयास हैं। इा पत्र में भोजपुरी और अवधी के क्रिया रूपों का मानक हिन्दी के साथ तुलना की गयी हैं। जिससे हमें

पता चलता है कि क्रिया के किस काल विशेष में कौन सा प्रत्यय प्रयुक्त होता है। शोध पत्र को अधिक पठनीय बनाने के उद्देश्य से, इसमें प्रयुक्त क्रियाओं का अंग्रेजी रूपांतरण भी प्रस्तुत किया गया है। यह शोध पत्र साधारण क्रियाओं का उसका विभिन्न कालों में प्रयोग, और प्रेरणार्थक क्रियाओं की रचना उदाहरण सहित प्रस्तुत करता हैं। इसमें संयुक्त क्रियाओं और यौगिक क्रियाओं पर भी अपेक्षित प्रकाश डाला गया है। प्रस्तुत पत्र भोजपुरी और अवधी में होने वाले भविष्य के भाषावैज्ञानिक शोधों के लिए मददगार रहेगा ।

संदर्भ ग्रंथ

कौल, ओमकार नाथ, मॉडर्न हिन्दी ग्रामर (2008) डनवुडी प्रेस, स्प्रिंग फील्ड युएसए।

टोरेंट्स, देसी. हिन्दी व्याकरण हार्टथोबगाय द्वारा प्रस्तुत प्रकाशनः गीताप्रेस गोरखपुर ।

वाजपेयी, किशोरी दास (1967) हिन्दी शब्दानुशासन नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ।

खाने की भूख

विकास शुक्ला
कार्यालय र.ले.प्र.नि.उ.क., जम्मू

मारा मारी सी मची है लोगों में खाने की इतनी भूख है कि वे ये भूल जाते हैं कि वो खा क्यारहे हैं उन्हें तो बस खाना है इसलिए खाए जा रहे हैं ।

हमारे यहाँ वैसे भी खान पान पर विशेष ध्यान दिया जाता है। बड़े–बड़े ग्रन्थ इसकी महिमा की गाथाओं से भरे पडे हैं। कुछ लोगों का मानना है कि ये खान पान न हो तो जीवन वैसा ही है जैसे बिन पानी के मछली। यहाँ यह ध्यान देने योग्य बात है कि ये कुछ लोग इस क्षेत्र के महान शोधकर्ताओं में शुमार होते है।

और साहब यह सब खाना पीना इतना कठिन भी तो नहीं है जितना कि प्रतीत होता है। हो सकता है कि कुछ मुंहबोले विचारक मेरी इस बात से सहमत न हों फिर भी मैं तो यहाँ अपनी ही बात कहूँगा बस एक मौके की ही तो बात है कब किसका आ जाए और रातों रात चाँदी हो जाए।

यह वो नहीं देखते हैं जो इन्हें चाहिए ये वो देखते हैं जो इन्हें नहीं देखना चाहिए ये जरुरी को गैर–जरुरी और गैर–जरुरी को जरुरी मानते हैं ये वस्तुओं की व्याख्या अपनी सुविधानुसार करते हैं इन्हें तो येन केन प्रकारण अपना स्वार्थ सिद्ध करना है और खाने के धर्म का भली भॉति पालन करना ये ना किया तो सीधा नरक में ही जाएंगे और अगर कर लिया तो स्वर्ग की प्राप्ति होगी।

ब्रज लोक कला-साँझी

ब्रज अपनी संस्कृति औरु लोक परपरणत कलान की बिसिश्टान के कांजें विस्व में महत्वपूरन स्थानु रक्खे ए। इनकलान में ललित अरू उपयोगी दोनोंईकला होति हैं। जे कलायें ब्रज संस्कृति ते इतनी धुलि–मिलि गई है कै बिनको जा संस्कृति ते चोलीदामन को सो सम्बन्धुबनि गयौ है। ब्रज में ऐसीऊ कला देखिने को मिले। जिनको अस्तित्व समै के संग–संग कालके गाल में समा तो जाइ रह्यौ ए। ऐसी ही बिरन की एक अनूठी कला है सॉझी जिकला ब्रज संस्कृति को चिंकन है, संवाहक है ओरु जाई संस्कृति को एक रूप हैं जो राधा–कृश्ण के अलौकिक प्रेम को प्रतीत है। कृश्ण को प्रतिबिम्ब है। जेईनांय ये तो मन के भाव, श्रद्धा, विस्वास, औरु प्रेम को अभिव्यक्ति का माध्यम है, किरण की धाती है जे पारंपरिक सॉझी की लोक कला चित्र अरुमूति दोनों ईकलान ते सम्बन्ध रक्खे है।

जा सॉझी कला को सम्बन्ध भगवान सिरी किसनते है। लोक मान्यता के अनुसार राधा जी के रूंहने पै बिनकॅू मना दूबै के काजें श्रीकृश्ण ने संध्याबलो में फूलपत्तीन ते सजाइके बिन कौ मनोहारी चित्र बनाइ दियौ अरु राधा जू के रूप कॅू फूलन की सुगंधि में बसाइ दियौ। जाते श्री राधा बहौतु प्रसन्न है गईं। सांझहेबते जे मनोरम दृश्य सॉझी कला के रूप में चलि परयौ जौ के कालान्तर विविध रूपन में विकसित हो गये। कछुन के मतानुसार कला की सुरूआत श्री राधा ने श्रीकृश्ण कॅू रिझाइलै के कांजे की। वो अपनी सहेलीन के संग फूलन ते श्रीकृश्ण कै प्रसन्न करिवै के कानें सॉझाी न कॅू देखि कै खूब आनंदित हौते हते जिद्र कह्यौ जाय के एक सॉझ कॅू सिरी किसन ने श्री राधा जी कौ फूलनते सिंगार कियौ। जा तरियॉ सॉझी प्रभु कॅू रिझाइबे अरु जिनकी उपासना की बिधि रही ए। जाइते ब्रज में सॉझाी मनबांदित फल पाइबे कॅू सच्चो देव मान्यौ गयौ है। जिबात ब्रजमानुलली श्री राधे ते प्रचलित इन पैक्तिन ते प्रगट है जांति ऐ–

मनबांछित फल पाइये, जो कीजै इहिसेब।

सुनौ कुॅबरि ब्रजभानु की, ये सॉझी सांचो देब।।

जा कला कौ उल्लेख बेदन, लोक कथान औरु राधा कृश्ण के साहित्य में मिलै है। मान्यौ जबि कै बैदिक अनुश्ठान के आयोजनन में अगिन कुंड के आसपास के हिस्सन कॅू हल्दी, रोरी व आटे के बने प्रतीकनते सजायौ जातौ। श्री राधा–कृश्ण के द्वारा फूलन की सॉझी बनाइबै की दृश्टि ते जा सॉझी को प्रारंभ द्वापर युग में भयौ। पन्द्रहवीं शदी में जन्में संगीत सिरेमनि स्वामी हरिदास ने सॉझी पै कई पद–भजन लिक्खै हैं। जे जाकौ प्रमानु है कै सॉझीबा कालकी लोक संस्कृति कौ हिस्साहती। रोसेड प्रमान मिलै कै सॉझी उकेरिबै की परंपरा मुगलशासक औरंगजेब के समै बाकी दमनकारी नीतिन के कारन समाप्त है गई हती। फिरि जा कला को पुनरजन्मु उन्नीसवीं सताब्दी में भयौ तथा सदी के अन्त में जे कला मंदिरन में पहुंची हती। सन् 1864 के अंग्रेजी शासक कलेक्टर एफ.एस.ग्राउज ने अपने संस्मरन में मथुरा–वृन्दावन में सॉझी उकेरिबै कौ उल्लेख कियौ ए तथा जन्माष्टमी पै पाँच दिननके सांझी उत्सव मनाइबै कीऊ बात कही है। जामे लोग मंदिर अरू

घरन की दीबारन दै सिरी राधा–कृश्ण औरू गोपी–ग्वालन की आकृतिन कूँ उकेरते हते।

आलुकलऊ ब्रज में खास करिकें वृन्दावन मथुरा, बरसाना, कामा के प्रमुख मंदिरन में चित्राकर्शण्क–नयनादि राम सॉझी बनाइ जामै, जिनमें श्रीकृश्ण ते संबंधित विभिन्न लीलान कौऊ अंकन कियौ जांतु है व बिनकूँ साजायौ जाबै। इन मंदिरन में सैद्धान्तिक लपेट की सॉझी ही बजाई जाती है। मंदिरन के प्रांगन में प्रियाप्रियतम के अश्टकरेनी ज्यामितीय नियमन है। जाकी सबसे बड़ी खासियत है कै जामें गीलेरंगन को प्रयोगु बिल्कुल नायं कियौ जाए, सिर्फ आकृति उकेरी जाबै काली स्याही ते। फिरि बामें सूखेरंगनते बेल–बूदे, फूल–पत्ती, पशुपक्षी, कुंड सरोवर, ताल–तलैया प्रौहरी श्रीकृश्ण ते संबंधित विविध लीलान को चित्रन कियौ जावै। वृन्दावन की ऐसी ई एक मनमोहक व लुभावनी सॉझी की झॉकी की बरनन करत भयै लौककवि बलबीर ने कहयौ हे–

कहूँ राधा बाग रचयौ, गहवर निकुंजबन,
झूम रही लता लौनी, भूमि सरसावनी।
कहुँ चीर घाट नंद घाट, औरु बिहार घाट,
जमुना तरंग लते, हिम हुल सावनी।।
लाल बलबीर रास मंडल, अखंड रूप,
जगमगात कहॅ सारपीय, ससि जामिनी,
कैसी मनभावन रिझावनी, रची हे चारु,
देखो चल सॉझी, वृन्दावन की पावनी।।

ऐसी सॉझी कला बनाइनौ बहौतु कठोर, श्रमसाद्ध है चौके भक्ति भावनान के कारन जमीन पै पैर धरै बिना लकरी को तरवतीन पै वैदिक घंटन झुकै रहि कैं कलाकार लाकूँ बनामैं। जे सॉझी आस्विन (कार) के पितृपक्ष में अंकित की जाऐं। अमावस्या के दिना सॉझी बनाइवै मैं प्रयुक्त सामग्री–रंग, फूल आदिन को बिसर्जन कर दियौ जावै। पितृ पक्ष में ही जाकूँ बनाइबै को कारन जो है कै इन दिनन में फूल सहजता ते मिल जायै, दुसरे इन दिनन में अन्य मांगलिक कार्य न हैवे ते कलाकारऊ फुरसत में हौत हैं।

ब्रज में सॉझी पूजिनै कीऊ परंपरा है। जे मान्यता है कै जाके पूजन ते मनभावन पति रू अचल सुहाग मिलै। जेऊ कहैं कै सॉझी को मत्र आनै पै बाके प्रयोगते सब दुख दूर है जामै। हित वृन्दावन दास ने जा मंत्र की बात जा प्रकार ते कही ए–

सॉझी मंत्र मोहि आवत है, कहै और तो यह दुख पावै।
को है अति उदार मति ऐसौ, वन मनधन याकौ अपनाबै।।
सोलह तिथि भर पूजै याकों अचल सुहाग कंतम न भावै।

वृन्दावन हित रूप सॉबरौ यों कहि के कर जोरि मनाबै।।

ब्रज में प्रचलित जा पंकित 'पुजावत सॉझी कीरत माय, लली को भाग सोहाग मनाऊ' तेऊ सॉझी पूजन की पुश्टि होति है। भक्त कवि घनस्याम की इन पंक्तिन तेऊ सॉझी रचना अरू बाकी पूजन आरती स्पश्ट होति है–

मृगमद चंदन केसर सों स्याम जू लीपी भींत।

कामधेनु के गोबर सों रचि, सॉझी फूलन चीत।।

धूपदीप धरि भोग अमृत रस आप आरती उतारि।

गावत गीत पुनीत किसोरी श्री बृजभानुं कुमारि।।

ब्रज में सॉझी को अपनौ धार्मिक महत्वु तो हैई जाकी काल्पात्मक परंपराइ रही है। जाकौ प्रमान है राधा–कृष्ण कौ साहित्य जामें कबिन ने राधा–कृष्ण के अनुराग कूँ बर्नित करते समै सॉझी कोउ उल्लेख कियौए। सॉझी खेलिबे अरू बाकूँबिदा परिबै की सत्यता भक्त कवि सूरदास की जा पंक्तिते स्पष्ट है जानै–

'सॉझी खेल बिदा कर सबको, दोऊ पोढ़े सेज मंझार।'

काऊ कवि की जे पंक्तियॉऊ फूलन की सॉझी की ओर इंगित करै है कै–

वृन्दावन फूलन सों छायौ, चलो सखि फुलवा बीनन कौ, सॉझी कौ दिन आयौ,

प्रेमभगन है सॉझी चीतौ, पचरंग बनायौ।'

भारतेन्दु हरिश्चन्द्रनेऊ राधा–कृश्ण के गोप–गोपिकन के संग साँझी बनाइबै को बनर्न एक पद में जा तरैह कियौ है–

आज दोऊ खेलत सांझी सांझ, नंदकिशोर राधिका गोरी, जोरी सखियन मांझ।

कुसुम चुनन में रूनझुन बाजत, कर चूरी पडाझांझ,

हरिश्चन्द निधि राख गरूरी, भई रूप लखि बांझ ।

जि सॉझी ब्रज के गामन मेंऊ प्रचलित है। यहां दीवालन पै जाकी रचना गोबर ते की जावै। जाकूँ कन्यायें सौलह दिनन को ब्रत खिकें बनामें। जामें गोबरते लीपिकें सॉझी की प्रतिभा बनामें जाकूँ बीरन देबी कहै जोके ब्रजेस्वरी राधाजी कौ ही दूसरी रूप ए। जाकौ हरके दिन नियमानुसार गोबरते विभिन्न आकृति अरू वस्तु बनइके रोरी, आटे, फूलन की पंखुरिन कोड्रीन आदि ते सजायौ जांतु ऐ। जे सॉझी मन मोहब होति ए। दिन ढरिबे के समै जाकी पूजा अर्चना करिकें आरती की जाबै, भागुलगाइकें बांटो जाय। दुवेराज के रूप में कोट बनामें। जा सांझी के आगे वैठिकें लोक गीतऊ गाये जावें। ऐसेई एक सॉझी गीत की कछु पंक्ति जा प्रकार है –

मेरी सॉझी मैया के औरें–जौरें, फूलि रही फुलबारि।

तू तो ओढ़ले सॉझी मैया, सोलह गज की सारी।।

लेऊ रीलेऊ, सॉझी साजन की अटुरियॉ।

लेऊ दी लेऊ, बिन बोई है कचरियां।

जा सॉझी मैया की आसी टैक क बोल जा प्रकारते हैं–

आरती री आरती, संझा मैया आरती,

आरती के फूल, महेस पै बारती।

सॉझी ब्रतके पूरे हैं जाइबै पै कन्यायें सॉझी के गोबरव अन्य सामग्री के कौऊ जलासय में प्रबाहित करि देति है, जै सौ के ब्रज में प्रचलित इन पंक्तिन ते झलकै है–

सॉझी डलिया में धर लीनी, गाबत चली इसुभाय।

डलिया जमुना जल पधराई, सबै न्हात सुख पाय।।

जा प्रकारते बावन की साँझी कला में कन्यान की सहज कल्पनकूँ मूर्तिरूप दियौ जाबै औरू बिनकी कोमल भावनान की जामें सचित्र अभिव्यक्ति होति है।

ब्रज में जा साँझी के औरूद्ध विविध रूप प्रचलित है। एक रूप है रंगन की सॉझी जायें कागज ते बने विविध सॉचेन को प्रयोग कियौ जावै। जाई साँझी को अन्यरूप है तेल–पानी की सॉझी बनाइदें, फिरि थामें धीरे–धीरे पानी भरि देवै। जाकूँ तेल व जल के अंदर औरु ऊपर हू एक विशेश तरीकातेऊ बनामै किसी सॉझीन को प्रचलन बिट्ठलनाथ गुसाई के द्वारा हेवे ते जि सॉझी ब्रह्यम संप्रदाय के मंदिरन में ठाकुर जी के सम्मुख बनाई जामें। खेती की बुवाई–जुताई है वै के बाद भरपूर खाली समै है वै पै ब्रज में औरतें दीवारन कूँ गोवर–मट्टी ते लिपि कैं बाके ऊपर कोयले के चरन या कारी स्याही ते तिरभुज, चतुर्थुज औरु तिरछी आरी रेखन ते साँझी उकेरति हैं।

जा लोक कला साँझी कौ सरूपहू बदलते समै के साथ–साथ बदल्यौ है। जि कला अवतो कागजन के ऊपर छोटी कैंची की सहायता ते कटिंग करिंकैं सुंदर–सुंदर आकृतिन में उकेरीजांत है। जामें कटिंगते इतनी बारीक आकरती उकेरी जामैं कै देखि कै बारे दंग रहि जांय । जा सैलीमें सारेका सारा कौ सल कागज की कटिंग कौ होंततु है। आजुकल तौ कागज में बजी जा आकरतीन कूँ फ्रेमिग करिकैं लोगबाग ड्राइंगरूपन में सजा मैं हैं। जा कटिंग की सॉझी बना इबे कौ दूसरौ तरीका जे है कै कागज की कटिंग कूँ दूसरे कागज पैरखि कैं कटिंग बारे खाली हिस्से में बुरसन औरु पेंटन ते रंग भरै तथा पूरी आकृति में रंग भरि जाबै पै कागज कूँ ऊपर ते हटा लैल हैं। जा तरियॉ सॉझी की कलाकृति तैयार हैजाबै। जा तरीका कौ जैऊ फायदौ है कै कलाकार एकई जैसी कलाकृतिन कूँ जितनी चाहे उतनी बुनाई सकै। जा स्टेंसिल तकनीकते सॉझी पेंटिंग बनाइबौ बहौतु आसान है जाबै। सॉझी की जि कला अब तो भारत में ई नहीं बल्कि बिदेसन मेंऊ अपनी सादुगीपूरन सैली की बजैह ते लोकप्रिय है रही ऐ।

जा प्रकारते जा सॉझी कला कौ अंकन ब्रज की सांस्कृतिक बिरासत को अटूट अंग रह्यौं है। बास्तव में जि मनोरम कला ब्रज की लोक कलानू प्ररु संस्कृति की थाती रही ए तथा बिनकी संवाहकऊ हे। सचमुचऊ सॉझी न केवल एक कला है बल्कि संस्कृतिऊ है किन्तु वर्तमान में जि कला बिलुप्त है के कगार पै है। जाते जाके मौलिक सरूप कूँ संलोयै रखिनौ, हरेक ब्रजवासी कौ पुनीत कर्त्तव्य है।

डॉ. तारा चन्द्र शर्मा
पूर्व प्राचार्य
मथुरा (उ.प्र.)

विश्व हिंदी सम्मेलन और उनमें पारित प्रस्ताव

विश्व हिन्दी सम्मेलन हिन्दी भाषा का सबसे बड़ा अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन है, जिनमें विश्व भर से हिन्दी विद्वान, साहित्यकार, पत्रकार, भाषा विज्ञानी, विषय विशेषज्ञ तथा हिन्दी प्रेमी जुटते हैं। पिछले कई वर्षों से यह प्रत्येक चौथे वर्ष आयोजित किया जाता है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भारत की राष्ट्रभाषा के प्रति जागरूकता पैदा करने, समय–समय पर हिन्दी की विकास यात्रा का आकलन करने, लेखक व पाठक दोनों के स्तर पर हिन्दी साहित्य के प्रति सरोकारों को और दृढ़ करने, जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में हिन्दी के प्रयोग को प्रोत्साहन देने तथा हिन्दी के प्रति प्रवासी भारतीयों के भावुकतापूर्ण व महत्वपूर्ण रिश्तों को और अधिक गहराई व मान्यता प्रदान करने के उद्देश्य से 1975 में विश्व हिन्दी सम्मेलनों की श्रृंखला शुरू हुई। इस बारे में पूर्व प्रधानमंत्री स्व. श्रीमती इन्दिरा गान्धी ने पहल की थी। पहला विश्व हिन्दी सम्मेलन राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा के सहयोग से नागपुर में सम्पन्न हुआ जिसमें विनोबा जी ने अपना बेबाक सन्देश भेजा।

तब से अब तक आठ विश्व हिन्दी सम्मेलन और हो चुके हैं–मारीशस, नई दिल्ली, पुनः मारीशस, त्रिनिडाड व टोबेगो, लन्दन, सूरीनाम और न्यूयार्क में। नौवॉ विश्व हिन्दी सम्मेलन 22 से 24 सितम्बर, 2012 तक जोहांसबर्ग में हुआ। संयुक्त राष्ट्र संघ में हिन्दी को आधिकारिक भाषा का दर्जा दिलाने के लिए अब समुचित और समयबद्ध कार्रवाई की जाएगी। इतना ही नहीं, अब हर तीन साल पर विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन किया जाएगा और इसका अगला आयोजन नई दिल्ली में होगा ।

तब से अब तक आठ विश्व हिन्दी सम्मेलन और हो चुके हैं–मारीशस, नई दिल्ली, पुनः मारीशस, त्रिनिडाड व टोबेगो, लन्दन, सूरीनाम और न्यूयार्क में। नौवॉ विश्व हिन्दी सम्मेलन 22 से 24 सितम्बर, 2012 तक जोहांसबर्ग में हुआ। संयुक्त राष्ट्र संघ में हिन्दी को आधिकारिक भाषा का दर्जा दिलाने के लिए अब समुचित और समयबद्ध कार्रवाई की जाएगी। इतना ही नहीं, अब हर तीन साल पर विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन किया जाएगा और इसका अगला आयोजन नई दिल्ली में होगा ।

पहला विश्व हिन्दी सम्मेलन 10 जनवरी से 14 जनवरी 1975 तक नागपुर में आयोजित किया गया। सम्मेलन का आयोजन राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा के तत्वावधान में हुआ। सम्मेलन से सम्बन्धित राष्ट्रीय

आयोजन समिति के अध्यक्ष महामहिम उपराष्ट्रपति श्री बी.डी. जत्ती थे। राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा के अध्यक्ष श्री मधुकर राव चौधरी उस समय महाराष्ट्र के वित्त, नियोजन व अल्पबचत मन्त्री थे। पहले विश्व हिन्दी सम्मेलन का बोधवाक्य था। **वसुधैव कुटुम्बकम।** सम्मेलन के मुख्य अतिथि थे मॉरीशस के प्रधानमन्त्री श्री शिवसागर रामगुलाम, जिनकी अध्यक्षता में मॉरीशस से आये एक प्रतिनिधिमण्डल ने भी सम्मेलन में भाग लिया था। इस सम्मेलन में 30 देशों के कुल 122 प्रतिनिधियों ने भाग लिया।[1] सम्मेलन में पारित किये गये मन्तव्य थे–

1. संयुक्त राष्ट्र संघ में हिन्दी को आधिकारिक भाषा के रूप में स्थान दिया जाये।
2. वर्धा में विश्व हिन्दी विद्यापीठ की स्थापना हो।
3. विश्व हिन्दी सम्मेलनों को स्थायित्व प्रदान करने के लिये अत्यन्त विचारपूर्वक एक योजना बनायी जाये।

दूसरे विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन मॉरीशस की धरती पर हुआ। मॉरीशस की राजधानी पोर्ट लुई में 28 अगस्त से 30 अगस्त 1976 तक चले विश्व इस सम्मेलन के आयोजन राष्ट्रीय आयोजन समिति के अध्यक्ष, मॉरीशस के प्रधानमन्त्री डॉ. सर शिवसागर रामगुलाम थे। सम्मेलन में भारत से तत्कालीन केन्द्रीय स्वास्थ्य और परिवार नियोजन मन्त्री डॉ. कर्ण सिंह के नेतृत्व में 23 सदस्यीय प्रतिनिधिमण्डल ने भाग लिया। भारत के अतिरिक्त सम्मेलन में 17 देशों के 181 प्रतिनिधियों ने भी हिस्सा लिया।

तीसरे विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन भारत की राजधानी दिल्ली में 28 अक्टूबर से 30 अक्टूबर 1983 तक किया गया। सम्मेलन के लिये बनी राष्ट्रीय आयोजन समिति के अध्यक्ष तत्कालीन लोकसभा अध्यक्ष डॉ. बलराम जाखड़ थे। इसमें मॉरीशस से आये प्रतिनिधिमण्डल ने भी हिस्सा लिया जिसके नेता थे श्री हरीश बुधू। सम्मेलन के आयोजन में राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा ने प्रमुख भूमिका निभायी। सम्मेलन में कुल 6,566 प्रतिनिधियों ने हिस्सा लिया जिनमें विदेशों से आये 260 प्रतिनिधि भी शामिल थे।[3] हिन्दी की सुप्रसिद्ध कवियत्री सुश्री महादेवी वर्मा समापन समारोह की मुख्य अतिथि थीं। इस अवसर पर उन्होंने दो टूक शब्दों में कहा था– ''भारत के सरकारी कार्यालयों में हिन्दी के कामकाज की स्थिति उस रथ जैसी है जिसमें घोड़े आगे की बजाय पीछे जोत दिये गये हों।''

चौथे विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन 2 दिसम्बर से 4 दिसम्बर 1993 तक मॉरीशस की राजधानी पोर्ट लुई में आयोजित किया गया। 17 साल बाद मॉरीशस में एक फिर विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन किया जा रहा था। इस बार के आयोजन का उत्तरदायित्व मॉरीशस के कला, संस्कृति, अवकाश एवं सुधार संस्थान मन्त्री श्री मुक्तेश्वर चुनी ने सम्हाला था। उन्हें राष्ट्रीय आयोजन समिति का अध्यक्ष नियुक्त किया गया था। इसमें भारत से गये प्रतिनिधिमण्डल के नेता थे श्री मधुकर राव चौधरी। भारत के तत्कालीन गृह राज्यमन्त्री श्री रामलाल राही प्रतिनिधिमण्डल के उपनेता थे। सम्मेलन में मॉरीशस के अतिरिक्त लगभग 200 विदेशी प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

पाँचवें विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन हुआ त्रिनीडाड एवं टोबेगो की राजधानी पोर्ट ऑफ स्पेन में। तिथियाँ थी – 4 अप्रैल से 8 अप्रैल 1996 और आयोजक संस्था थी त्रिनीडाड की हिन्दी निधि। सम्मेलन के प्रमुख संयोजक थे हिन्दी निधि के अध्यक्ष श्री चंका सीताराम। भारत की ओर से इस सम्मेलन में भाग लेने वाले प्रतिनिधिमण्डल के नेता अरुणाचल प्रदेश के राज्यपाल श्री माता प्रसाद थे। सम्मेलन का केन्द्रीय विषय था– प्रवासी भारतीय और हिन्दी । जिन अन्य विषयों पर इसमें ध्यान केन्द्रित किया गया, वे थे – हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास, कैरेबियाई द्वीपों में हिन्दी की स्थिति एवं कंप्यूटर युग में हिन्दी की उपादेयता। सम्मेलन

में भारत से 17 सदस्यीय प्रतिनिधिमण्डल न हिस्सा लिया। अन्य देशों के 257 प्रतिनिधि इसमें शामिल हुए।

छठा विश्व हिन्दी सम्मेलन लन्दन में 14 सितम्बर से 18 सितम्बर 1999 तक आयोजित किया गया। यू. के. हिन्दी समिति, गीतांजलि बहुभाषी समुदाय और बर्मिंघम भारतीय भाषा संगम, यॉर्क ने मिलजुल कर इसके लिये राष्ट्रीय आयोजन समिति का गठन किया गया जिसके अध्यक्ष थे डॉ. कृष्ण कुमार और संयोजक डॉ. पद्मेश गुप्त। सम्मेलन का केंद्रीय विषय था– हिन्दी और भावी पीढ़ी। सम्मेलन मे विदेश राज्यमन्त्री श्रीमती वसुंधरा राजे के नेतृत्व में भारतीय प्रतिनिधिमण्डल ने भाग लिया। प्रतिनिधिमण्डल के उपनेता थे प्रसिद्ध साहित्यकार डॉ. विद्यानिवास मिश्र। इस सम्मेलन का ऐतिहासिक महत्व इसलिए है क्योंकि यह हिन्दी को राजभाषा बनाये जाने के 50वें वर्ष में आयोजित किया गया। यही वर्ष सन्त कबीर की छठी जन्मशती का भी था। सम्मेलन में 21 देशों के 700 प्रतिनिधियों ने हिस्सा लिया। इनमें भारत से 350 और ब्रिटेन से 250 प्रतिनिधि शामिल थे।

सातवें विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन हुआ सुदूर सूरीनाम की राजधानी पारामारिबो में। तिथियॉ थीं– 5 जून से 9 जून 2003। इक्कीसवीं सदी में आयोजित यह पहला विश्व हिन्दी विश्व सम्मेलन था। सम्मेलन के आयोजन थे श्री जानकी प्रसाद सिंह और इसका केन्द्रीय विषय था – विश्व हिन्दी : नई शताब्दी की चुनौतियॉ। सम्मेलन में हिस्सा लेने वाले भारतीय प्रतिनिधिमंडल का नेतृत्व विदेश राज्यमन्त्री श्री दिग्विजय सिंह ने किया। सम्मेलन में भारत से 200 प्रतिनिधियों ने हिस्सा लिया। इसमें 12 से अधिक देशों के हिन्दी विद्वान व अन्य हिन्दी सेवी सम्मिलित हुए। सम्मेलन का उद्घाटन 5 जून को हुआ था। यह भी एक संयोग ही था कि कुछ दशक पहले इसी दिन सूरीनाम नदी के तट पर भारतवंशियों ने पहला कदम रखा था।

आठवॉ विश्व हिन्दी सम्मेलन 13 जुलाई से 15 जुलाई 2007 तक संयुक्त राज्य अमेरिका की राजधानी न्यू यॉर्क में हुआ। इस सम्मेलन का केन्द्रीय विषय था – विश्व मंच पर हिन्दी। इसका आयोजन भारत सरकार के विदेश मन्त्रालय द्वारा किया गया। न्यूयॉर्क में सम्मेलन के आयोजन से सम्बन्धित व्यवस्था अमेरिका की हिन्दी सेवी संस्थाओं के सहयोग से भारतीय विद्या भवन ने की थी। इसके लिए एक विशेष जालस्थल (वेबसाइट) का निर्माण भी किया गया। इसे प्रभासाक्षी.कॉम के समूह सम्पादक बालेन्दु शर्मा दाधीच के नेतृत्व वाले प्रकोष्ठ ने विकसित किया है।

नौवॉ विश्व हिन्दी सम्मेलन इसी वर्ष 22 सितम्बर से 24 सितम्बर 2012 तक, दक्षिण अफ्रीका के शहर जोहांसबर्ग में सोमवार को खत्म हो गया। इस सम्मेलन में 22 देशों के 600 से अधिक प्रतिनिधियों ने हिस्सा लिया। इनमें लगभग 300 भारतीय शामिल हुए। सम्मेलन में तीन दिन चले मंथन के बाद कुल 12 प्रस्ताव पारित किए गए और विरोध के बाद एक संशोधन भी किया गया।

प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन (10–14 जनवरी, 1975 नागपुर, भारत)

संयुक्त राष्ट्र संघ में हिन्दी को अधिकारिक भाषा के रूप में स्थान दिया जाए।

- वर्धा में विश्व हिंदी विद्यापीठ की स्थापना हो।
- विश्व हिंदी सम्मेलनों को स्थायित्व प्रदान करने के लिए ठोस योजना बनाई जाए।

द्वितीय विश्व हिन्दी सम्मेलन (28–30 अगस्त, 1976 मोका, मॉरीशस)

- मॉरीशस में एक विश्व हिंदी केन्द्र की स्थापना की जाए जो सारे विश्व में हिंदी की गतिविधियों का समन्वय कर सके।

- एक अंतराष्ट्रीय हिंदी पत्रिका का प्रकाशन किया जाए जो भाषा के माध्यम से ऐसे समुचित वातावरण का निर्माण कर सके जिसमें मानव विश्व का नागरिक बना रहे और आध्यात्म की महान शक्ति एक नए समन्वित सामंजस्य का रूप धारण कर सके।
- हिंदी को संयुक्त राष्ट्र संघ में एक आधिकारिक भाषा के रूप में स्थान मिले। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए एक समयबद्ध कार्यक्रम बनाया जाए।

तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन (28–30 अक्टूबर, 1983 नई दिल्ली, भारत)

अंतरराष्ट्रीय भाषा के रूप मं हिंदी के प्रचार–प्रसार की संभावनाओं का पता लगा कर इसके लिए गहन प्रयास किए जाएं।

- हिंदी के विश्वव्यापी स्वरूप का विकसित करने के लिए विश्व हिंदी विद्यापीठ स्थापित करने की योजना को मूर्त रूप दिया जाए।
- विगत दो सम्मेलनों में पारित संकल्पों की संपुष्टि करते हुए यह निर्णय लिया गया कि अंतरराष्ट्रीय भाषा के रूप में हिंदी के विकास और उन्नयन के लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर एक स्थायी समिति का गठन किया जाए। इस समिति में देश–विदेश के लगभग 25 व्यक्ति सदस्य हों।

चतुर्थ विश्व हिंदी सम्मेलन (2–4 दिसम्बर, 1993मोका, मॉरीशस)

- विश्व हिंदी सचिवालय मॉरीशस में स्थापित किया जाए।
- भारत में अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय स्थापित किया जाए।
- विभिन्न विश्वविद्यालयों में हिंदी पीठ खोले जाएं।
- भारत सरकार विदेशों से प्रकाशित दैनिक समाचार–पत्र, पत्रिकाएं, पुस्तकें प्रकाशित करने में सक्रिय सहयोग करे।
- हिंदी को विश्व मंच पर उचित स्थान दिलाने में शासन और जन–समुदाय विशेष प्रयत्न करे।
- विश्व के समस्त हिंदी प्रेमी अपने निजी एवं सार्वजनिक कार्यों मे हिंदी का अधिकाधिक प्रयोग करें और संकल्प लें कि वे कम से कम अपने हस्ताक्षरों, निमंत्रण पत्रों, निजी पत्रों और नामपट्टों में हिंदी का प्रयोग करेंगे।
- सम्मेलन के सभी प्रतिनिधि अपने–अपने देशों की सरकारों से संयुक्त राश्ट्र में हिंदी को आधिकारिक भाशा बनाने के लिए समर्थन प्राप्त करने का सार्थक प्रयास करेंगे।

पांचवाँ विश्व हिंदी सम्मेलन (4–8 अप्रैल, 1993पोर्ट ऑफ स्पेन, त्रिनीडाड एंड टोबेगो)

- विश्व व्यापी भारतवंशी समाज हिंदी को अपनी संपर्क भाषा के रूप में स्थापित करेगा।
- मॉरीशस में विश्व हिंदी सचिवालय की स्थापना के लिए भारत में एक अंतर–सरकारी समिति बनाई जाए।
- सभी देशों, विशेशकर जिन देशों में अप्रवासी भारतीय बड़ी संख्या में हैं, उनकी सरकारें अपने–अपने देशों में हिंदी के अध्ययन–अध्यापन की व्यवस्था करें। उन देशों की सरकारों से आग्रह किया जाए कि वे हिंदी को

संयुक्त राष्ट्र की भाषा बनाने के लिए राजनीतिक योगदान और समर्थन दें।

छठा विश्व हिंदी सम्मेलन (14–18 सितम्बर, 1999 लंदन)

- विश्व भर में हिंदी के अध्ययन–अध्यापन, शोध, प्रचार–प्रसार और हिंदी सृजन में समन्वय के लिए महात्मा गाँधी अंतरराष्ट्रीय केन्द्र सक्रिय भूमिका निभाए।
- विदेशों में हिंदी के शिक्षण, पाठ्यक्रमों के निर्धारण, पाठ्य–पुस्तिकों के निर्माण, अध्यापकों के प्रशिक्षण आदि की व्यवस्था भी विश्वविद्यालय करे और सुदूर शिक्षण के लिए आवश्यक कदम उठाएं ।
- मॉरीशस सरकार अन्य हिंदी–प्रेमी सरकारों से परामर्श कर शीघ्र विश्व हिंदी सचिवालय स्थापित करे।
- हिंदी को संयुक्त राष्ट्र में मान्यता दी जाए।
- हिंदी को सूचना तकनीक के विकास, मानकीकरण, विज्ञान एवं तकनीकी लेखन, प्रसारण एवं संचार की अद्यतन तकनीक के विकास के लिए भारत सरकार एक केन्द्रीय एजेंसी स्थापित करे।
- नई पीढ़ी में हिंदी को लोकप्रिय बनाने के लिए आवश्यक पहल की जाए।
- भारत सरकार विदेश स्थित अपने दूतावासों को निर्देश दे कि वे भारतवंशियों की सहायता से विद्यालयों में एक भाषा के रूप में हिंदी शिक्षण की व्यवस्था करवाएँ।

सातवाँ विश्व हिंदी सम्मेलन (5–9 जून, 2003 पारामारिबो, सूरीनाम)

- संयुक्त राष्ट्र में हिंदी को आधिकारिक भाषा बनाया जाए।
- विदेशी विश्वविद्यालयों में हिंदी पीठ की स्थापना हो।
- भारतीय मूल के लोगों के बीच हिंदी के प्रयोग के प्रभावी उपाय किए जाएं।
- हिंदी के प्रचार हेतु बेवसाइट की स्थापना और सूचना प्रौद्योगिकी का प्रयोग हो।
- हिंदी विद्वानों की विश्व–निर्देशिका का प्रकाशन किया जाए।
- विश्व हिंदी दिवस का आयोजन हो।
- कैरेबियन हिंदी परिषद की स्थापना हो।
- दक्षिण भारत के विश्व विद्यालयों में हिंदी विभाग की स्थापना हो।
- हिन्दी पाठ्यक्रम में विदेशी हिंदी लेखकों की रचनाओं को शामिल किया जाए।
- सूरीनाम मं हिंदी शिक्षण की व्यवस्था की जाए।

आठवॉ विश्व हिंदी सम्मेलन (13–15 जुलाई, 2007 न्यूयार्क)

- विदेशों में हिंदी शिक्षण और देवनागरी लिपि को लोकप्रिय बनाने के उद्देश्य से दूसरी भाषा के रूप में हिंदी शिक्षण के लिए एक मानक पाठ्यक्रम बनाया जाए तथा हिंदी के शिक्षकों को मान्यता प्रदान करने की व्यवस्था की जाए।
- विश्व हिंदी सचिवालय के कामकाज को सक्रिय करने एवं उद्देश्य परक बनाने के लिए सचिवालय को भारत तथा मॉरीशस सरकार सभी प्रकार की प्रशासनिक एवं आर्थिक सहायता प्रदान करें और दिल्ली सहित विश्व के चार–पॉच अन्य देशों में इस सचिवालय के क्षेत्रीय कार्यालय खोलने पर विचार किया जाए। सम्मेलन सचिवालय यह आह्वान करता है कि हिंदी भाषा को लोकप्रिय बनाने के लिए विश्व मंच पर हिंदी वेबसाइट बनाई जाए।

• हिंदी में ज्ञान–विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवं तकनीकी विषयों पर सरल एवं उपयोगी हिंदी पुस्तकों के सृजन को प्रोत्साहित किया जाए। हिंदी में सूचना प्रौद्योगिकी को लोकप्रिय बनाने के प्रभावी उपाय किए जाएं। एक सर्वमान्य व सर्वत्र उपलब्ध यूनिकोड को विकसित व सर्वसुलभ बनाया जाए।

• विदेशों में जिन विश्वविद्यालयों तथा स्कूलों में हिंदी का अध्ययन–अध्यापन होता है उनका एक डेटाबेस बनाया जाए और हिंदी अध्यापकों की एक सूची भी तैयार की जाए।

• यह सम्मेलन विश्व के सभी हिंदी प्रेमियों और विशेष रूप से प्रवासी भारतीयों तथा विदेशों में कार्यरत भारतीय राष्ट्रिकों से भी अनुरोध करता है कि वे विदेशों में हिंदी भाषा, साहित्य के प्रचार–प्रसार में योगदान करें।

• वर्धा स्थित महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय में विदेशी हिंदी विद्वानों के अनुसंधन के लिए शोधवृत्ति की व्यवस्था की जाए।

• केंद्रीय हिंदी संस्थान भी विदेशों में हिंदी के प्रचार–प्रसार व पाठ्यक्रमों के निर्माण में अपना सक्रिय सहयोग दे।

• विदेशी विश्वविद्यालयों में हिंदी पीठ की स्थापना पर विचार–विमर्श किया जाए।

• हिंदी को साहित्य के साथ–साथ आधुनिक ज्ञान–विज्ञान और वाणिज्य की भाषा बनाया जाए। ध

• भारत द्वारा राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय स्तरों पर आयोजित की जाने वाली संगोष्ठियों व सम्मेलनों में हिंदी को प्रोत्साहित किया जाए।

9वां विश्व हिंदी सम्मेलन (22–24 सितम्बर, 2012, जोहांसबर्ग)

9वां विश्व हिंदी सम्मेलन दक्षिण अफ्रीका के शहर जोहांसबर्ग में 22–24 सितम्बर 2012 को संपन्न हो गया। तीन दिवसीय इस सम्मेलन में हिन्दी से संबंधित विभिन्न मुद्दों पर विचार–विमर्श किया गया। समापन समारोह में 20 विदेशों विद्वानों का और भारत के 18 हिन्दी लेखकों, पत्रकारों और हिन्दी सेवियों का सम्मान किया गया। यह कार्यक्रम सैंडटन कन्वेंशन सेंटर में आयोजित किया गया। दक्षिण अफ्रीका के साथ महात्मा गांधी के ऐतिहासिक जुड़ाव के चलते मुख्य स्थल का नाम गांधीग्राम रखा गया। भारत की विदेश राज्यमंत्री परणीत कौर ने आयोजन का उद्घाटन किया। सम्मेलन में देश–विदेश के 700 हिंदी विद्वानों ने भाग लिया। सम्मेलन के सुचारू संचालन के लिए दक्षिण अफ्रीका की सरकार के प्रति आभार व्यक्त किया। इस सम्मेलन की विषयवस्तु (Theme) :

5 भाषा की अस्मिता और हिंदी का वैश्विक संदर्भ रखी गई थी

इस सम्मेलन में निम्नलिखित प्रमुख प्रस्ताव पारित किए गए:–

• 10वां विश्व हिन्दी सम्मेलन तीन वर्ष के अंदर भारत में आयोजित करने का निर्णय।

• संयुक्त राष्ट्र की छह आधिकारिक भाषाओं के अलावा हिंदी को भी सातवीं भाषा के रूप में शामिल करने का प्रस्ताव पारित किया गया। हिंदी के विद्वानों ने सरकार से यह काम तयशुदा समयसीमा के भीतर अंजाम देने की मांग की।

• तकनीकी तथा वैज्ञानिक संस्थानों मे हिंदी को बढ़ावा दिए जाने का आह्वान किया गया।

डॉ. राकेश भार्मा
हिन्दी अधिकारी, सी.एस.आई.आर.–राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान, गोवा

ब्रज लोक जीवन और साहित्य विषय पर संगोष्ठी व सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन

उत्तरी प्रदेश हिन्दी संस्थान लखनऊ एवं बी.डी.एम.यू.कन्या महाविद्यालय के संयुक्त तत्वावधान में ब्रज लोक जीवन और साहित्य विषय पर दो दिवसीय भव्य गरिमापूर्ण सांस्कृतिक कार्यक्रम ब्रज लोक कहानियां, लोक नाट्य, लोक संगीत, ब्रज लोक गायन का आयोजन दिनांक 18–19 सितम्बर, 2014 को किया गया। प्रथम दिन उद्घाटन सत्र का शुभारम्भ मुख्य अतिथि पूर्व सांसद एवं उ.प्र. हिन्दी संस्थान के कार्यकारी अध्यक्ष श्री उदय प्रताप सिंह ने दीप प्रज्ज्वलन से किया। विशिष्ठ अतिथि संस्थान के निदेशक डॉ. सुधाकर अदीब तथा मुख्य वक्ता के रूप में वरिष्ठ हिन्दी अधिकारी एवं सदस्य–सचिव, नराकास, सी.एस.आई.आर. –भारतीय समवेत औशध संस्थान, जम्मू डॉ. अमर सिंह थे। कार्यक्रम की अध्यक्षता पालिकाध्यक्ष रामप्रकाश यादव ने की। कार्यक्रम का प्रारम्भ छात्रा शारदा द्विवेदी, निवेंदिता द्वारा सरस्वती वंदना से हुआ। बी.डी.एम.कन्या महाविद्यालय की प्राचार्या डॉ. कान्ता श्रीवास्तव ने अध्यक्ष महोदय एवं उपस्थित अतिथियों का हरीत कलस एवं कलाकृति भेंट कर स्वागत किया। अपने स्वागत संबोधन में प्राचार्या डॉ. श्रीवास्तव ने कहा कि ब्रज संस्कृति मुलतः कृष्ण की संस्कृति है और यह ब्रज क्षेत्र में अपनी विविध शैली के रूप में विश्व विख्यात है। कला और संस्कृति में ब्रज का अपना विशिष्ट महत्व है।

मुख्य वक्ता के रूप में डॉ. अमर सिंह ने कहा कि ब्रज की लोक संस्कृति देश के प्रत्येक क्षेत्र में व्याप्त है और इस ब्रज की नाट्य एवं कला अपनी अलौकिक शैली में व्यक्त की जाती है। हिन्दी भाषा का मानक यहीं से शुरू होता है।

मुख्य अतिथि श्री उदय प्रताप सिंह ने कहा, ''कि ब्रज की लोक संस्कृति को जानना अति आवश्यक है। हमारा राष्ट्रीय एवं नैतिक दायित्व कि हमें हिन्दी को प्रोत्साहन देना चाहिए। ये सभी की भाषा है। इस अवसर पर हिन्दी संस्थान के प्रधान संपादक अनिल कुमार मिश्र प्राचार्य डॉ. आर.के.सिंह, उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग के पूर्व अध्यक्ष डॉ. श्रीराम आर्या पूर्व प्रो. चन्द्रवीर जैन, डॉ. वी.के.सक्सेना, डॉ. अनीता सक्सेना, श्री ओमप्रकाश बेवरिकया, उमेश चन्द्र शर्मा, डॉ. ताराचन्द शर्मा, मंजर–उल–वासै, डॉ. अजय कुमार, डॉ. आहुजा, डॉ. विनीता सक्सेना एवं सभी महाविद्यालयों के प्राचार्य एवं प्राध्यापक तथा अन्य गणमान्य व्यक्ति उपस्थित थे। कार्यक्रम का संचालन कन्या महाविद्यालय की प्राध्यापक डॉ. रूची पाण्डे ने की।

कार्यक्रम के समापन के अवसर पर उपस्थित गणमान्य व्यक्तियों एवं प्रतियोगियों का आभार सहित धन्यवाद कालेज की प्राचार्या डॉ. कान्ता सक्सेना ने किया।

नराकास, जम्मू की राजभाषा पत्रिका 'ज्ञानवार्ता' में प्रकाशित लेख को राष्ट्रपति पुरस्कार

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जम्मू की गृह पत्रिका 'ज्ञानवार्ता' अंक 4 में प्रकाशित लेख **'गेहूं का ज्वारा : प्रकृति का वरदान'** को राजभाषा विभाग द्वारा संचालित लेख पुरस्कार योजना के तहत वर्ष 14 सितम्बर, 2014 के अवसर पर महामहिम राष्ट्रपति श्री प्रणव मुखर्जी द्वारा 2013–14 का प्रथम पुरस्कार महामहिम राष्ट्रपति महोदय से सी.एस.आई.आर.–राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान, गोवा के हिन्दी अधिकारी, डॉ. राकेश शर्मा ने प्राप्त किया।

महामहिम राष्ट्रपति महोदय से पुरस्कार ग्रहण करते हुए डॉ. राकेश शर्मा, हिन्दी अधिकारी, भारत के गृहमंत्री श्री राजनाथ सिंह व सुश्री नीता चौधरी, सचिव, राजभाषा

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, भारतीय समवेत औषध संस्थान, जम्मू क्षेत्र–1 को वर्ष 2012–2013 के दौरान राजभाषा नीति के श्रेष्ठ निष्पादन के लिए 'प्रथम' राजभाषा पुरस्कार ।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, भारतीय समवेत औषध संस्थान, जम्मू को राजभाषा हिन्दी के प्रगामी प्रयोग को बढ़ाने की दिशा में व राजभाषा नीति के श्रेष्ठ निष्पादन के लिए केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों/उपक्रमों/बैंकों में राजभाषा के प्रचार–प्रसार हेतु भारत सरकार, गृह मंत्रालय द्वारा राजभाषा नीति के अनुरूप प्रतिवर्ष राजभाषा पुरस्कार प्रदान किये जाते हैं। इसी परिप्रेक्ष्य में वर्श 2012–2013 के लिए **अध्यक्ष,**

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जम्मू कार्यालय को 'प्रथम' राजभाषा पुरस्कार प्रदान किया गया है।

नराकास जम्मू को प्रथम राजभाषा पुरस्कार प्रदान करते हुए माननीय राज्यपाल (पंजाब) श्री शिवराज पाटिल एवं सचिव राजभाषा सुश्री नीता चौधरी।

यह पुरस्कार भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग द्वारा उत्तर क्षेत्र–1 जिसमें उत्तर क्षेत्र के 8 राज्यों का यह पुरस्कार वितरण समारोह/सम्मेलन दिनांक 05 जून, 2014 को स्नातकोत्तर चिकित्सा शिक्षा एवं अनुसंधान संस्थान, (पीजीआई), चण्डीगढ़ के भार्गव ऑडिटोरियम में माननीय राज्यपाल, पंजाब एवं प्रशासक चण्डीगढ़ श्री शिवराज पाटिल जी एवं सचिव, राजभाषा सुश्री नीता चौधरी के कर कमलो द्वारा नगर राजभाशा कार्यान्वयन समिति, जम्मू के अध्यक्ष डॉ. राम विश्वकर्मा एवं निदेशक, भारतीय समवेत औशध संस्थान, की ओर से समिति के सदस्य–सचिव, नराकास, जम्मू डॉ. अमर सिंह, ने शील्ड एवं प्रमाण–पत्र प्राप्त किए ।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, भारतीय समवेत औषध संस्थान, जम्मू को वर्ष 2013–2014 के दौरान राजभाषा नीति के श्रेष्ठ निष्पादन के लिए 'प्रथम' राजभाषा पुरस्कार ।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, भारतीय समवेत औषध संस्थान, जम्मू को राजभाषा हिन्दी के प्रगामी प्रयोग को बढ़ाने की दिशा में एवं राजभाषा नीति के श्रेष्ठ निष्पादन के लिए केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों/उपक्रमों/बैंकों एवं नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों को भारत सरकार के राजभाषा नीति के अनुरूप प्रतिवर्ष राजभाषा पुरस्कार प्रदान किये जाते हैं। इसी परिप्रेक्ष्य में वर्ष 2013–2014 के लिए **अध्यक्ष, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जम्मू कार्यालय को 'प्रथम' राजभाषा पुरस्कार** प्रदान किया गया है।

नराकास जम्मू को प्रथम राजभाषा पुरस्कार प्रदान करते हुए माननीय राज्यपाल (उ.प्र.) श्री राम नायक एवं सचिव राजभाषा सुश्री नीता चौधरी।

यह पुरस्कार भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग द्वारा उत्तर क्षेत्र–1 जिसमें उत्तर क्षेत्र के 8 राज्यों का यह पुरस्कार वितरण समारोह/सम्मेलन दिनांक 19 नवम्बर, 2014 को वी.के.एस.वरदन ऑडिटोरियम, भारतीय भू–वैज्ञानिक सर्वेक्षण, आयोजन लखनऊ में माननीय राज्यपाल, उत्तर प्रदेश श्री राम नाइक जी एवं सचिव, राजभाषा सुश्री नीता चौधरी के कर कमलो द्वारा नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जम्मू के अध्यक्ष डॉ. राम विश्वकर्मा एवं निदेशक, भारतीय समवेत औषध संस्थान, की ओर से समिति के सदस्य–सचिव, नराकास, जम्मू डॉ. अमर सिंह, ने शील्ड एवं प्रमाण–पत्र प्राप्त किए।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति 28 नवम्बर, 2013 की गतिविधियाँ

ISSN 2320 - 2998

सीएसआईआर- भारतीय समेकित जैव संसाधन संस्थान, जम्मू

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जम्मू

Design & Printed By :
Jandiyal Printing Press
Ph. : 0191-2553140